Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL PATRIKA

1984 G.K.U.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

150843

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल पत्रिका

माघ - फाल्गुण, २०४० | अंक : १-२
जनवरी-फरवरी, : १९८४ | वर्ष : ३६ | पूर्णांक : ३५२-५३

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयस्य मासिक-पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक-मण्डल

प्रधान सम्पादक ... ... प्रो० रामप्रसाद वेदालङ्कार
आचार्य एवं उपकुलपति

सम्पादक ... ... डॉ० विनोद चन्द सिन्हा
अध्यक्ष, इतिहास विभाग

सह सम्पादक ... ... डॉ० रामेश्वर दयाल गुप्त
एम० ए० (द्वितीय वर्ष)

प्रबन्ध सम्पादक ... ... प्रो० मनुदेव 'बन्धु'
वेद विभाग

डॉ० राकेश शास्त्री
संस्कृत विभाग

गुरुकुल सम्वाददाता ... ... डॉ० रामप्रकाश शर्मा
संस्कृत विभाग

प्रो० प्रमथेश भट्टाचार्य
अंग्रेजी विभाग

विषय-सूची

विषय	लेखक	पृष्ठ-संख्या
१—श्रुति सुधा	—प्रो० रामप्रसाद वेदालंकार	१
२—महापुरुषों के वचन		२
३—महापुरुष चरितम्		३
४—वेद एवं भाष्यकार:	—डॉ० निगम शर्मा	४
५—विदेशेषु संस्कृतम्	—डा० भारत भूषण विद्यालङ्कार	१०
६—विक्रम विश्वविद्यालये प्रथमपुरस्कृतं भाषणम्	—श्री दूधपुरी गोस्वामी	१४
७—विक्रम विश्वविद्यालये तृतीय पुरस्कृतं भाषणम्	—ब्र० सत्यदेव	१६
८—नारी का यज्ञाधिकार	—डॉ० सत्यव्रत राजेश	१८
९—प्राचीन भारत में वर्ण व्यवस्था	—श्री भारतभूषण शर्मा	२२
१०—निपात	—डॉ० राकेश शास्त्री	२६
११—उपनिधि	—प्रो० वेदप्रकाश शास्त्री	३२
१२—आर्य समाज का भावी कार्यक्रम	—श्री बलभद्र कुमार हूजा	३६
१३—घर को आग लग रही घर......	—डॉ० त्रिलोक चन्द	३९
१४—पुस्तक समीक्षा	—डा० विजयपाल शास्त्री	४१
१५—ईश्वरीय ज्ञान वेद-प्रकाश किन पर...	—डॉ० रामेश्वर दयाल गुप्त	४२
१६—सम्मति	—प्रो० रामप्रसाद वेदालंकार	४४
१७—पुस्तक समीक्षा	—डॉ० राकेश शास्त्री	४५
१८—गुरुकुल के छात्रों के नाम संदेश	—डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार	४७
१९—स्वामी श्रद्धानन्द की लेखनी से	—श्री जगदीश प्रसाद विद्यालंकार	४८
२०—गुरुकुल समाचार		५०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

गुरुकुल पत्रिका

(गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयस्य, मासिक पत्रिका)

माघ ; फाल्गुन २०४०
जनवरी, फरवरी : १९८४ | वर्ष : ३६ | अंक : १
पूर्णांक : ३५२-५३

श्रुति-सुधा

त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः ।
त्वमा तनोरुर्वा३न्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ।। साम० ६०४ ।।

अन्वय :——सोम ! त्वम् इमाः विश्वाः ओषधीः अजनयः, त्वम् अपः [अजनयः] त्वं गाः [अजनय] । त्वम् उरु अन्तरिक्षम् आतनोः, त्वं ज्योतिषा तमः विववर्थ ।

सं० अन्वयार्थ :—हे जगदुत्पादक प्रभो ! तूने इन सब औषधियों को पैदा किया, तूने जलों को पैदा किया, तूने गौओं को पैदा किया । तूने विस्तृत अन्तरिक्ष को फैलाया है, तूने ही ज्योति से अन्धकार को हटाया है ।

अन्वय :—(सोम !) हे जगज्जनक जगदीश्वर ! (त्वम् इमाः ओषधीः अजनयः) तू [रोगों को भस्म करने वाली] इन समस्त औषधियों को उत्पन्न करता है, (त्वम् अपः) तू ही शान्तिप्रद जलों को उत्पन्न करता है, (त्वं गाः) तू ही इन दुग्धामृत प्रदान करने वाली गौओं को उत्पन्न करता है । (त्वम् उरु अन्तरिक्षम् आतनोः) तू विस्तृत अन्तरिक्ष को फैलाता है,(त्वं ज्योतिषा तमः विववर्थ) तू ही ज्योति से अन्धकार को हटाता है ।

इस संसार में रोगों को नष्ट करने वाली जितनी भी औषधियां हैं, जल हैं, गौवें हैं वा रश्मियां हैं वा इन सब के अतिरिक्त भी जो कुछ है उस सब को उत्पन्न करने वाला वह एक ही परमेश्वर है। वही इस महान् अन्तरिक्ष को फैलाकर उस में सब प्रकार के पदार्थों और प्राणियों को उत्पन्न करता है । सभी प्राणियों को वह अपने-अपने कर्मों के अनुसार नानाविध भोज्य पदार्थ प्रदान करता है । वह महान् प्रभु अपने सूर्य चन्द्र एवं अग्नि आदि तत्त्वों के द्वारा इस में विद्यमान रहने वाले अन्धकार को हटाता है, वही वेद ज्योति के द्वारा सब मानवों के अविद्यान्धकार को हरता है, वही अपनी अध्यात्म ज्योति के द्वारा उपासकों के हृदय के उस मल विक्षेप और आवरण का हरण करता है जिस के कारण कि वह अपने ही अत्यन्त समीप विद्यमान रहने वाले अपने प्राणप्रिय सखा का साक्षात्कार नहीं कर पाते और उस के परम आनन्द से अपने आप को आप्लावित नहीं करते……।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापुरुषों के वचन

इस परमेश्वर का स्वरूप मन और वाणी से परे है। इसके सम्बन्ध में हम इतना ही कह सकते हैं कि यह परमेश्वर अनन्त, अनादि, सदा एक रूप रहने वाला, विश्व का आत्मा रूप अथवा आधार रूप और विश्व का कारण है। वह चैतन्य अथवा ज्ञान स्वरूप है। इसी का एक सनातन अस्तीत्व है। शेष सब नाशवान् है। अतः उसे एक छोटे से शब्द से समझने के लिये हम इसे 'सत्य' कह सकते हैं।

—महात्मा गांधी

तदेतत्सत्यं यथा सुदीप्तात्पावकाद्विस्फुलिङ्गाः सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः।
तथाक्षराद्विविधाः सोम्यभावाः प्रजायन्ते तत्र चैवापि यन्ति ॥ मुण्डकोपनिषद् २.१.१ ॥

वह यह (अक्षर ब्रह्म) सत्य है। जिस प्रकार अत्यन्त प्रदीप्त अग्नि से उसी के समान रूप वाले वाले हजारों स्फुलिंग निकलते हैं। हे सोम्य ! उसी प्रकार उस अक्षर से अनेकों भाव प्रकट होते हैं और उसी में लीन हो जाते हैं।

जो सत्य है वही दूरदर्शी दृष्टि से हितकर अथवा श्रेष्ठ है इसलिए सत्य अथवा सत् का अर्थ श्रेष्ठ भी होता है और सत्यआग्रह, सत्यविचार, सत्य-वाणी और सत्यकर्म जो वस्तु है वही सदाग्रह, सद्विचार, सद्वाणी और सत्कर्म है। —महात्मा गांधी

जो तुम्हें भगवान् की ओर ले जाय उसे अच्छा मानना चाहिये और वह सब तुम्हारे लिए बुरा है जो तुम्हें भगवान् से दूर ले जाये। —श्री अरविन्द

जो जीवन लक्ष्यहीन होता है, वह सुखहीन भी होता है। तुम्हारा लक्ष्य होना चाहिये उच्च और विशाल, उदार और उन्मुक्त और फिर तुम्हारा जीवन तुम्हारे लिये और दूसरों के लिये भी बहुमूल्य हो जायेगा। —श्री मां

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥ गीता ३.७० ॥

जैसे नाना नदियों के जल सब ओर से परिपूर्ण अचल प्रतिष्ठा वाले समुद्र में उसको विचलित न करते हुए ही समा जाते हैं वैसे ही सब भोग जिस स्थितप्रज्ञ पुरुष में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न किये बिना ही समा जाते हैं, वही पुरुष परम शान्ति को प्राप्त होता है, भोगों को चाहने वाला नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापुरुष चरितम्

स्वामी दयानन्द—

सम्भवतः यह बात बहुत से लोगों को ज्ञात नहीं होगी कि स्वामी दयानन्द से बहुत से स्थानों पर और बहुत बार मूर्ति–पूजा का खण्डन छोडने के लिये अनुरोध किया गया और उन्हें प्रलोभन दिये गये। किन्तु निर्भीक महर्षि ने इन सब प्रलोभनों को ठुकरा दिया।

(i) सन् १८६९ ई० में जब कि काशी में महाशास्त्रार्थ के कारण चारों ओर महान् आन्दोलन हो रहा था, काशी का एक प्रसिद्ध पण्डित एक दिन रात्रि के समय दयानन्द के पास अया और प्रार्थना करने लगा—

"आप अन्य सब बातों का खण्डन करें, परन्तु मूर्ति–पूजा का खण्डन न करें, तो काशी की समग्र पण्डित मण्डली एकत्र होकर आपके गले में जयमाला पहनायेगी और आप को हाथी पर सवार कराकर आपकी सवारी सारे नगर में निकालेगी और आप को हिन्दुओं का अन्यतम अवतार मान लेगी।"

उत्तर में महर्षि दयानन्द बोले—

"मैं कुछ नहीं चाहता, मैं तो वेद प्रतिपादित सत्य के प्रचार के लिये आया हूँ।"

पण्डित जी चुप हो गये और उठकर चले गये।

(ii) सन् १८७७ ई० में जब स्वामी दयानन्द लाहौर में टहरे हुए थे और उन्होंने पञ्जाब में प्रबल आन्दोलन उपस्थित कर रखा था, तब काश्मीरपति महाराजा रणवीरसिंह ने पं० मनफूल द्वारा स्वामी जी से अनुरोध किया था कि आप जो कुछ अन्य कार्य कर रहे हैं, करें परन्तु मूर्ति-पूजा के विरोध में कुछ न कहें। यदि आप ऐसा करें तो मैं अपना धनागार आपके समर्पण कर दूंगा। परन्तु दयानन्द ने इसका उत्तर दिया—

"मैं वेद प्रतिपादित ब्रह्म को सन्तुष्ट करूँगा न कि काश्मीरपति को। आप ऐसी बात फिर मेरे सामने न कहें।"

(iii) दिल्ली के निकटवर्ती किसी स्थान का एक सेठ छकड़े में एक लाख रुपया भरकर स्वामी जी के पास लाया और उनसे विनयपूर्वक बोला—"महाराज ! मैं यह एक लाख रुपया आप की भेंट करता हूं, आप मूर्ति–पूजा का खण्डन नहीं कीजिए। इसके अलावा कुछ आप कहना चाहें कहते रहिये"।

उस सेठ के इस अनुरोध को देखकर स्वामी जी हंसने लगे और उस सेठ से मात्र इतना बोले "सेठ जी आप यहां से चले जाइये।"

(महर्षि दयानन्द जी का जीवन चरित–देवेन्द्रनाथमुखोपाध्याय—भूमिका)

स्वामी श्रद्धानन्द—

स्वामी श्रद्धानन्द एक महान् व्यक्ति थे। जिन्होंने अपने मोक्ष को मन से निकाल कर दुःखी और पीड़ित जनता को कष्ट से मुक्ति दिलाना चाहा था।

—ओमप्रकाश 'पुरुषार्थी' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्जाबविश्वविद्यालये विद्वत्परिषदि समादृतोऽयं निबन्ध :—

वेद एव भाष्यकारः

—डा० निगम शर्मा
रीडर-अध्यक्ष संस्कृत विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयः ।

विदितवेदितव्या अधिगतवेदहृदयाः सदया महर्षयो विमर्शयामासुः यद् वेदः खलु स्वभेदं स्वत एव जनयति सूर्यवत् । यथा सूर्यस्य दर्शने नास्ति प्रकाशान्तरस्य आवश्यकता स्वतः प्रकाशपुञ्जत्वात् स्वयमेव अन्यान् प्रकाशयन् आत्मानमपि प्रकाशयति तथैव वेदः खल्वपि स्वयमेव अन्यान् विज्ञापयन् आत्मानपि स्वत एव विज्ञापयति सर्वज्ञस्यात्मनो लिंगत्वात् ।

सर्वासां सत्यविद्यानां हृदयस्थानीयो हि वेदः यो यः सहृदयः शक्त्या यथा यथा वेदस्य वैदुष्यमधिगच्छति तथा तथा विदुष्मती वागस्य मनीषामुद्भावयति । स शोकं तरति, मोहं जहाति, हृदय-ग्रन्थिं श्लथयति, संशयान् कामानुवर्तिनो मनोरथांश्च विरथीकरोति । किं बहुना आत्मविद् आत्मैव भवति नास्य अब्रह्मवित् कुले जायते । वीतदुःखसन्दोहः कोऽहमिति जानाति । अन्यानपि वशे स्थापयति आत्मरथी सुरथः श्रुतिकथा प्रगल्भ आनन्दैकरसः सदस्येषु रहस्यवाक् समस्यासु विकसन्मुखः सामान्येषु प्रमुखः कुशलो विनेता नेतृपूजितश्च प्रकटयति सुखम्, ज्ञापयति युगधर्मम्, वेदयति च वेदम् ।

तस्यैतस्य वेदस्य वेदार्थता प्रकाशनेऽनुशासनदक्षा अपि कृतपरिष्कृत पक्षा अपि शुभलक्षणाः पीनवक्षसो विलसद्गवाक्षा अन्तश्चक्षुषो विचक्षणाः आ आविर्भावकालाद् लग्नाः मग्नाश्च दरीदृश्यन्ते । उव्वट–महीधर–सायण–दयानन्दप्रमुखा एतद्देशे विदेशे चापि बहवस्तर्करसिका विज्ञानलोचनाः पण्डिताः सन्त्येव भाष्यार्थचतुराः प्रचुरा महाभागाः कल्लोलयन्तो हृदयसागरं जनमानसं च मानयन्तो युगं प्रमाणयन्ति स्वकीयानि स्वकीयानि प्रतिमाप्रभाजूंषि भाष्याणि । अस्ति चैतेषु द्युमती वागुल्लसन्ती । एभिस्तर्कशिरोमणिभिर्गण्यमानैर्मनीषिभिरियं भगवती वसुमती सत्यमेव वसुधानी प्रतिष्ठा रत्नगर्भा च । एतान् प्रणमन् भगवतीं भावयन् युष्मांश्च श्रद्धया विलोकयन् वेद एव वेदताविषये जातवेदतां प्रकटयति, इति मानयामि ।

तत्र विचारवीथ्यां पश्यामस्तावद् बहुषु मन्त्रेषु शब्दान्तरैः शब्दव्याख्या-तद्यथागायन्ति त्वा गायत्रिणो ऽर्चन्त्यर्कमर्किणः (ऋ-१-१०-१) इति मन्त्रे त्वां गायत्रिणो गायन्ति, अर्किणस्त्वाम् अर्चन्ति । स्पष्टमेवात्र वेदयति वेदः, "गायत्रिणः" इति शब्दस्य गानकुशलाः, अर्किणः इत्यस्य चार्चन–स्वभावाः एवार्थः । क्वचित् पूर्णस्यैव मन्त्रस्य मन्त्रान्तरेणसुमती व्याख्या :— यथा गायत्री मन्त्रस्य व्याख्या प्रसंगे (यजुर्वेद-२२-९,१०,११,१२,१३,१४ मन्त्रेषु ऋषे वेंदस्यानन्दप्रदा मनीषा समुल्लासं तनुते । स देवः सविता प्रचोदयात्, स चेतयतु, धीमहि-हवामहे, मनामहे, ईमहे, उपह्वये, धियः इत्यर्थे सुमतिम्, सुमतीवृधः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मतीविदे, सवितारम्, सत्पतिम् प्रभृतयः शब्दा मानवे प्रतिभामाधातुं भावसम्पदां च विकासयितुं शब्ददारिद्र्यं च दूरीकर्तुमूरीकर्तुं च हिरण्यवर्णां सत्यराधसं वाचं कियान् मनोहरोऽयं प्रयासः।

क्वचिद्वेदस्य उपदेशदृष्टिरादरणीया भवति-यथा अथर्ववेदे-२-१५ द्यौश्च पृथिवी च, सूर्यश्च चन्द्रश्च यथा न भयं कुर्वाते नैव च क्रोधम्, स्वकीयं स्वकीयं नियमबन्धनमासाद्य सर्वे देवा मनीषिणश्च स्वकार्यं प्रपूरयन्ति। एवमेव धर्मं निष्कारणं सेवमानः पुरुषः ख्यातिं समृद्धिं चाधिगच्छति। कियान् मनोहरः प्रोत्साहनदक्षश्चायं मन्त्रः—यथा सूर्यश्च चन्द्रश्च न बिभीतो न रिष्यतः। एवा मे प्राण मा विभेः। सूर्यश्चन्द्रो वा न कमपि प्रति कोपं तनोति नैव वा सक्रोधस्य भृकुटिभंगमासाद्य भयविकलो भवति, स तु स्व स्वीकृतं व्रतमेव नियमतः पालयति, एवमेव सुमनोवता पुरूषेण नैव भयं नैव वा क्रोधः प्रकटनीयः, स्वत एव तत्त्वतः स्वीकृतं व्रतं प्रपूरणीयम्।

क्वचिद् गुणश्लाघया वस्तुसम्पदुद्घाट्यते-यथा-अथर्ववेदे पृथिवीसूक्ते-द्वादश काण्डे दीक्षा, तपो, ब्रह्म, सत्यम्, ऋतम् एते धर्माः सम्यक् परिपालिता मातरं पृथिवीं रक्षन्ति, रक्षिता च पृथ्वी मानवेभ्यः सुखसामनानि सूते। इयं कल्याणरमणीया पृथिवी विश्वंभरा, वसुधानी, प्रतिष्ठा, हिरण्य-वक्षा, जगतः निवेशनी, कियन्निष्ठादायकं प्रतिष्ठाप्रभावं च वचनम्? अनेनैव प्रकारेण ब्रह्मचर्य - सूक्ते (११-५) प्राणसूक्ते (११-४) अन्यत्र वा बहुत्र देवानुद्दिश्य तेषां भूतगुणधर्माः खल्वपि ख्यापिता भवन्ति। ब्राह्मणो हि अग्निवत् विषय-प्रकाशकः, दोष-दाहकः सम्पत्सु प्रसन्नमना विपत्सु सदैवाग्रेसरः सत्संगेषु दिव्यो मन्त्रणासु भव्यः प्रकृष्टो नेता विनीतो हिंसारहितः शुचिव्रतः क्रान्तदर्शी भवेत्। क्षत्रिय-श्च इन्द्र इव सारवान् वज्रदेहः सततशुद्धायुधश्चक्रवर्ती विजीगिषुर्गीयमानकीर्तिः सहिष्णुः प्रभविष्णु-श्च स्यात्। एवमन्येऽपि मनुजन्मानो महात्मानो जायेरन्।

देवानामेवाख्यानपराणि पुराणानि ब्राह्मणानि वा उल्लसन्ति, तत्सर्वं सारवता वेदेन सरहस्यं सरलेन यथा विहितं पिहितं च।

संस्कारवान् पुरुषो जानाति-सोमपानं हीन्द्रस्य प्रसिद्धम्-अतो "वायवाहि० ऋ०१-२-१" इति मन्त्रे "इमे सोमा अरंकृता" इति कथनेन संकेतेन इन्द्र एवं आहूयते। यद्यपि सम्बोधने वायुराहूयते-अतः व्याक-रणवता प्राज्ञेन वायुः इति शब्देन इन्द्र एव ग्राह्यः। अर्थश्चास्य हे वायुवद् दीर्घायो, इन्द्र, यद्वा वायुवत् सर्वत्र गमनशील इन्द्र इति योजनीयः यास्कः परामर्शं ददाति-एवम् अन्यमन्त्रे नियतति स निपातदेवो भवति।

विष्णोस्त्रेधा पदनिदधानमपि चेतनावता विभावनीयं भवति। पुरुषः खलु संसार एव दत्तरुचि-निरन्तरं रुचिरां प्रचुरां च मायामाहरति परं कस्य कृते? कथम्? सर्वं विचार्य परीक्ष्य लीलालोलं कपोलमार्द्रं करोति, संसारागारे पचन्तमात्मानं न शक्नोति वीक्षितुम्, अतः योग-प्रदीपं दीपयति, अयमेव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीतशोकसन्दोहस्य निर्मोहस्य विष्णोः प्रथमः खलु चरणपातः। अद्यापि आस्वादितरसा तृष्णाश्च तं मोहयन्ति, कामना-वात्या तं ज्वलन्तं योगप्रदीपं निर्वापयितुं यतते। अत्र चास्य भवति पुनर्जागरणम्, कर्णसुखा वेदवाचस्तमुल्लासयन्ति। एहि-एहीति तं सुवर्चसो गायत्री वचना मेधाविनो ज्योतिषि तन्वन्ति, अत एवास्य परिद्रष्टुरयं विष्णोर्द्वितीयश्चरणपातः। एतन्मेऽमृतपानम्, सुलाभो मे, चन्दनलेपो मे, समस्तेयं पृथिवी सुवर्णपुष्पा जाता, इति परमे व्योमनि आत्मानन्दे रममाणस्य तृतीयश्चरणः। प्रथमे परांगमुखता, द्वितीये ब्रह्मण्युन्मुखता, तृतीये ब्रह्मावाप्तिः इति अध्यात्मपक्षे त्रेधा निदधे पदम्।

एवं बहुषु मन्त्रेषु प्रश्नोत्तरया दिशा चाज्ञात् ज्ञापनं विधीयते। मुखं किमस्यासीत् (यजु०-३१-१०) ब्राह्मण एव मुखवत् प्रमुखः. क्षत्रियो बाहुः, लोकयात्रा-निर्वाहदक्षः, वैश्यो जगद् वेवेष्टि शूद्रश्चाशु द्रवति। अन्ये बहवो मन्त्राः समस्यामास्थाय प्रपूरयन्ति मनोरमयन्ति च।

वेदानामयमपि कथनप्रकारो यद् विशेषणमुखेन वस्तु प्रतिपादयन्ति-इन्द्रं जेतारम्-अपराजितम्, (ऋ०१-११-२) कविमग्निमुपस्तुहि सत्यधर्माणमध्वरे (१-१२-७)आशीर्वन्तः सुता इमे (१-२३-१) प्रभृतयो मन्त्रा अत्र क्षणे क्षणे कौशलमावहन्ति।

पुराणानि कथयन्ति सहस्रनेत्रः खल्विन्द्रः। आचार्य-चाणक्यः परामर्शं ददाति (अर्थशास्त्रस्य प्रथम अध्याये) इन्द्रस्य सभायामृषीणां सहस्रम्, स खलु द्विचक्षुः, परं सहस्रैर्ऋषिभिः परामृशति, अतः सहस्रनेत्रः सः। एतस्यैवार्थस्य सूक्ष्मं सूत्रं निदधाति ऋग्वेदः-इन्द्रोविद्यात् सह ऋषिभिः (१-२३-२४) एतयादृशा बहवो मन्त्रा व्याख्याता भवन्ति।

इंद्रं "सुरूपऽक्रुत्नुः" इति (१-४-१) इति वेदः कथयति। अस्यैतदेव तात्पर्यं यत् वेदानुवचनेन अनुध्यानेन च मनः पद्मायते, नेत्राणि कमलायन्ते स्वच्छान्तःकरणे परमात्म - प्रीतिः सपुष्पा मोदमाना लभमाना आनन्दम्, आनन्देन भग्नावरणा चितिशक्तिर्नितरां हर्षविकासं मनुते तनुते च मणिप्रभेव प्रतिभाम्। अतस्तस्य प्रकाशानन्दस्फुरणकायस्य निर्मायस्य निर्माय आनन्दनीडं मुखं हर्षातिरेकेण किरणावदातं भवति अत एव इद्र एव मानवस्य मुखं शोभनं सुन्दरं च करोति।

व्याख्यातारः केचनं मन्त्रं कर्मकाण्डपरमेवाहुः अपरे गुणवादमाश्रित्य विज्ञानमेव गवेषयन्ति, इतरे गणितं ज्योतिषं वा, साहित्यरसिकाः काव्यानन्दं जनयन्ति वेदध्वनौ, वेदाध्वनि केचन तर्ककर्कशां वाचमुन्नयन्ति परे सांख्यं वा योगं वा वेदान्तं वा व्याकरणम् वा आचारणं वा वेदादानयन्ति।

एतत्सर्वमभिनिपीयापि न खलु भाष्येषु आदरो निबध्नाति पदम्, यतो हि एकस्मिन् पक्षे सिद्धे सति अन्यः पक्षः प्रतीक्षते, न्यायं च कामयते। अतः अपरा परारूपेण वेदो विभज्यते। अपरा विद्या खलु वेद एव। यदा वेदः साधनरूपेणावस्थितः पुरुषस्य ज्ञानं वर्धयति, सत्वपरमाणून्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्थापयति, तदा पुरुषे परा योग्यता जन्यते, अनन्तरं ब्रह्मप्राप्तिः फलमस्य सूयते। इयमेव परा विद्या-फलरूपा उच्यते। इयमेव वा उपनिषच्चोच्यते। उपेत्य प्रत्यक् चैतन्याभिन्नपरमात्मानमधिगम्य अविद्या-ग्रन्थिं शातयति, शिथिलयति, मोक्षं गमयति, इति उपनिषत्, अतस्तत्प्रतिपादकेषु वेदेषु उपनिषद् इति प्रयोगः साधीयान्।

ये खलु संशोधितकलमषा मोघकर्माणोवृथासंकल्पाः कुत्सितजन्मानः कर्मार्द्रहृदयास्तेऽपि पावनं वेदसम्पर्कं संसाध्य शुद्धिकामाः शुद्धिकारणमनलसम्पर्क इव लोहस्यात्मानं पावयन्ति प्राप्नुवन्ति च। एतादृशं पात्रं निधानं च भवति यतो हि निधीयतेऽस्मिन्छ्रेयः।

प्रकृति हि अचेतना सांख्यैरभिधीयते। सा खलु सांख्यपरिकल्पिता त्रिगुणात्मिका प्रकृतिरचेतना सती कथमिव विचित्रकर्मविपाकपरिपच्यमानानां कृते प्रवृत्तिकारणतां भजते ? कथं वा देवमनुष्यपशुति-र्यक्प्रभेदभिन्नं भुवनं वा निर्मातुं शक्नोति ? रथादीनामचेतनानां स्वतः प्रवृत्तिः कुत्र दृष्टा ? अतः चेतनाधिष्ठाता एव ते प्रवर्तन्ते अतो भगवताऽभाणिमयाध्यक्षेण प्रकृतिः।

अतो मृत्युग्रस्ते संसारवर्त्मनि वेद एव वेदत्वं प्रतिपादयति। ये ये भाष्यकारास्तान् प्रतिनुमस्तावत्।

परं प्रपंचोऽयमुदञ्चति। पतञ्जलिः प्रमायति न च सर्वे लिगैः सर्वाभिर्वा विभक्तिभिर्वेदे मन्त्रा निगदिताः, तेचावश्यं यज्ञगतेन पुरुषेण यथायथं विपरिणमयितव्याः, तन्नावैयाकरणः शक्नोति यथायथं विपरिणमयितुम्, तस्मादध्येयं व्याकरणं, एतस्य प्रयोजनमेतत्, यत् वशिष्ठ—वामदेव—जाबालि—विश्वा-मित्र—बृहस्पति प्रभृतयस्तत्रभवन्तो ब्रह्मर्षयो न वेदभाष्ये तथा यत्नमकार्षुर्यथा वेदसाधनग्रन्थे। ते सम्प्र-दायेषु ब्राह्मणान् विभज्य मन्त्रांश्चासाद्य सम्प्रदायान् वितेनुः एवं ब्राह्मण—उपनिषद्—दर्शन—व्याकरण-निरुक्त-च्छन्दोज्योतिः शिक्षा-कल्पप्रभृतयः सम्प्रदाया विरेजिरे। तेषु तेषु च मन्त्रेषु विविधेषु सम्प्रदायेषु मन्त्रा विभक्ताः पठ्यन्ते, एक एव च मन्त्रः विविधेषु सम्प्रदायेषु भिन्नान् अर्थान् निर्वदति। ते सर्वे सत्याः आर्षेण दृष्टत्वात्, आम्नातत्वाच्च। 'सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्तसिन्धवः' अत्र सप्त-सिन्धव.,इत्यस्य कोऽर्थः। वैयाकरणा आहुः सप्त विभक्तय इति,योगिनश्च यमनियमादयः सप्त समाधिं जनयन्ति, सांख्या जगुः सप्त—प्रकृति विकृतय इति, जैमिनिभक्ताः सप्त होतार इति धन्वन्तरि शिष्या सप्तधातव इति, सेना-प्रकरणे सप्तप्रकाराः सैनिकाः (मरुतः) इति ज्योतिर्गणिते सप्त-ऋषयः इति एवं नानाप्रभेदभिन्नेषु संप्रदायेषु विभक्तान् मन्त्रप्रवादानाश्रित्य कः खल्वैकस्यापि उष्ट्रभारभूतस्य मन्त्रस्य व्याख्यासंग्रहं कर्तुं शीलयति व्याख्यातुं वा समर्थो भवितुमर्हति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एते मन्त्रा मननं त्रायन्ते। यथा यथा पुरुषो मन्त्रं सारवत्या मत्या निभालयति तथा तथा मन्त्र-विज्ञानं ज्योति र्वालभते। पुरा कल्प एतदासीद् देहेऽपि विदेहतां धारयन् पुमान् मन्त्रदत्तदृष्टिर्नवार्थ-सृष्टिं करोति। सम्प्रदायं च पुष्णाति। अद्यत्वेऽपि मधुकरा इव मकरन्दलिप्सवः पिपासवः मन्त्रछत्रे मधु गवेषयन्ति।

लोकाय एव वेदः खलु लोकतः प्रसिद्धमाप्नोति लोके च येष्वर्थेषु प्रसिद्धानि पदानि तानि सन्ति यतो हि वेदत एव लोकधर्मसिद्धिः। लोके विश्वभरण-पोषणकर्मणा राजा 'भरतः' इत्युच्यते, वेदे खल्वपि प्रायमग्नि र्भरतस्य भरणपोषण शीलस्य अग्नेः श्रूयते। यज्ञादिना पूजितः प्रशंसितश्चाग्निर्विश्वानि भूतानि प्राणिनश्च संवर्धयति। स्वानि स्वानि मतानि सम्प्रदायदग्धदृष्टयो मानवाः स्वं प्रयोजनं स्वार्थ-साधनं वा भाष्यकारा गवेषयन्ति। निकटवन्तं मन्त्रशब्दं मनसि निधाय स्वसम्प्रदायपोषकं मानवं वेदे बोधयन्ति। लघ्वपि स्वरसन्देहजातं तदिदमेषां महते प्रचाराय भवति, समग्रं वा येन तपसा मन्त्रे विज्ञानं ज्ञापयन्ति तथैव दोषानपि वेदपक्ष एव नि क्षपन्ति। वेदे सर्वा विद्याः सन्ति, इत्यस्माकमपि धारणा, परं यः पुरुषो यस्य वस्तुनो धर्मस्य वा यथार्थद्रष्टा भवति स एव तं विषयं मनीषिया भास्वरं मन्त्रस्वरं परिलभते। मन्त्रे स्वरवादो देववादः ऋषिवादश्च प्रचुरेण चतुरेण ऋषिपरम्पराचक्रेण निहितो विदितश्च।

मन्त्रदेवता एव मन्त्रस्य विषयः, तत्र वस्तुधर्माः प्रकाश्यन्ते, अथ च सर्वाण्येव नामानि ईश्वरस्य विषये गुणधर्मख्यापनानि, अतोऽध्यात्मरुचिः पुरुषस्तेनैव मन्त्रेण मनो महेश्वरे प्रवेशयति, वस्तुधर्माश्च प्रकाशयति। अतो मन्त्रवता पुरुषेण देववता ऋषिवता काव्यवता छन्दोवता च भाव्यम्।

वेदस्य काव्यं नितरां प्रौढिं भजते। शुचिस्मितां वाचं प्रति सुमनस्कः पुरुष इव, द्युमतीं प्रतिभां प्रति आत्मैव, कमलायताक्षीं सुवसनां सोत्सुकां कामिनीं प्रति उत्सुकस्तरुण इव रोचमानामुषसं प्रति सूर्यस्यानुगमनं रोचते सहृदयनां गुणलुब्धे चेतसि। मरुतो गमननिमित्तं लक्षयित्वा स्त्रिय इवात्मानं शोभयन्ति। विचित्रैरलंकरणैरेषां शुभलक्षणानां वक्षांसि द्योतन्तेऽथापि वज्रसदृशेषु हस्तेष्वेषां विद्युन्महस ऋष्टयो द्योतन्ते। अग्निः खलु नदीतटे हंस इव, काष्ठेषु गुप्तो मणिरिव, सिन्धूनां भ्रातेव, संदर्शनः सूर्य इव, पयः पूर्णाः धेनुरिव शुचिर्दुग्धप्रवाह इव, स्तुतः ऋषिरिव, रमणीयः खलु निवास इव, स्नातश्चा-स्व इव, प्राणप्रदो वायुरिवायुः प्रभृतीनि उपमानवचनानि न केवलं चेतो रंजयन्ति, अपितुविमले सोत्सुके मानवहृदये भावसंपदामानयन्ति शब्दसमृद्धिं च वर्धयन्ति। वस्तुदृष्ट्वा सचेतसः पुरुषस्य हृदयं वाचं स्पन्दयति। वेदानां अत्र विषये प्रभविष्णुतया योगदानम्।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीतरसिकः खलु पुरुषः पुरुकामश्चः। बहुविधानभावानासाद्य साधितवेशः कल्पनाकेशं संवारयति कोषं चोदञ्चयति। वेदानामत्र योगदानं तु महद् रणरणकं तनुते।

इन्द्रविषयेऽग्निविषयेऽन्येषु वा देवेषु विषये शोभनतया उक्तानि सूक्तानि कस्य रहस्यवेदिनो मनो न मोहयन्ति ? स्वराज्यस्य अर्चना-प्रसंगे वेदेन च यद्गीतं तत्तु जगत्स्रष्टुर्महती स्वाभिमानविषये राष्ट्रोत्थानविषये चोद्भावना। किमधिकं जीवनमाश्रित्य बहूनि सूक्तानि परं मरणविषयेऽपि यदुक्तं न कुत्रापि केनापि कविना तद्रहस्यभूतं यम-सूक्तं प्रप्रेरितम्।

श्रुतिस्तु मातेव सरलया गिरा बालकं चालयति, शय्यागीतं गायति, विविधां प्ररोचनां मनसि स्थापयति, पुरुषे पौरुषं विपुलयति, अतः सावधानेन चक्षुषा समर्पितेन चेतसा वेदसरोऽवगाहनाय प्रह्लादनाय च। वेदे या चारुता शब्दं शब्दं प्रति राजते सा तु तद्गतेन मनसैव रसनयोग्या। इयमेव रस चर्वणा वर्हेण मयूरं प्रति मयूरीव चंगानि अंगानि चगयति।

अथ यानि भाष्याणि सुधियां राजन्ते तान्यपि सति सम्भवे द्रष्टुं योग्यानि। अयं प्रयासस्तु रजः प्रोक्षणमिव वेदार्थरतानाम्, यथा रजोरहिते मणौ प्रकाशानन्दाविर्भावस्तथैव कुमतिकृतटीकाभिरारूढे रजसि मन्त्ररत्नक्षालमावश्यकम्। अत एव काले सूक्तिरहस्यात्मभिर्महात्मभिर्यत्नो विधीयते। तेन मन्त्रा वेदाश्च सुरक्षिता भवन्ति। मन्त्रार्थोऽपि दाप्यते।

एतत्तु नः प्रियम्। आदौ काले कः खलु भाष्यकार आसीत् ? येन् मन्त्रावबोधनेऽन्यांश्चोन्मुखीकरणे प्रयासो विहितः। अत एव उच्यते-साक्षात्कृत-धर्माण ऋषयो बभूवुस्तेऽपरभ्योऽसाक्षात्कृत-धर्मेभ्यो हि उपदेशेन मन्त्रान् ग्राहयामासुः। अथ चानन्तरं वेदं वेदांगानि दर्शनानि पुराणानि अन्यानि वा साधनानि प्रीत्या निर्मितानि सेवितानि च। सर्वे तत्र भवन्त ऋषयः स्वां स्वां वृत्तिं प्रवृत्तिं च मेलयित्वा वेदार्थान् धारयाञ्चक्रिरे। साम्प्रतमपि तांस्तान् धर्मानाश्रित्य तथाविध उपायः करणीयः यथा वेदसंसारयोर्मध्ये सहजः सम्बन्धः स्यात्। यतो हि पुराणान्यपि वेदमेवाधारीकृत्य संसारे प्रवृष्टानि परं कल्पनासंभारयोजनया तानि क्वचित् क्वचिद् वेदादपि दूरं गमयन्ति। वेदार्थश्च रहस्यभूतो जायते। अतो हृदा मनसा मनीषया वेदार्थोद्भावने स्वाभाविकः सहजश्च सम्बन्धो बन्धुवर्ग इव उत्सर्गानन्दं जनयति। जनयतु नः शान्तिः, जनयतु नः सोमरसायनं येन उमया सहितं महेश्वरस्य प्रतिभासकं ज्ञानं जायेत। इन्द्रस्येव सोमपानं सर्वस्य कृते सुलभं सुखदं शुभानि ईश्वरप्रतिपादकानि खानि-इन्द्रियाणि तेषां दम् दाता, शोधयिता च भवेत्। नमः परमर्षिभ्यः।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुम्बापुरीनगरे विद्वद्गोष्ठीमध्ये सत्कृतोऽयं निबन्धः —

विदेशेषु संस्कृतम्

—डा० भारतभूषण विद्यालङ्कारः
प्रवक्ता—वेद-विभागस्य
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयः

'वाचा विरूप नित्यया' ऋ. ८, ७५, ६, 'जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसम्' अथर्व०-१२-१-४५, 'उदु त्ये मधुमत्तमा गिरः' २०. ५६. १ प्रभृतिषु मंत्रेषु भाषाणां वैचित्र्यं, वैविध्यं वैशिष्ट्यं च प्रतिपाद्यमानं दरीदृश्यते। 'व्यैलबाः' अथर्व. १२-१-४१ इति शब्दं निरीक्ष्य तु महतो विचिकित्सा बुभुत्सा चोन्मिषति प्रतीयते पुरा लप् धातुरिव कोऽपि लब् धातुरपि परिभाषणे वाच्यविषयतामवतरति स्म। उत्तरभारतेऽधुना खल्वपि विवाचसे जनाय 'लब्' धातो र्मिश्राः शब्दाः प्रयुज्यन्ते। तद्यथा 'लबाड़ः' इति। ओष्ठार्थे वचनसाधके चाङ्गलभाषायां 'लिप्' शब्दस्य प्रयोगः क्रियते।

कथङ्कारं शब्दा विकृतिं भजन्ते कथं वा वृद्धिं लाघवं वाऽऽसादयन्ति, केन कारणेन वा भाषासु नियमानुसारं निर्णियमं वा परिवर्तनं जायते, एतदर्थमेव पुरा सम्प्रदायेषु निरुक्तसम्प्रदायस्य महत्ता प्रशस्तिश्च स्वीक्रियते। तंत्रवार्तिके, नाट्यशास्त्रेऽन्येष्वपि सम्प्रदायेषु भाषातत्त्वविचारे महतां तत्रभवतामृषीणां शास्त्रकाराणामाचार्याणां च साधीयसी वाचोयुक्तिः प्रशस्तिं भजते।

'यः पर्वतान् प्रकुपिताँ अरम्णात्' ऋ० २-१२-२ इत्यत्र इन्द्रस्तुतौ ऋषिर्गृत्समदः कथयति कुपधातुः संचलने वर्तते। वस्तुतस्तु धातुरयं प्रकोपे दृष्टः, एवमेव वपधातुर्बीजपद्धतौ पठितः परं नापितकर्मण्यपि दृश्यते, हृ धातु र्हरणे पठितः, विहारे, उपहारे, आहारे चापि वर्त्तते, मृङ् धातुः प्राणविसर्जने समाम्नातः परं कान्तावपि श्रूयते यथा कामदेवस्य कृते 'मार' इति। मरुद्गणप्रशंसायां ये चात्मानं जनय इव सालङ्कारं सचमत्कारं शोभयन्ति। भूधातु र्भवे, विभवे, प्रभावे चाप्यभ्यस्यते। अत एव शब्दप्रभास्करो यास्काचार्यः संकेतयति–शवति गतिकर्मा कम्बोजेषु भाष्यते, विकार एनमार्याः पठन्ति शव इति। लब्ध-श्रद्धाञ्जलिः पतञ्जलिरप्याह–सप्तद्वीपा वसुमती, चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्याः तेऽसुरा हेडयो हेडय इति कृत्वा पराबभुवुः, म्लेच्छो ह वा यदपशब्दः, कुमारिलभट्टोऽपि रोमक–यवन भाषा–शब्दानां विचारं प्रतिपादयति। पाणिनिरपि 'यवनानी' लिपिं स्वीकुर्वन् एतद्विषये व्यवस्थां विदधाति।

एवं स्थानप्रभावात्, पवनप्रकर्षाद्, अभ्यासदोषाद्, भाषामिश्रणाद्, परस्परसम्मर्दवलाद्, विरह-विप्लव–जाति–मिश्रण–ऋतुप्रकोपाध्यात्मदोषाच्च भाषासु परिवर्तनं जायते, यस्या बहुविधानि पुस्तकानि मतसिद्धान्तप्रवचनानि निरुपद्रवाणि जायन्ते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाभारतं पुराणानि अन्यानि चैतिह्यप्रमाणानि खलु प्रतिपादयन्ति यत् केचित् समाजदूषका अकृतकारिणोऽपराधिनो देशाद् बहिष्कृताः। ते च यथाकालं यथावसरं च विवशा मनोनुकूलान् प्रदेशानासाद्य स्वे स्वे कर्मणि रतास्तेषु तेषु च स्थानेषु लब्धावस्थाना निवासाञ्चक्रिरे। भूतस्थानं भूटान इति कथ्यते, गोरक्षा गोरखाः सम्पन्नाः, शेषाः शेखा जाता, प्रस्थानाः पठाना इति एवमेव तुराण, किराण, तुरुष्क, महामद, दरद, खुरासान, माकन्द, ताशकन्द, हिरात, किरात प्रभृतयः जनाः साधितजनस्थाना जाताः प्रादुर्भूता वा।

न केवलम् एतावदेव, अपितु विदेशेषु अवस्थिताः शब्दाः स्वकीयानि इतिहासप्रवचनानि प्रभावयन्ति दनुजवंशवृत्तयः डेनमार्क, मगधविलासिनो मकदूनिया, अयोध्यावासिनो अयूथिया, स्कन्द प्रपूजकाः स्कन्धनभ्या (स्कैंडिनेविया), पणिस्थानाः फिनेशियाः प्रभृतयः शब्दाः स्वकीयमितिहासं परम्परां च भूयसः कालादुपलालयन्ति विदेशेषु न केवलं निष्काशिता अपराधिन एव निष्क्रान्ता—अपितु कौतूहलबलाद् राजर्षयो महर्षयोऽपि सिद्धा वृद्धा अपि दासा भृतका अपि महीयांसो विद्वांसोऽपि वीक्षितुं, भिक्षितुं शिक्षितुं वा यत्र तत्र बहुत्र भ्रान्ता निर्गतास्तत्रैवावस्थिता वा।

ईराण देशीया हेलमुत प्रभृतयो विद्वांस एवमाह—ईराण प्रदेशस्तु आर्याणामेव आर्याणामयनमिति कृत्वा आर्यायणमेव 'ईराण' इति भणन्ति। एवम् आवागमन स्थानमेव अफगानिस्तान इति च परामृशन्ति। अपरे विदितवेदितव्या जाति—शब्दविज्ञान—रसायना बोधोपायना एवं खल्वाहुः आयनान्ता ब्राह्मणाः सर्वे ईराण—भारतमध्यवासिनः, आपगायन शब्द एव अफगानिस्तान—शब्दस्य पूर्ववर्ती, तत्र लामकायन (लाम गायन) प्रान्तस्योपलब्धेः एवं प्रतीयते पाणिनिनिर्दिष्टा, लमकगोत्रीयाः श्रोत्रिया ब्राह्मणास्तत्र न्यवसन्। एवमेव शाकटायन, कात्यायन, शांकायन प्रभृतयः शब्दाः खल्वपि स्वकीयं महिमानं साभिमानं प्रवर्तयन्ति। सीरिया—असीरिया—असुराः प्रभृतयः शब्दा देशा वा तथैव स्वहृदये सचमत्कारं रहस्यं धारयन्ति भारतस्य च माहात्म्यं प्रकटयन्ति। बोगाज-कोई भागे लब्धः शिलापट्टलेखोऽपि वेद देवतानां नामग्राहं कीर्तिं पुष्णाति। तत्र सन्धावुल्लिखितं च सन्धिममुं द्वयोर्देशयो देवाः कृपया रक्षन्तु मित्रावरुणावश्विनौ इन्द्रश्च। एवमेव मिश्रदेशे श्मशानखातेषु स्थितौ श्वानौ सप्तर्षयो द्वादशादित्यानां चर्चा च अर्चाविषयतां सम्यग् अवतरति। रोमक (इटली), यवन (यूनान) स्पेन—फ्रांस प्रभृतिष्वपि देशेषु चायमेव समानश्चर्चः।

अविनाशचन्द्रदासः 'वेकनाटाः पणयः' शतारित्रां नावमातस्थिवांसः सार्थवाहतां गाहमाना विश्वस्य पूर्वं सिद्धजलयाना आसन् इति स्वकीये 'ऋग्वैदिक—इण्डिया' नामके ग्रंथे प्रतिपादयति। पश्चिमेभागे तुर्की—देशे 'बोगाजकोई' स्थले 'मितानी' जनानां सन्धावुल्लेख एवं प्रतिपादयति—अयं 'मितानी' शब्दो 'मैत्रायणी' शब्दस्यैव भ्रष्टं रूपं भजते। तत्र राज्ञः 'मति ऊजा' नामापि 'मित्रौजाः'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संभवति । अहरभिमानिनो देवस्य नाम च मित्र इति प्रथितमेव ।

अथर्ववेदस्य ५-१८-४ तैमात[1] शब्दं दृष्ट्वा महामहिमशाली तत्र भवाँल् लोकमान्यस्तिलकोऽपि भ्रान्तिं जगामेति भारतललाट-तिलकायमानस्य विमलविपुलबुद्धेः श्री तिलकस्य निबन्धः भाण्डारकर-स्मृति-ग्रन्थे—'काल्डियन-वेद' नाम्ना प्रकाशितः । यत्रासौ प्रतिपादयति यत् काल्डिया देशे एको महान् सर्पः प्रसिद्धिं गतः । यस्य नाम 'तियामत' इति स्मरन्ति, यश्च सप्तशिराः प्रलम्बशरीरस्य पातालवासिनस्त-स्यैव सर्पस्य विवरणमथर्ववेदे लभते' । तस्य सर्पस्य हननकर्ता 'अब्जुजित्' इति पदेन स्वर्यते ।

एतत् सर्वमभिनिभाल्य प्रतीयते 'अब्जुजित्' शब्दः खलु वेदस्य 'अप्सुजिद्' एव । यश्च इन्द्रार्थे प्रसिद्धः इन्द्रश्च सप्तहा, वृत्रहा, सोमपा, प्रभृतयः शब्दा वेदानामेव माहात्म्यं गणयन्ति यतोहि प्रसिद्धिगत इन्द्रो भारतीयानामेव प्रमुखो राष्ट्रव्यापी नेता । एतेन स्पष्टम् एतेऽन्ये च बहवः शब्दाः पूर्ववत् देशं स्थानं, कालं चासाद्य अधुनापि मधुमतीं भूमिकां विश्वसंस्कृतौ तन्वन्ति पुष्णन्ति च भारतस्य सौरभ्यं सौष्ठवं च ।

एते चान्ये च एवं जगुरार्या उत्तरध्रुवप्रदेशाद् भारतदेशे लग्ना मग्नाश्च । तान् प्रत्यपि सुहृद्भूत्वा भारतीया आचार्या न तत्र आर्यजीवनसंकेतं स्थानं ग्रन्थं तीर्थं वोपलभन्ते । एतत्तु सत्यं भार-ताद् गतानां संततनां तत्र तत्रान्येषु देशेषु नगराणि, गृहाणि मंदिराणि सूचयन्ति भारतप्राग्भावितानाम् । मंगोलियादेशे गायत्री-मन्दिरम्, इन्डोनेशिया देशे रामायण-महाभारतकथासंकेताः, कम्बुज-श्याम-वीतनाम देशेषु बुद्धमन्दिराणि-मैक्सिको देशे गणेश-मन्दिरम्-जापानदेशे सूर्य-पूजा, चीनदेशे बुद्धप्राधान्यम्, तुर्कदेशे संस्कृत-ग्रन्थ-लाभः, रूसदेशे वैदिकप्रभावः, ईराणदेशे वेदानुवचनानि किमधिकम् यत्र-तत्र सर्वत्र दरीदृश्यते भारताद् गतानामार्याणां कर्णप्रियाण्याख्यानानि, निरुपद्रवाणि चाचरणानि । भारत-संस्कृते संस्कृतस्यैव जयघोषः शर्मण्यदेशे डिण्डिमायते । अंग-वंग कलिंगवत् तेष्वपि शास्त्रपत्रेषु लिखि-तानि राजर्षिमहर्षीणां चरितानि वचनानि च ।

अत्र देवशब्दानां अनेकानि उदाहरणानि प्रदीयन्ते—

अग्नि—लैटिनभाषायां इग्-निस् (लिथुएनियन भाषायां) उग्निस् (रूसीभाषायां) ओगोन सञ्जातः । हिन्दीभाषायामपि 'आग' अयं शब्दः प्रयुज्यते ।

वरुणः—ग्रीकभाषायां व स्थाने सम्प्रसारणो भूत्वा–उरेनस्–यूरेनस् इति भूतः ।

पितरः—आदिमः पिता द्यौ एव द्यौस्पितरः– (ग्रीक भाषायां) जुएसपेटर (लैटिन–भाषायां) जुपिटरः सञ्जातः । परं लैटिनभाषायामेव श्राद्धयोग्याः पितरः "दि पेरेन्टीज" भूतः ।

---

१ अथर्व० ५-१३-६ इत्यत्रापि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह्व:—(ऋग्वेदे–विश्पति यह्वमतिथिं नर: (३.३,८) प्र वो यह्व पुरुणां विशां (१.३६.१) शब्द: निघन्टौ महत्वाची शब्देषु लिखित: एष एव शब्द: हिब्रू–भाषायां (ओल्डटेस्टामेन्ट) परमाधिक्येन प्राप्नोति । एष हिब्रू देव: 'यहोवा', 'यह्वेह', 'यह्वे' अस्ति । यहोवा (JCHOVAH) शब्दस्य हिब्रू भाषायामपि अर्थ: परम महान् एवास्ति ।

गॉड—ख्रिष्टीय गॉड (GOD) शब्द अपि स्पूटानिकभाषाया: 'घूतोम्' (GHUTOM) शब्दान्निष्पन्न: । घूतोम् शब्दस्तु संस्कृतभाषाया: 'हुत्' शब्दान्निष्पन्न:, यच्च हु, ह्वेञ् आदि धातुभि: प्राप्तुं शक्यते । 'दि ग्रेट ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्सनरी' इत्यभिधे ग्रन्थे एष एव भाव अङ्गीकृत: ।

मित्र:—मिथ्: । अर्थवन्–अथ्रवन सञ्जात: ।

पारसीकेषु तु जरथुष्ट्र पूर्वम् सोमेन (अवेस्तायां) 'हओमेन' देवपूजाविधीयते स्म । वेदस्य 'यमवैवस्वत:' अवेस्तायां "यिम विवन्ह्वत:" सोमानुष्ठानकुशलशरीरो मृत्योर्मार्गं विहाय स्वर्ग भूषितवान् । वेदस्य अर्य्यमन् तत्र एरयमन् अभूत् । भगस्तु भग एव ।

जरथुष्ट्र मतस्य प्रभावादसुरमहत् 'अहुरमज्दा' सञ्जात: परं अर्थस्तु स एव महान् प्राणदाता परमात्मा इत्यर्थ: । ऋग्वेदे असुर: पिता न: (५.८३.६) वैदिकऋत 'अर्त' शब्दे परिवर्तित: तेल–एल–अमर्नाया: शिलालेखे (१४०० ई० पू०) एष उपलब्ध: । ऋतस्य पन्थाम् न तरन्ति दुष्कृत: तत्र 'अश्' (ऋत) स्तुतौ कथितम्—"अएवो पन्ताओ यो अशहे, वीस्पे अन्य एसां अपन्ताम् ।

मुस्लिमदेशेषु ते जना अद्यापि जश्नं कुर्वन्ति, एष: जश्न: वस्तुत आर्याणां यज्ञ (य+ज्+ञ) एव विद्यते । अवेस्तायां स एव यश्न: पुनश्च जश्न: समजनि । तेषां स्त्रिय: स्वभर्तारं 'खसम' इति शब्देन उच्चारयन्ति । आर्यपुत्रशब्दस्थाने 'खसम' शब्द: संस्कृतिर्बहुल: विद्यते । ख: आकाश: [1] तद्वत् । वेदेषु माता–भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:' तथा विवाहसमये पण्डिता: पठन्ति "द्यौरहं पृथिवी त्वं ताविह विवहावहै प्रजामाजनयावहै (बृ० ३. ६. ४.२०) यथा द्यौ: भूमिमाच्छाद्य तां जलेन सिञ्चति वीर्यवतीं च करोति । तथैव पतिरपि स्त्रियां सिञ्चति, पुत्रादिभि: संयोजयति ।

इत्थं वक्तुं पारयाम: यत् संस्कृतभाषादर्पणे वयं सम्पूर्णमपि लोकं पश्याम: । सर्वत्रैव सर्वासु भाषासु, विशेषतश्च सतम् वर्गस्य, संस्कृतशब्दा: स्वरूपपरिवर्तनं विधाय तस्य लोकस्य तस्या: भाषाया: सुतरां सेवां कुर्वन्ति । तत्र च अस्माकं एते शब्दा: राजदूता इव अस्मान् गौरवास्पदान् कुर्वन्ति ।

स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवा इति, भगवतो मनो सन्देशं उद्देश्यञ्चाभिनिपीय श्रेष्ठा: पुरुषा: समस्तायां जगत्यां सञ्चरन्त: भाषां भावं संस्कृतिमध्यात्मं च सर्वेषु दशेषु रोपयामासु । एवं आदिकालत एव इयं संस्कृत–सञ्चार–प्रचार–व्यवस्था सर्वत्रैव सञ्चरति न तु केवलं प्रथम महायुद्धसमये । अधुनापि गायका, वादका, नर्तका नटा–नेतारश्च पृथिव्यां सञ्चरन्त अध्यात्मवादीभि: सह देशस्य महतीं भाषां आशां च उद्बोधयन्ति । □

---

१ आकाश: परमात्मापि आकाश उच्यते, आ समन्तात् प्रकाशनात् ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उज्जैनस्थ विक्रमविश्वविद्यालये कालिदास–समारोहे आयोजितायां संस्कृत–वाद-विवाद–प्रतियोगितायां भाषणमिदं प्रथमं पुरस्कृतम्—

भारतस्यैकमात्मानं सीमानञ्च यथायथम् ।
न कालिदासादपरः कविर्दर्शयतेतराम् ॥

विपक्षेभाषणकर्त्ता— **दूधपुरी गोस्वामी**
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयस्य
संस्कृत-विभागस्य छात्रः

अयि ! प्राच्यार्वाच्य विद्यानिधयः, गीर्वाणवाणीविलासोल्लसन्मानसः, मान्याध्यक्ष-महाभागाः ! विधिविधानपारंगता निर्णेतारः ! कालिदाससमाराधितस्य कालिकान्तस्य महाकालस्य व्यासपीठमधिष्ठिताः संस्कृतानुरागिणो विद्वांसश्च । अद्याहं अस्यां वादविवादप्रतिस्पर्धायां विषयस्य विपक्षे ज्ञानाक्षिपातं निक्षिप्य किमपि निगदितुमिहे । यद्यप्यत्र सर्वेऽपि पण्डितप्रवराः कालिदासप्रियाः, तद्गुणगाननिरताः, तदाख्यानाऽऽख्यानानिपुणाः, तत्साहित्यसमाराधनतत्पराश्च सन्ति, कालिदासविपक्षे आक्षेप-परिकल्पनां परिकल्य विवदिष्यतो मे विचारश्लाघाकरः को नाम विद्वान् । परं विषयस्य विपक्षिणां कृते समायोजकैः मञ्चव्यवस्थेयं कृता एतेन प्रतीयते यत् केचन सन्ति सन्तो ये खलु कालिदासविपक्षेऽपि कांश्चिद् विचारान् श्रोतुमिच्छन्त्येव ।

मान्याः ! ये खलु मे प्रतिद्वन्द्विनः सोल्लासं, सोत्प्रासं सोत्साहञ्च मुखं व्यादाय विजल्पन्ति, यत् कालिदासादपरः कोऽपि कविः भारतस्यैकमात्मानं सीमानञ्च यथायथं न दर्शयते । मन्ये, तेषां मानसिकी-यन्त्रव्यस्था विसंस्थुला सञ्जाता । अत एव वराका मे प्रत्यर्थिनः विवेक-प्रच्युता इव, विपर्यस्तमतय इव, हस्तपादविरहितामर्थशून्यां, मूढ़जनोचितां च वाचमुच्चारयन्ति । अयि,नीरक्षीरविवेकिनो विद्वासः ! यः कालिदासः कामदास इव श्रृगारैकरसः कान्तारागप्रियः वासनावासितजीवनः, ललितकलाकलापाकलनकुशलः स भारतस्यात्मानं सीमानं यथायथं वर्णयति इति साम्प्रतमसाम्प्रतमिवाभासते । ये मे प्रतिपक्षिणः समाक्षिपन्ति यत् कालिदासः क्वचिद् स्वनायकानां जीवनदर्शनव्याजेन, क्वचिद् पर्वतवर्णनव्याजेन, क्वचिद् नदीरचनाचातुर्येण, क्वचिद् नगरवैभववर्णनव्याजेन च भारतस्य सीमानं दर्शयति, तान् प्रत्यहं कथयामि, यत् संस्कृतसाहित्ये वहवो हि कवीश्वराः भासभवभूतिहर्षाश्वघोषप्रभृतयः सन्ति ! यैः कविभिः स्वसाहित्ये वनपर्वत नगरोद्यानादिनामातीव चारुतया वर्णनं कृतं । किमेतेषां वर्णनमात्रेणैव सीमा निश्चयो भवति ।

मान्याः ! प्रकृतिवर्णनं सामान्यरूपेण कवेःकर्म भवति । प्रकृतिवर्णनं विना साहित्यं परिपुष्टमेव न । अतः कोऽपि कविः राष्ट्रीयभावनया न प्रकृतिं वर्णयति, अपितु स्वसाहित्यसौन्दर्यवर्धनाय, पाठकानां चित्तानुरञ्जनाय च तच्चित्रणं करोति । केचन कालिदासस्य समर्थकाः निजमतसमर्थनाय तर्कं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयच्छन्ति, यत् कालिदासेन रघोर्दिग्विजयव्याजेन भारतस्य सीमाविषयिकी गीतीरेव कवितया समुद्गीता। परं अत्र विचारणीयं किं दिग्विजयमात्रेणैव सीमानिर्धारणं कर्तुं शक्यते, नान्यथा। रघुवंशस्य चतुर्थे सर्गे राजारघुर्यदादिग्विजयं कर्तुं स्वस्थानात् निर्ययौ तदासौ विभिन्नदिग्वर्तिनो नृपतीन् वशीकृत्य तेषां कीर्तिमेव जग्राह न तु तेषां श्रियं सीमानं वा। एतेन प्रतीयते यत् रघोर्दिग्विजयः केवलं रघोः पौरुषमेव प्रथयति, न तु भारतस्य सीमोद्देशान् दर्शयति।

मान्याः! केचन मे प्रतिपक्षिणः वदन्ति यत् कालिदास एव भारतस्यात्मानं बहुशः पुष्णाति। स एव आत्मविषये एकरूपान्वितान् विचारान् विरचयति स एव आत्मनोन्नतिं दर्शयति। एते सर्वेऽपि विचाराः उन्मत्तप्रलापा इव आभान्ति। यः कवीश्वरः आत्मावेक्षणे निर्निद्रो भवति स आत्मानं वेत्ति, स एव ज्ञानविज्ञानवैचक्षण्यमाधत्ते, स एव आत्मनो निगूढतत्त्वं सरलया वाचा वदति। परं कालिदासस्तु आत्मनः एकमपि कलां न कलयति। स तु सर्वदेव स्वनायकानां जीवने तां परिपाटिं प्रवेशयति या मानवानुद्वेजयति या प्रतिपदं विरसान् विधाय विद्रावयति या च सतोऽपि असतो विदधाति। श्रीमन्तः! कालिदासस्य अग्निवर्णाभिधं नायकं को न वेत्ति यो हि प्रजापालनपराङ्मुखः सन् रमणीरमणानुरक्तः पामरजनोचितं वाममार्गं प्रपेदे। अभिज्ञानशाकुन्तले नृपतेः दुष्यन्तस्य चरित्रं तु सर्वविदितमेव यो हि आखेटव्याजेन मृगमनुसरन् परिक्षान्त–देहः कण्वाश्रमं विवेश। तत्र च आश्रम–बालवृक्षान् कोमललताश्च भुजोत्क्षिप्तकलशसलिलसेकेन संवर्धयन्तीं प्रकृतिपेलवां, सकलप्रपञ्चविवर्जितां, मुनिकन्यकां शकुन्तलां विषगर्भैर्मृदुलैः पापिष्टजनोचितैः वचनविन्यासैः अतिसंधाय महति दुःखागर्ते पातयामास। एवमेव रघुवंशे वर्णितानां अजदशरथप्रभृतीनां नायकानां चरित्रं कविना कालिदासेन कीदृग्घृणितं, इति सर्वे एव जानन्ति। मालाविकाग्निमित्रे अग्निमित्रस्य चरित्रं किं आत्मविदां पुरुषाणं चरित्रलवेनापि तुलयितुमलम्। विक्रमोर्वशीये नाटके नायकनायिकयोरन्येषांञ्च पात्राणां यत् वर्णनं उपलभ्यते तद् वीक्ष्य वक्तुं शक्यते यन्नास्ति किमपि आत्मविद् जनोचितमाचेष्टनम्।

मान्याः! कोऽयमात्मा? किञ्चात्मनः स्वरूपम्? का नाम आत्मप्रशस्ति? के सन्ति आत्मोद्धरणोपायाः? अस्मिन् विषये महाकविकालिदासः किमपि न वदति। पुनरसौ आत्मैक्यं दर्शयते, आत्मोन्नतिमातनोति, आत्मसंस्कृतिञ्च परिपुष्णाति, एते सर्वेऽपि विचाराः दुराग्रहगृहिलानां मम प्रतिस्पर्धिनां केवलं आत्मविकत्थनामेव प्रथयन्ति। न तेषां वचांसि मनागपि सारगर्भाणि तर्कपरितुष्टानि, विद्वज्जन–मनोहराणि च मे प्रतिभान्ति। अन्तेऽहं उपसंहृतिरूपेण इत्थमेव समर्थयामि यत् क्वचिदपि कालिदासः भारतस्य सीमानं यथायथं न दर्शयते, नापि च यथायथं आत्मानमेव दर्शयते। अतः कालिदासं परित्यज्य अन्येषां कवीश्वराणां गुणागणैरात्मानं कृतार्थयन्तु श्रीमन्तः। इत्येव प्रार्थये॥

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उज्जैनस्थ–विक्रमविश्वविद्यालये कालिदास–समारोहे आयोजितायां संस्कृत–वाद–विवाद–प्रतियोगितायां भाषणमिदं तृतीयं पुरस्कृतम्—

भारतस्यैकमात्मानं सीमानञ्च यथायथम् ।
न कालिदासादपरः कविर्दर्शयतेतराम् ॥

पक्षेभाषणकर्त्ता—ब्र० सत्यदेव
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयः
संस्कृत-विभागस्य छात्रः

विविधविद्याविभा विभासितान्तकरणाः ! संस्कृतरक्षाव्रतपरिपालनपारायणाः । प्राच्यार्वाच्यपरिपाटीपारिपोषकाः ! मान्याः ! सदसस्पतयः ! न्यायविद्यापारंगताः निर्णेतारः ! संस्कृतसाहित्यसुधास्वादसरसस्वान्ताः, सरस्वतिरसरसिकाः, श्रोतारश्च ! अद्याऽहं समायोजितायामस्यां भारतस्यैकमात्मानं सीमानञ्च यथायथम् । न कालिदासादपरः कविर्दर्शयतेतराम् ॥ इत्यस्यां वादविवाद प्रतिस्पर्धायाम् विषयस्य पक्षमभिलक्ष्य ज्ञानवतां भवतां पुरस्तात् वक्तुमक्षमोऽपि श्रीमतां शुभाशीर्वादेन किमपि विवक्षुरस्मि ।

सत्यमेव प्रतिभाति यत् कालिदासात् भिन्नः कोऽपि कविश्वरः भारतस्यात्मविषये सीमाविषये च कालिदासप्रथितं विचारचयंमतिशय्य न प्रतिष्ठां प्राप्नोति प्रथितायां काव्यपरम्परायाम् । मान्याः ! कविकुलगुरुः कालिदासो यत्र कविता-वनिता-विलासः तत्रैवासौ भारतस्यात्मनो विकासः सीमोल्लासश्चापि अस्ति । कालिदासः स्वकीयासु सर्वास्त्वपि कृतिषु वाद्यप्रकृतिमुपवर्णयन् सर्वत्रैवासौ भारतस्य अखण्डतां तदात्मानं च विलोकयति । कदाचिदसौ उत्तुङ्ग–पर्वतान् वर्णयन् भारतस्य आत्मनः औन्नत्यमेव आतनोति, कदाचित् सागरोल्लासमालपन् भारतस्य आत्मोंल्लासमेव उल्लासयति, कदाचित् नदीवृन्दं वदन् भारतस्य आत्मनः प्रवाहः सातत्यमेव प्रसारयति, कदाचित् नगरोद्यानवैभवं वर्णयन् भारतस्य विभवतामेव आविर्भावयति, कदाचिच्चश्यामलवनमालां विरचयन् भारतस्य शस्यश्यामलतामेव उपपादयति । एवं प्रकारेण कालिदासस्य चलनेऽपि,वदनेऽपि,लेखनेऽपि,दर्शनेऽपि, स्वप्नेऽपि च भारतस्याखण्डता प्रतिबिम्बितेवाभाति ।

रघुवंशस्य प्रथम–सर्गे यदा कालिदासः इक्ष्वाकुवंशीयानां वर्णनं करोति, तदा आसमुद्रक्षितिशानाम्, आनाकः रथवर्त्मनाम् "इत्युदीर्य स्वर्गपर्यन्तम् अर्थात् त्रिविष्टपान्तं यावत् तु उत्तरस्यां दिशि सागरान्तं यावत् तु दक्षिणस्यां दिशि भारतभुवः सीमाविस्तारं विबोधयति, रघुवशंस्य तृतीयसर्गे यदा नन्दिनी दिलीपस्य सेवाभावं परीक्षितुं इयेष तदा–गौरी–गुरोर्गह्वरमाविवेश इति निगद्य कालिदासः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतस्य सीमावर्तितामेव आपुपोष। रघुवंशस्य चतुर्थे सर्गे तु रघोर्दिग्विजय व्याजेन भारतस्य सीमानमेव समन्तात् वर्णयामास। कानिचित् सीमावन्ती मनोहराणि पद्यानि समुदाहर्त्तव्यानि—

वंगानुत्खाय तरसा नेतानौ साधनोद्यतान्। नीचखान जयस्तम्भान् गंगास्रोतोऽन्तरेषु सः॥
गृहीतप्रतिमुक्तस्य स धर्मं विजयी नृपः। श्रियं महेन्द्रनाथस्य जहार न तु मेदिनीम्॥
दिशि मन्दायते तेजो दक्षिणस्यां रवेरपि। तस्यामेव रघो पाण्ड्या प्रतापं न विषेहिरे॥
ताम्रपर्णे समेतस्य मुक्तासारं महोदधेः। ते निपत्य दधुः तस्मै यशः स्वयमिव सञ्चितम्॥
पारसीकास्ततो जेतुं प्रतस्थे स्थलवर्त्मना। इन्द्रियाख्यानिव रिपून् तत्त्वज्ञानेन संयमी॥
तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्त–विक्रमम्। कपोलपाटलादेशी बभूव रघुचेष्टितम्॥
काम्बोजः समरे सोढुं तस्य वीर्यमनीश्वरः। गजलान् परिक्लिष्टैरक्षोटैः सार्धमानतः॥

मान्याः! एवं कालिदासः पूर्वस्यां दक्षिणस्यां प्रतिच्यामुदिच्याञ्च यथायथम् भारतस्य सीमानं एव समुद्घोषयाञ्चक्रे। यथा कालिदासः सीमानं दृढयति तथैव भारतस्यात्मानमपि पोषयति भारतीया संस्कृतिरेव भारतस्यात्मा। अत एव कालिदासः प्रतिपदं संस्कृतिमेव पुष्णाति। तस्य सर्वेऽपि नायकाः धर्मपरिपाटीपालनपरायणाः संस्कृतिप्रसारकुशलाः कर्मकाण्डप्रकाण्डपण्डिताः उदात्तभावविभूषिताश्च सन्ति। तेषां जीवने सत्यपि भाषा–विचार–साम्यमेव विलोक्यते—

वर्तमानास्वपि बहुविधासु वेषपरम्परासु स्वभावगतशालीनता तु एकैव विराजते प्रवर्तमानेष्वपि। बहुविधेषु उत्सवप्रकारेषु अतिथिनां सत्कृतिः एकरूपतामेवाकलयति॥

श्रीमन्तः! कालिदासोऽयं कविश्वरः वर्णव्यवस्थां आश्रमव्यवस्थां जन्ममरणव्यवस्थाञ्च सम्यक् परिपोषयन् सर्वेषामपि जीवने भारतीयसंस्कृतिरेकतामेव दर्शयति।

अन्तेऽहं स्वकीयां वाक्सरणिं संहृत्य इदमेव वच्मि, यत् कालिदास एव भारतस्य सीमानं दृढयति स एव भारतस्यात्मानं आनन्दयति, स एव गुणगणैर्भारतमाख्यापयति, स एव संस्कृतिगीतिकां गायति, स एव परम्परां परिपाति, स एव च जीवनादर्शान् दर्शयति। कालिदासस्य अखिलमपि साहित्यं भावप्रधानं विद्यते, भावास्तु हृदये वसन्ति, हार्दिकीया भावना सा एव आत्मभावना भवति। अतः कालिदासस्तु आत्मकविरस्ति। अन्तेऽहं दृढं समर्थयामि सत्यापयामि च यत्—

भारतस्यैकमात्मानं सीमानं च यथायथम्।
न कालिदासादपरः कविर्दर्शयतेतराम्॥ इति जयतु भारतिः॥

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारी का यज्ञाधिकार

—डॉ० सत्यव्रत 'राजेश'
वेद विभाग, गुरुकुल कांगड़ी, विश्वविद्यालय

नारी समाज का भूषण है। वही मानव की आदिगुरु तथा पथप्रदर्शिका है, मानव के निर्माण में जिन तीन सत्ताओं का सर्वाधिक योगदान है, उनमें माता का नाम सर्व प्रथम आता है। 'मातृमान्-पितृमानाचार्यवान्' की श्रृंखला में सर्व प्रथम स्थान माता का ही है, वेद नारी को उच्चासन पर आरूढ़ करता है, किन्तु मध्यकाल में कुछ आचार्य नारी को उस उच्च स्थान से नीचे पटक देते हैं। तथा उसके समान अधिकारों पर प्रतिबन्ध लगा देते हैं, उनके अनुसार स्त्री को न वेदाध्ययन का अधिकार है, न यज्ञोपवीत धारण करने का और न यज्ञ करने का। पूर्वोक्त दोनों बातों पर पुनः विचार करेंगे। इस निबन्ध में तो स्त्री के यज्ञाधिकार विषय पर वेद तथा महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य के संदर्भ में विचार किया जायेगा।

अथर्ववेद तथा स्त्री का यज्ञाधिकार—

अथर्ववेद में अनेक स्थानों पर स्त्री द्वारा गार्हपत्याग्नि-सपर्या का तथा यज्ञ करने का उल्लेख है, अथर्ववेद के एक मन्त्र में स्त्री के लिये कहा है कि "यह इस (पति) के घर में पति तथा देवरों का हित चाहने वाली, पशुओं के लिये मङ्गलमयी, सुन्दरतया यम नियमों का पालन करने वाली, उत्तम तथा नियन्त्रण करने वाली, वर्चस्विनी-शारीरिक कान्ति से युक्त, उत्तम सन्तान वाली, वीरप्रसविनी, देवर की कामना वाली तथा सबको सुख देने वाली हो और इस गार्हपत्य अग्नि की परिचर्या करे—यज्ञ करे[1] एक अन्य मन्त्र में स्पष्ट कहा गया है कि 'जब यह वधू पहले गार्हपत्य अग्नि की परिचर्या अर्थात् अग्निहोत्र कर ले तत्पश्चात् यह सास ससुर आदि को नमस्कार करे अथवा वेद का स्वाध्याय तथा बड़ों को नमस्ते करे"[2] अन्यत्र कहा है कि—"दर्भ (बल्बज) बिछाकर उस पर लाल मृगचर्म बिछावे तथा उस पर बैठ कर यह उत्तम स्थान वाली इस अग्नि की सपर्या करे—अग्निहोत्र करे,[3] एक अन्य मन्त्र में भी चर्म पर बैठकर नारी के अग्नि के पास जाने अर्थात् अग्निहोत्र करने का उल्लेख मिलता है।[4]

१—अदेवृघ्न्यपतिघ्नीहैधि, शिवा पशुभ्यः सुयमा सुवर्चाः।
प्रजावती वीरसूर्देवृकामा स्योनेममग्निं गार्हपत्यं सपर्य ॥ अथर्व० १४.२.१८

२—यदा गार्हपत्यमसपर्यैत् पूर्वमग्निं वधूरियम्।
अधा सरस्वत्यै नारि पितृभ्यश्च नमस्कुरु ॥ अथर्व १४.२.२०

३—उप स्तृणीहि बल्बजमधि चर्मणि रोहिते।
तत्रोपविश्य सुप्रजा इममग्निं सपर्यतु ॥ अथर्व १४.२.२३

४—आरोह चर्मोप सीदाग्निम् ॥ वही १४.२.२४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी प्रकार एक मन्त्र में कहा है–"इस माता की गोद से नाना आकृति तथा गुणों वाले पशु अर्थात् सन्तानें विविध स्थिति को प्राप्त करें, उत्तम मङ्गलस्वरूप यह वधू इस अग्नि के समीप बैठे अर्थात् अग्निहोत्र करे,[1] अथर्ववेद तो यहां तक कहता है कि—पत्नी जो पत्नी रूप में दिखाई देती है वह तभी, जब वह यज्ञ करती हो।[2]

महर्षि दयानन्द का यजुर्वेदभाष्य तथा स्त्री का यज्ञाधिकार—

महर्षि दयानन्द जगती के नवजीवन दाता थे, उन्होंने समाज की गली सड़ी मान्यताओं को विध्वंस करके उसके ऊपर वैदिक समाज का भव्य भवन निर्माण किया,वे नारी जाति के समानाधिकार के पोषक थे। सामाजिक स्थिति में भी वे नारी के–यज्ञाधिकार का उल्लेख अपने वेदभाष्य में अनेकों स्थानों पर करते हैं, यजुर्वेदभाष्य में उन्होंने 'होत्राः' का अर्थ 'हवनकर्मानुष्ठात्र्यः' अर्थात् हवन के कार्य का अनुष्ठान करने वाली कहा है तथा ब्रह्मचारिणी कन्या को उपदेश दिया है कि—'तू भी हमारी भांति अपने सुख देने वाले पति के निकट रहने वाली और अग्निहोत्र आदि का अनुसरण करने वाली हो।[3]

इसके भावार्थ में इसी तथ्य का स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है—"जैसे अपने पति की सेवा करती हुई, उसके समीप रहने वाली पतिव्रता गुरुपत्नी अग्निहोत्रादि कर्मों में स्थिरबुद्धि रखती है, वैसे विवाह के अनन्तर ब्रह्मचारिणी कन्याओं और ब्रह्मचारियों को परस्पर बर्तना चाहिये"[4]

एक स्थान पर सभाध्यक्षों की पत्नी के कृत्यों पर विचार करते हुए कहा है—'हे विद्यायुक्त स्त्रियों! तुम विद्युत् के सदृश मेघ की वर्षा के तुल्य सुखदायक की गति तुल्य चलने वाली,धन की वृद्धि करने वाली तथा यज्ञ में सहाय देने वाली हो।[5]

यजुर्वेदभाष्य में एक स्थल पर 'पत्नीवन्'[6] पद आया है,जिसका अर्थ है "प्रशस्त यज्ञ सम्बन्धिनी पत्नी वाला" तथा 'पत्नीवतः[7] का अर्थ भी ऐसा ही किया है।

१–वि तिष्ठन्तामस्या मातुरुपस्थान्नानारूपा पशवो जायमानाः।
सुमङ्गल्युपसीदेममग्निम्० ॥ अथर्व० १४.२.२५ ॥

२–पत्नी यद् दृश्यते पत्नी यक्ष्यमाणा ॥ वही २०.१३५.५ ॥

३–द्र०, यजु० ६.२५ अन्वय ॥

४–वही ६.२५ का भावार्थ।

५–वही ६.३४ अन्वय।

६–पत्नीवन्—प्रशस्ता यज्ञसम्बन्धिनी पत्नी यस्य तत्सम्बुद्धौ, ८.१० यजु० ॥

७–प्रशस्ता पत्नी यज्ञसम्बन्धिनी तद्वतोऽयम् ॥ यजु० १८.२० ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्री शिक्षा विषय पर प्रकाश डालते हुए एक मन्त्र में विदुषी स्त्री अन्य स्त्रियों को शिक्षा देती हुई कहती है—"हे स्त्रियो ! जैसे सुशिक्षा को प्राप्त हुई वाणियों को प्रेरणा करने वाली, शुद्ध बुद्धियों को अच्छे प्रकार ज्ञापन करती हुई उत्तम विज्ञान से युक्त हुई मैं यज्ञ को धारण करती हूँ वैसे यह यज्ञ तुमको भी करना चाहिये ।[1]

इस प्रकार महर्षि दयानन्द का यजुर्वेदभाष्य स्त्री को यज्ञ करने का अधिकार देता है तथा वे स्त्रियां अन्य स्त्रियों को यज्ञविज्ञान की शिक्षा भी देती हैं। ऋग्वेद ने तो स्त्री को यज्ञ की ब्रह्मा बनने का अधिकार भी दिया है ।[2]

गोभिल–गृह्यसूत्र में स्त्री का यज्ञाधिकार—

गोभिल गृह्यसूत्र में प्रातः सायंकालीन यज्ञ की विधि का निर्देश करके कहा है कि इसके बाद अर्थात् प्रथम बार यज्ञ करने के पश्चात् आजीवन या अवमृथ स्नान तक प्रतिदिन प्रातः सायं यज्ञ करे अथवा करवाये,[3] यहां यज्ञ की प्रतिनिधि बनकर यज्ञ कौन करे, यह बतलाते हुए कहा है कि—चाहे दोनों समय गृह्याग्नि में पत्नी ही यज्ञ करे, क्योंकि पत्नी को गृहा कहते हैं तथा यह अग्नि भी गृह्याग्नि है । अतः गृहा (पत्नी) ही गृह्याग्नि में होम करे।[4]

संस्कार–विधि में स्त्री के यज्ञ करने का विधान—

महर्षि दयानन्द—संस्कारविधि के गृहाश्रमप्रकरण में स्त्री पुरुष दोनों को समान रूप से यज्ञ का अधिकारी मानते हुए लिखते हैं—"जैसे सायं प्रातः दोनों सन्धि वेलाओं में सन्ध्योपासन करें, इसी प्रकार दोनों स्त्री पुरुष अग्निहोत्र भी दोनों समय में नित्य किया करें", इस पर टिप्पणी देते हुए महर्षि लिखते हैं—"किसी विशेष कारण से स्त्री वा पुरुष अग्निहोत्र के समय दोनों साथ उपस्थित न हो सकें तो एक ही स्त्री या पुरुष दोनों की ओर का कृत्य कर लेवें अर्थात् एक-एक मन्त्र को दो-दो बार के दो-दो आहुति करें ।[5]

यहां महर्षि दयानन्द गृहस्थ–स्त्री–पुरुषों को नित्य उभयकाल यज्ञ का विधान करते हैं तथा यदि दोनों में से एक न हो तो जहां पुरुष को स्त्री द्वारा दी जाने वाली आहुति देने का विधान

१–हे स्त्रियो यथा सूनृतानां चोदयित्री सुमतीनां चेतन्ती सरस्वती सत्यहं यज्ञं दधे तथायं युष्माभि–रप्यनुष्ठेयः ।। यजु २०.८५ अन्वय ।

२–स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ।। ऋ ८.३३.१९

३–एवमत ऊर्ध्वं गृह्येऽग्नौ जुहुयाद्वा द्वावयेद्वा ऽऽजीवितावमृथात् ।। गो गृ० सू० १.३.१३

४–कामं गृह्येऽग्नौ पत्नी जुहुयात् सायं प्रातहोमौ, गृहाः पत्नी गृह्य एषोऽग्निर्भवतीति ।। वही १.३.१५ ।

५–द्र० सं० वि० गृ० प्र० पृ० २६६ (अथाग्निहोत्रम्)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया है,वहां यदि पुरुष उपस्थित न हो तो अकेली स्त्री ही को अपनी तथा अपने पति द्वारा दी जाने वाली आहुतियां देने का स्पष्ट निर्देश करते हैं।

स्त्री-यज्ञ और रामायण—

रामायण हमारी सांस्कृतिक धरोहर का समुज्ज्वल इतिहास है, उसमें परस्पर व्यवहार का जैसा सुन्दर चित्रण मिलता है वह उसकी अपनी ही विशिष्टता है। रामायण के अध्ययन से भी यह सिद्ध होता है कि स्त्रियों को यज्ञ करने का अधिकार था तथा वे यज्ञ किया करती थीं। अयोध्याकाण्ड के बीसवें अध्याय में जब राम वनवास की आज्ञा लेने माता कौशल्या के पास गए तब वह यज्ञ कर रही थीं, इसका चित्रण करते हुए वाल्मीकि लिखते हैं—

वह (कौशल्या) रेशमी वस्त्र पहन कर बड़ी प्रसन्नता के साथ निरन्तर व्रत परायण होकर मङ्गलकृत्य पूर्ण करने के पश्चात् मन्त्रोच्चारण पूर्वक उस समय अग्नि में आहुति दे रही थी[1]।

उसी समय श्री राम ने माता के शुभ अन्तःपुर में प्रवेश करके वहां माता को देखा, वे अग्नि में हवन कर रही थीं[2]।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वेद स्त्रियों को यज्ञ करने का विधान करते हैं। वेद का तो स्पष्ट सन्देश है कि—"पञ्चजना मम होत्रं जुषध्वम्" अर्थात् मानव मात्र मेरे यज्ञ को करे, निघण्टु में पञ्चजना मानव मात्र के नाम के लिये प्रयुक्त हुआ है, जिसका अर्थ है मानव मात्र,[3] चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, उसे यज्ञ करने का पूर्ण अधिकार है। इससे स्पष्ट है कि स्त्रियों को भी यज्ञ का पुरुषों की भांति ही अधिकार है।

□

१—सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यंव्रतपरायणा।
अग्निं जुहोति स्म तदा मन्त्रवत् कृतमङ्गला॥ वा० रा० अयो० सर्ग २०, श्लोक १५

२—प्रविश्यतु तदा रामो मातुरन्तःपुरं शुभम्।
ददर्श मातरं तत्र हावयन्तीं हुताशनम्॥ वही १६, सम्वत् २०३३, पृ० २४४

३—निरुक्त ३।८।१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन भारत में वर्ण व्यवस्था

—भारत भूषण शर्मा
एम० ए० द्वितीय वर्ष
प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व

मैकाइवर तथा कूलें आदि पाश्चात्य समाज शास्त्रियों ने अपने विस्तृत अध्ययन के आधार पर बतलाया है कि सामाजिक वर्ग विश्व के सभी समाजों में किसी न किसी रूप में अवश्य पाये जाते हैं। कहीं पर सामाजिक वर्गों के निर्माण का आधार जन्म होता है, तो कहीं पर धन, इतना निश्चित है कि सामाजिक वर्ग प्रत्येक समाज में पाये अवश्य जाते हैं। मनुष्य की प्रवृत्तियों एवं व्यवसायों के आधार पर उन्हें विभिन्न वर्गों में बांटने के प्रयत्न आदि काल से ही होते रहे हैं। इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध समाज शास्त्री एच. जी. वेल्स का कथन है कि मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों के आधार पर समाज विभाजन से समाज का श्रेष्ठ विकास होता है तथा उसकी शक्ति बढ़ती है। किंग्सले डेविस तथा मूरे ने सामाजिक वर्गों का विश्लेषण करते हुये यह बतलाया है कि समाज अपनी स्थिरता एवं उन्नति के लिये अपने व्यक्तियों को उनकी योग्यता एवं प्रशिक्षण को ध्यान में रखते हुए विभिन्न वर्गों में बांट देता है।

प्राचीन भारतीय विचारकों ने भी मनुष्य की मनोवैज्ञानिक प्रवत्तियों को ध्यान में रखते हुए सामाजिक स्तरीकरण की एक सुनियोजित नीति अपनायी तथा कार्यात्मक दृष्टि से समाज को चार वर्णों में विभाजित किया। ये वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र हैं, इसी को वर्ण व्यवस्था का नाम दिया गया है।

वर्ण व्यवस्था हिन्दू सामाजिक संगठन के मौलिक तत्त्व के रूप में पायी जाती है। मनुष्य की चार स्वाभाविक इच्छाएं होती हैं यथा ज्ञान, रक्षा, जीविका तथा सेवा। सम्भवतः इन्हीं इच्छाओं को पूर्ति हेतु प्राचीन हिन्दू विचारकों ने समाज को चार वर्णों में विभाजित किया जिससे प्रत्येक वर्ण अपने कार्य को पूर्ण करता हुआ समाज की उन्नति एवं विकास में योग देता रहे।

वर्ण शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'वृ वरणे' धातु से हुई जिसका अर्थ है वरण करना अथवा चुनना। इस प्रकार मनुष्य अपने कार्य एवं स्वभाव के आधार पर जिस व्यवसाय का चुनाव करता है उसे वर्ण कहा जा सकता है।

ऋग्वेद में सर्वप्रथम वर्ण शब्द का प्रयोग गोरे (आर्य) तथा काले (अनार्य) रंग के मनुष्यों के लिये किया गया है। डा० घूरिये का कथन है कि आर्यों ने भारत के मूल निवासियों को पराजित कर उन्हें अपना दास बना लिया तथा अपने एवं उनके बीच के अन्तर को स्पष्ट करने के लिये ही (आर्य)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गौर वर्ण तथा अनार्य कृष्ण वर्ण शब्द का प्रयोग किया। श्री पान्डूरंग वामन काणे की यह मान्यता है कि प्रारम्भ में गौर वर्ण का प्रयोग आर्यों के लिये तथा कृष्ण वर्ण का प्रयोग दास दस्युओं के लिये किया गया। समय के साथ-साथ जैसे-जैसे आर्यों की संख्या में वृद्धि होती गयी उनके कार्यों में भी भिन्नता आती गयी और गौर वर्ण अर्थात् अपने-अपने गुणों के आधार पर तीन वर्णों में विभक्त हो गये यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य, चूंकि ये तीनों वर्ण एक ही मूल से सम्बन्धित थे अतः प्रारम्भ में इनमें परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध खान-पान एवं सामाजिक सम्पर्क का उल्लेख वेदों में भी मिलता है। द्रविड़ जो कि यहां के मूल निवासी थे उन्हें शूद्र वर्ण का कहा गया। इस प्रकार जिन व्यक्तियों के गुण एवं कर्म एक से थे, वे एक वर्ण के माने जाते थे।

ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में वर्ण व्यवस्था को उत्पत्ति के सम्बन्ध में निम्न रूपेण उल्लेख है—

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहु राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ॥ ऋ० १०.९०.१२ ॥

इस श्लोक में विराट् पुरुष की कल्पना तथा उसके शरीर के विभिन्न अंगों से चारों वर्ण के मनुष्यों की उत्पत्ति से स्पष्ट होता है कि वर्ण व्यवस्था सिद्धान्त रूप में अति प्राचीन है, तथा चारों वर्णों में भिन्न-भिन्न स्वभाव गत विशेषताएं हैं लेकिन एक ही समाज रूपी शरीर के अलग-अलग होने के कारण उनमें परस्पर अन्तर निर्भरता भी दिखलायी पड़ती है।

गीता में श्री कृष्ण जी ने कहा है :—

"चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म-विभागतः" अर्थात् गुण एवं कर्मों के आधार पर चारों वर्णों का विभाजन मैंने किया है।

महाभारत में ही एक अन्य स्थल पर वर्ण व्यवस्था के सम्बन्ध में निम्न श्लोक मिलता है—

"एक वर्णमिदं पूर्वं विश्वमासीद् युधिष्ठिर।
कर्म-क्रिया विभेदेन चातुर्वर्ण्यं प्रतिष्ठितम् ॥
न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्रह्ममिदं जगत्।
ब्राह्मणः पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम् ॥"

अर्थात् श्री कृष्ण युधिष्ठिर को बताते है कि—हे युधिष्ठिर इस जगत् में पहले एक ही ब्राह्मण वर्ण था, गुण कर्म के आधार पर बाद में चार वर्ण बने, वर्णों में कोई भी वर्ण किसी प्रकार की विशिष्टता नहीं रखता क्योंकि यह सम्पूर्ण जगत् ब्रह्ममय है। पहले सबको ब्रह्मा ने ही उत्पन्न किया बाद में कर्मों के भेद से वर्णों की उत्पत्ति हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रारम्भिक काल में वर्ण व्यवस्था का आधार क्या था इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध विचारक डॉ० राधाकृष्णन् का कथन है कि इस व्यवस्था में वंशानुक्रमणीय क्षमताओं का महत्त्व अवश्य था, परन्तु फिर भी मुख्यतया यह व्यवस्था गुण तथा कर्मों पर आधारित थी। अपने कथन की पुष्टि में उन्होंने महाभारत एवं इससे पूर्वकाल के अनेक ऐसे उद्धरण प्रस्तुत किये जिनसे इस तथ्य को बल मिलता है कि उस काल में वर्ण परिवर्तन सम्भव था। विश्वामित्र, राजा जनक, महामुनि व्यास वाल्मीकि अजामिल आदि अपने गुण तथा कर्मों के आधार पर अपना वर्ण परिवर्तित कर पाये थे। भागवत में भी धष्ट नामक एक क्षत्रिय जाति का उल्लेख मिलता है जो कि अपने कर्मों के आधार पर ब्राह्मण बन गयी थी। के० एम० पाणिक्कर ने भी वर्ण व्यवस्था का आधार गुण कर्म को ही स्वीकार किया है।

स्मृति के अनुसार जन्म के समय व्यक्ति को शूद्र मानना तथा उपनयन व अन्य अनेक संस्कारों द्वारा शूद्र होने पर उसे द्विज—ब्राह्मण क्षत्रिय या वैश्य के रूप में प्रतिष्ठा प्रदान करना भी यही स्पष्ट करता है कि वर्ण सदस्यता के निर्धारण में कर्म का महत्त्व प्रमुख था। यदि वर्ण का आधार जन्म होता तो यह सब सम्भव नहीं हो सकता था। इसी प्रकार डॉ० जी० एस० घूरिये ने भी गुण एवं कर्म को ही वर्ण निर्धारण का आधार कहा है।

इस प्रकार विदित होता है कि महाभारत काल तक वर्ण निर्धारण का आधार गुण एवं कर्म को माना गया, धीरे-धीरे स्मृतिकारों का झुकाव इस व्यवस्था को कठोर बनाने की ओर होता गया तथा उन्होंने ऋग्वेद के पुरुष - सूक्त की व्याख्या अपने ही तरीके से करना प्रारम्भ कर दिया एवं वर्ण व्यवस्था को एक ईश्वरीय व्याख्या के रूप में प्रतिष्ठापित कर दिया, फलस्वरूप गुण एवं कर्म पर आधारित उदार वर्ण व्यवस्था में कठोरता आती गयी एवं व्यक्ति के लिये वर्ण परिवर्तन सामान्यतः सम्भव नहीं रह गया।

विभिन्न धर्मग्रन्थों में दिये गये अलग-अलग वर्णों के कर्त्तव्यों या उनके वर्ण धर्मों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्ण व्यवस्था श्रम विभाजन की एक ऐसी सुनियोजित व्यवस्था है जिसके द्वारा सभी प्रकार के कार्यों को विशेष ज्ञान के आधार पर पूरा करने का प्रयत्न किया जाता है मनुस्मृति में चारों वर्णों के धर्मों का उल्लेख अलग-अलग दिया गया है ।

(i) **ब्राह्मणों का धर्म**—वेदाभ्यासो हि-विप्रस्य तपः परिमिहोच्यते।
अध्यापनमध्ययन - यजनं याजनं तथा ।
दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्राह्मणाय कल्पयत् ॥

(ii) **क्षत्रियों का धर्म**—प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च ।
विषयेष्व प्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iii) **वैश्यों का धर्म**—पशूनां रक्षणां दानमिज्याध्ययनमेव च ।
वणिको कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च ।।

(iv) **शूद्रों का धर्म**—एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुकर्मसमादिशत् ।।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रुषामनसूयया ।।

वर्ण धर्म का पालन करने वाले व्यक्तियों को यह भी विश्वास दिलाया गया कि जो व्यक्ति अपने-अपने वर्ण धर्म का पालन करेंगे, उन्हें अगले जन्म में उच्च सामाजिक स्थिति प्राप्त होगी। इसी वर्ण व्यवस्था ने समाज को विभिन्न खण्डों में बांटने के स्थान पर संगठित बनाये रखने का प्रयास किया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत व्यक्ति को अपने गुण कर्म के आधार पर वर्ण परिवर्तन का सुअवसर भो दिया गया।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि हमारी वर्ण व्यवस्था समता की नीति पर आधारित थी। इसमें समाज का चार वर्णों के रूप में कार्यात्मक-विभाजन अवश्य रहा, लेकिन प्रत्येक वर्ण की सेवाओं को सामाजिक दृष्टि से समान महत्त्व दिया गया, इसी व्यवस्था का पालन कर विभिन्न प्रजातीय समूह रक्त की शुद्धता को बनाये रख सके, साथ ही अपनी सांस्कृतिक विशेषता को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित करते रहे। वर्ण व्यवस्था का इस दृष्टि से भी महत्त्व है कि इसने समाज में शक्ति सन्तुलन को बनाये रखने में योग दिया।

प्रारम्भ में वर्ण व्यवस्था के गुणों का लाभ समाज को मिलता रहा लेकिन जब प्रत्येक वर्ण सैकडों हजारों जातियों एवं उपजातियों में विभक्त हो गया तो कालान्तर में समाज को अनेक हानियां भी उठानी पडीं, सम्पूर्ण हिन्दू समाज अगणित जातियों में बँट गया। लोगों की सामुदायिकता की भावना अत्यन्त संकुचित हो गयी जिससे राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बाधाएं उपस्थित हो गयीं फलस्वरूप विदेशी आक्रमणकारियों ने इसका भरपूर लाभ लेकर यहां सैकड़ों वर्षों तक शासन किया। इसी वर्ण व्यवस्था ने आगे चलकर अस्पृश्यता को भी जन्म दिया, इससे समाज के एक बहुत बड़े वर्ण शूद्रों को विकास के समुचित अवसर प्राप्त नहीं हो सके और उन्हें अन्य वर्णों की सेवा करके ही अपनी जीविका चलानी पड़ी, लेकिन यहां पर यह बताना अति आवश्यक है कि प्रारम्भिक वर्ण व्यवस्था में कोई दोष नहीं था बल्कि कालान्तर में विकसित जाति व्यवस्था ही इस हेतु उत्तरदायी है।

वर्ण व्यवस्था ने वास्तव में समाज को अनेक संघर्षों से बचाया है तथा विभिन्न वर्णों को धर्मानुसार अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन करने हेतु प्रेरित किया। लेकिन आज वर्ण व्यवस्था एक सैद्धान्तिक व्यवस्था बन गई है और अब इसका स्थान जाति व्यवस्था ने ले लिया है। आज हमें उसी प्राचीन वर्ण व्यवस्था को प्रतिष्ठापित करने की आवश्यकता है जिसके अन्तर्गत मनुष्य अपने गुण कर्म के आधार पर अपने व्यवसाय को चुन सके। साथ ही समाज में सबको उन्नति के अवसर प्राप्त हों। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निपात

—डा० राकेश शास्त्री
संस्कृत-विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

चार प्रकार के पद विभाग के अन्तिम भाग निपात पर विचार करने से पूर्व विचारणीय प्रश्न यह है कि 'पद' शब्द से क्या तात्पर्य है। प्राचीन आचार्यों ने इस विषय पर अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। 'पद' शब्द के विषय में सर्व प्रथम ऐन्द्र व्याकरण में उल्लेख मिलता है। यद्यपि आज ऐन्द्र व्याकरण उपलब्ध नहीं होता ?[1] तथापि ऐन्द्र व्याकरण के मत का विभिन्न ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है।[2] उसके अनुसार अर्थ बोधक अक्षर समुदाय को पद कहा जाता है।

यह विस्मय का विषय है कि आचार्य यास्क ने पद विभाग तो किया किन्तु पद की परिभाषा नहीं की। वाजसनेयी प्रातिशाख्य भाष्य में उव्वट ने 'अर्थवान्' को ही पद की संज्ञा दी है।[4] पाणिनि ने सुबन्त और तिङन्त प्रत्यय युक्त शब्दों को ही पद की संज्ञा दी है।[5] उन्होंने निपातों को भी पद स्वीकार किया है, अतः उनके आगे विभक्तियों का लोप करके उनका समावेश अव्यय-संज्ञा में किया है।[6]

वाजसनेयी प्रातिशाख्य में अक्षर समुदाय को पद कहा गया है।[7] कौटिल्य ने भी अर्थशास्त्र में पद की परिभाषा की है।[8] वे भी वाजसनेयी प्रातिशाख्यकार के मत से सहमत हैं। न्याय सूत्र में विभक्ति युक्त अक्षर समूह को पद स्वीकार किया गया है।[9]

वस्तुतः 'अर्थवान् वर्ण-समूह' को ही पद संज्ञा देना उचित प्रतीत होता है, क्योंकि यदि अर्थ रहित अथवा अनर्थक को भी पद कहा जायेगा तो लक्षण में अति व्याप्ति दोष आ जायेगा एवं सभी निरर्थक अक्षर समूह पद संज्ञायुक्त होंगे। अधिकांश प्राचीन आचार्य पद की इसी परिभाषा से सहमत हैं।

पुनः विचारणीय है कि पद का कितनी श्रेणियों में विभाजन किया जाय, प्राचीन आचार्यों ने पद विभाजन का प्रयास किया है। आचार्य यास्क ने पदों का चार श्रेणियों में विभाजन किया है नाम, आख्यात, उपसर्ग एवं निपात[10] आचार्य दुर्ग भी यास्ककृत पद-विभाजन से सहमत प्रतीत होते हैं, क्योंकि उन्होंने अन्य मतों का स्पष्ट रूप से खण्डन किया है।[11] दुर्ग के कथन से प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में विद्वानों में पद-विभाजन के प्रश्न पर ऐकमत्य नहीं था, इस कथ्य की पुष्टि सर्वदर्शन संग्रह के कथन से भी होती है, उसमें भी विभिन्न आचार्यों के पद विभाजन के प्रश्न पर मतभेद का उल्लेख मिलता है।[12]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकांश प्राचीन ग्रन्थों में आचार्यों को पद का चतुर्धा विभाजन ही स्वीकार्य है, क्योंकि ऋक्-प्रातिशाख्य,[13] वाजसनेयी प्रातिशाख्य [14] एवं महाभाष्य[15] आदि में पदों के चतुर्धा विभाजन को मान्यता प्रदान की गयी है। इसके अतिरिक्त वाजसनेयी प्रातिशाख्य के प्रसिद्ध भाष्यकार आचार्य उव्वट को भी पदों का चतुर्धा विभाजन ही स्वीकार है।[16] यद्यपि निरुक्तकार को स्वयं भी पदों का चार श्रेणी में विभाजन स्वीकार है तथापि उन्होंने अन्य वैयाकरणों के मतों का भी इस सम्बन्ध में उल्लेख किया है।[17] आचार्य कौटिल्य भी पदों के चतुर्धा विभाजन से सहमत हैं।[18] महिमभट्ट पदों का पांच वर्गों में विभाजन करते हैं।[19] पदों के चतुर्धा विभाजन को ऋग्वेद में भी सहज ही ढूंढा जा सकता है।[20] अतः पदों का नाम, आख्यात, उपसर्ग एवं निपात चतुर्धा विभाजन ही उचित प्रतीत होता है।

पूर्व प्रतिपादित पदों के चतुर्धा विभाजन में निपातों की गणना सभी प्राचीन ग्रन्थों में की गई है। अतः निपात को एक पद विभाग के रूप में प्राचीन आचार्यों की दृष्टि में मान्यता प्राप्त है। जो आचार्य पदों को केवल दो या तीन भागों में विभक्त करते हैं, उनके मत में निपात की स्वतन्त्र रूप से स्थिति संदिग्ध है। जैसे—ऐन्द्र व्याकरण के अनुसार—केवल अर्थवान् अक्षर समूह ही पद होने से पदों का एक से अधिक श्रेणियों में विभाजन उचित प्रतीत नहीं होता, क्योंकि विभाजन का अन्य कोई आधार उपलब्ध नहीं है, जिसके आधार पर पद का विभाजन सम्भव हो। किन्तु ऐन्द्र व्याकरण के अनुयायियों के मत में निपात को अर्थ-बोधक कहा गया है क्योंकि ऐन्द्र व्याकरण के लक्षण को ही वाजसनेयी प्रातिशाख्य में स्वीकार किया गया है। जिसका भाष्य करते हुए आचार्य उव्वट से निपात की चर्चा की है।[21]

यदि वाजसनेयी प्रातिशाख्य के 'अर्थः पदम्' सूत्र पर आचार्य उव्वट द्वारा की गई व्याख्या के परिप्रेक्ष्य में ऐन्द्र व्याकरण के सूत्र की व्याख्या करे तो स्पष्ट हो जाता है कि इस सूत्र का सम्बन्ध पदों के वर्गीकरण से नहीं हैं। आचार्य कात्यायन को भी स्वयं अर्थभेद के आधार पर पद-चतुष्ट्य विभाजन स्वीकार्य है। वस्तुतः उक्त सूत्र से कात्यायन का मुख्य आशय पद के अवयव की पद संज्ञा न हो, यही रहा है। अतः कात्यायन के उक्त मत के आधार पर यह भी प्रतिपादित किया जा सकता है, कि सम्भवतः इन्द्र को भी अर्थभेद के आधार पर पदों का चतुर्धा विभाजन मान्य था। अतः ऐन्द्र-व्याकरण निपात को अर्थ बोधक मानकर पद स्वीकार करता है। इस प्रकार ऐन्द्र व्याकरण के मत में भी निपात की पद वर्ग के रूप में मान्यता की पुष्टि होती है।

पुनः प्रश्न उठता है कि जो विद्वान् विभक्ति से युक्त शब्द को ही पद स्वीकार करते हैं।[22] उनके मत में निपात को स्वतन्त्र पद वर्ग के रूप में स्वीकार किया जा सकता है ? क्योंकि निपात प्रायः विभक्ति युक्त नहीं होते। पाणिनि के मत में नाम एवं आख्यात के आगे प्रयुक्त होने वाले 'सुप्'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं 'तिङ्' प्रत्ययों के समुदाय को विभक्ति की संज्ञा दी गई है।23 अत: ऐसा प्रतीत होता है कि पाणिनि को निपात का पृथक् पद-वर्ग होना स्वीकार्य नहीं है। किन्तु वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है, क्योंकि पाणिनि ने पद की परिभाषा देने के उपरान्त निपातों की भी अव्यय-संज्ञा करके उन्हें पद वर्ग के रूप में स्वीकार किया है२४ और उनकी विभक्तियों के लोपार्थ सूत्र की रचना की है।25

न्यायसूत्र के वात्स्यायन भाष्य में भी निपातों की विभक्तियों का लोप कर उसकी पद संज्ञा स्वीकार की गई है। 26 इसके अतिरिक्त गोपथ ब्राह्मण में भी व्याकरण सम्बन्धी कुछ संज्ञाओं के वर्णन में निपात का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है।27

अत: पदों के दो वर्गों को मान्यता प्रदान करें अथवा एक ही वर्ग को स्वीकार किया जाय, दोनों स्थितियों में निपात का स्थान स्वतन्त्र पद वर्ग के रूप में निर्विवाद है। पदों का विभाजन जो आचार्य तीन या चार श्रेणियों में करते हैं उनके मत में तो निपात स्वतन्त्र पद-वर्ग के रूप में स्वीकार्य है। अत: पदों के चार वर्गों में विभाजन के औचित्य के साथ-साथ निपात की स्वतन्त्र पद वर्ग के रूप में भी पुष्टि हो जाती है।

निपात की स्वतन्त्र पद विभाग के रूप में स्थिति स्पष्ट करने के उपरान्त विचारणीय है कि निपात पद का क्या अर्थ है अथवा इसे निपात की संज्ञा क्यों दी गयी है? इस विषय में भी प्राचीन ग्रन्थों में उल्लेख प्राप्त होते हैं।

पदचतुष्टय का लक्षण28 करते हुए आचार्य यास्क ने निपात की परिभाषा की है। उन्होंने विविध अर्थों में प्रयुक्त या निपतित होने के कारण इन्हें निपात कहा है "**अथ निपाता उच्चावचेष्वर्थेषु निपतन्ति।**" निरुक्त के टीकाकार आचार्य दुर्ग ने भी निरुक्त के प्रस्तुत स्थल की व्याख्या करते हुए यास्क के मत की ही पुष्टि की है।29

ऋक् प्रातिशाख्यकार ने भी निपात का नामकरण करते हुए उसके विविध अर्थों में प्रयोग को ही प्रमुख आधार माना है।30 माधवभट्ट ऋग्वेदानुक्रमणी में निपात का अर्थ करते हुए उनके विविध अर्थों में प्रयुक्त अथवा पतित होने को ही हेतु स्वीकार करते हैं।31 वृहद् देवताकार की सम्मति में—प्रकरण के आधार पर विविध अर्थों में प्रयुक्त होने के कारण इन्हें निपात कहा जाता है। 32

अत: स्पष्ट है कि निपातों के विविध अर्थों में प्रयोग को दृष्टि में रखकर ही इन्हें निपात संज्ञा दी गयी है। ऋग्वेद में निपातों का अध्ययन करने पर भी इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है, किन्तु इसके अतिरिक्त भी निपात की कुछ परिभाषायें की गयी हैं। कुछ विद्वान् निपातों को मूल में विभक्ति-युक्त मानते हैं, पुन: कालक्रम के प्रभाव से उनकी विभक्तियों का पतन हो गया। अत: वे शब्द जिनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभक्तियां पतित हो गयीं, निपात कहे जाते हैं।[33] ऋग्वेद में अधिकांश रूप से निपात विभक्ति रहित प्रयुक्त हुए हैं। अतः यह परिभाषा भी समीचीन प्रतीत होती है।

आचार्य सायण निपात की 'निपात' संज्ञा में निपात के मंत्रों में बहुल प्रयोग को स्वीकार करते हैं अर्थात् ऐसे शब्द जिनका वेदों में अत्यधिक प्रयोग हुआ है, निपात कहे जा सकते हैं।[34] ऋग्वेद के अध्ययन से इस तथ्य की पुष्टि होती है क्योंकि एक-एक मन्त्र में छः, सात और आठ तक निपातों का प्रयोग मिलता है।[35] अतः निपात पद की यह परिभाषा भी ठीक प्रतीत होती है।

यह अत्यन्त विस्मय का विषय है कि वैदिक साहित्य में निपातों की विचित्र अर्थाभिव्यक्ति होते हुए भी कुछ प्रातिशाख्य ग्रन्थों में निपातों का पादपूरण लक्षण किया गया है।[36] किन्तु उक्त लक्षण संगत प्रतीत नहीं होता क्योंकि आचार्य यास्क ने निपातों की तीन श्रेणियों का उल्लेख करते हुए[37] पाद पूरणार्थक श्रेणी में जिन निपातों को रक्खा है[38] उन का भी ऋग्वेद में विविध अर्थों में प्रयोग हुआ है।[39] अतः निपातों का ही 'निपातः पादपूरणः' लक्षण करना समीचीन प्रतीत नहीं होता।

माधवभट्ट ने ऋग्वेदानुक्रमणी में २० निपातों को अनर्थक माना है।[40] किन्तु विवेचन करने पर हम देखते हैं कि इनमें प्रायः सभी निपात वैदिक साहित्य में विविध अर्थों में प्रयुक्त हुए हैं। माधव-भट्ट ने किस आधार पर इन निपातों को अनर्थक प्रतिपादित किया है? यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

निपातों को अनर्थक कहने का कारण सम्भवतः यह प्रतीत होता है कि कतिपय स्थलों पर निपात वेदों में किसी विशिष्ट एवं निश्चित अर्थ को प्रकट करने के लिये प्रयुक्त नहीं होते। किन्तु यदि उन स्थलों का सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन किया जाये तो वे ही निपात पूर्णतया सार्थक प्रतीत होते हैं। इस बात की पुष्टि माधवभट्ट के कथन से भी होती है क्योंकि वे स्फुट अर्थ वाले निपातों को सार्थक एवं सूक्ष्म अर्थ होने पर पूरण मानते हैं।[41]

ऐसी स्थिति में जबकि मन्त्रों के पदों का व्यतिक्रम भी स्वीकार न किया जा सके, एक ही मन्त्र में प्रयुक्त चार अथवा पांच निपात अनर्थक अथवा 'पदपूरण' हों और निपातों का यह लक्षण किया जाए। यह बात युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होती।

अन्त में संक्षेप में कहा जा सकता है कि निपात भाषा का एक महत्त्वपूर्ण एवं सार्थक अंग है साथ ही वैदिक साहित्य में इनकी विविध अर्थाभिव्यक्ति के कारण इसका निपात नाम पड़ा। □

---

१ संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास, युधिष्ठिर मीमांसक, पृ० ६०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ निरुक्त के व्याख्याकार आचार्य दुर्ग एवं कलाप चन्द्र ने उनके मत का उल्लेख किया है।

३ अर्थः पदमेन्द्राणामिति –निरुक्त दुर्गवृत्ति १।१।८

अर्थः पदमाहुरेन्द्राः – सुषेण विद्याभूषण, कलाप चन्द्र, संधि २०

४ अर्थाभिधायि पदम् पद्यते गम्यते ज्ञायतेऽर्थोऽनेनेति पदम् ३।२।

५ सुप्तिङन्त पदम् १।४।१४

६ स्वरादिनिपातमव्ययम् १।१।३७। अव्ययादाप्सुपः २।४।८२

७ अक्षरसमुदायः पदम् ८।४६।४९।

८ वर्ण संघातः पदम्–२।१०।२८

९ ते विभक्त्यन्ताः पदम् २।२।५७

विभक्त्यन्तं पदमाहुरापिशलीयाः–सुषेण विद्याभूषण, कलापचन्द्र, संधि–२०

१० चत्वारि पदजातानि नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्च–निरुक्त १।१।८

११ नैक पद जातम्, यथार्थः पदमेन्द्राणामिति । नापि द्वे यथा सुबन्तं तिङन्तं च । नापि त्रीणि निपातोपसर्गा वेकतः कृत्वा । नापि पञ्च षड् वा यथा गतिकर्मप्रवचनीयभेदेनेति निरुक्त दुर्ग टीका १।१।८।

१२ द्विधा कैश्चित् पदं भिन्नं चतुर्धा पञ्चधापि वा। सर्वदर्शन संग्रह–पृ० १४०

१३ नामाख्यातमुपसर्गो निपातः, चत्वार्याहुः पदजातानि। ऋक् प्रातिशाख्य १२।१७

१४ अक्षर समुदायः पदं तच्चतुर्धा, नामाख्यातोपसर्गनिपाताः। वाजसनेयी प्रातिशाख्य

१५ चत्वारि पद जातानि नामाख्यातोपसर्गनिपाताश्च। महाभाष्य १।१।१

१६ उपरिष्टादर्थभेदनिबन्धनं पदचतुष्टयं वक्ष्यति नामाख्यातोपसर्गनिपाताश्चेति वाजसनेयी प्रातिशाख्य-उ० भा० ३।२

१७ कतमानि तानि चत्वारि पदानि। नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्चेति वैयाकरणाः। निरुक्त १३।९

१८ वर्णसंघात पदम् तच्चतुर्विधम्। नामाख्यातोपसर्गनिपातश्चेति। कौ० अर्थ० २।१०।२८

१९ तत्र पदमनेकप्रकारनामाख्यातोपसर्गनिपातकर्म प्रवचनीयभेदात्। व्यक्ति विवेक-महिमभट्ट-पृ०

२० चत्वारि वाक् परिमिता पदानि-ऋ० १।१६४।४५

चत्वारि शृंगा त्रयोऽस्य पादाः–वही ४।५८।३

२१ वाजसनेयी प्रातिशाख्य उव्वट भाष्य-३।२

२२ न्यायसूत्र-२।२।५७, आपिशलीय व्याकरण-सुषेण विद्याभूषण-संधि २०

२३ विभक्तिश्च-अष्टाध्यायी - १।४।१०४

२४ स्वरादिनिपातमव्ययम्-१।१।३७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५ अव्ययादाप्सुपः २।४।८२
२६ न्यायसूत्र—वात्स्यायन-भाष्य २।२।५७
२७ गोपथ ब्राह्मण-१।२७
२८ निरूक्त १।१
२९ उच्चावचेष्वर्थेषु निपतन्तीति निपाताः। निरुक्त दुर्गटीका १।४
३० निपातानामार्थवशान्निपातनात्, ऋक् प्राति०-१२।१५
३१ उच्चावचेषु निपततामर्थेष्वेषु यथायथम्-ऋग्वेदानुक्रमणी ३।१।२७
३२ उच्चावचेषु चार्थेषु निपाताः समुदाहृताः।
वशात् प्रकरणस्यैते निपात्यन्ते पदे-पदे ॥वृहद्देवता-२।९३
३३ निपातार्थ-निर्णयः डा० हरिश्चन्द्रमणि त्रिपाठी
३४ नितरां पातः इति निपातः-ऋग्वेद सायण भाष्य ४।५५।३
३५ ऋग्वेद-१।११४।८, १०, १८०।७,
३६ निपातः पादपूरणः। ऋक् प्राप्ति० १२।८।७०७
निपातस्तु अर्थविशेषाभावात् पादपूरणः। वा० प्रा० अनन्त भाष्य ८।५०
३७ अप्युपमार्थेऽपि कर्मोपसंग्रहार्थेऽपि पदपूरणाः निरुक्त १।४।३
३८ अथ ये प्रवृत्तेऽर्थेक्षऽमितारेषु ग्रन्थेषु वाक्यपूरणा आगच्छन्ति,
पदपूरणास्ते मिताक्षरेष्वनर्थकाः कमीमिद्विति-निरुक्त १।९।३
३९ ऋग्वेद के निपात (निश्चयार्थक): एक अध्ययन-लेखककृत शोधप्रबन्ध,पृ० ८२
४० न वै किल नु नामाथखल्विदादधसीमुकम्।
उत नूनमिवेङ्घस्मचिद्धचाः स्युरनर्थकाः। ऋग्वेदानुक्रमणी-३।१।१४
४१ स्फुटत्वोद्ग्रहणादिश्च क्वचित् सूक्ष्मः क्वचित् स्फुटः।
यत्र स्फुटस्तदा सार्थाः सूक्ष्मे स्युः पूरणा इति॥ वही ३।१।१८

मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।

(सत्यार्थ प्रकाश—भूमिका)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपनिधि

—प्रो० वेदप्रकाश शास्त्री
संस्कृत विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

समग्र मानव जाति के सम्पूर्ण अभ्युदय एवं विकास को ध्यान में रखकर ही परमात्मा की कृपा से उसी के निःश्वास रूप वेदों का ज्ञान आदि काल में ऋषियों ने श्रुति के रूप में दिया। इन्हीं श्रुतियों के व्यापक ज्ञान को मानवीय व्यवस्था के रूप में स्मृतिकारों ने अपने-अपने स्मृति ग्रन्थों में उपनिबद्ध किया। मानव जीवन के सभी पक्षों को अभिलक्षित कर स्मृतियों में विशेष व्यवस्था प्रदान की गयी है। सम्पूर्ण मानव जीवन प्रसूतावस्था से लेकर मृत्यु-पर्यन्त सामयिक नित्य एवं नैमित्तिक नियमोपनियमों में आबद्ध है उसकी प्रत्येक चेष्टा सुनिश्चित है, सुपर्यालोचित है, अत एव शास्त्रीय मर्यादा से उसका औचित्य एवं अनौचित्य सम्बद्ध है। मनुष्य संसार में विविध प्रकार के व्यवहार करता है उन्हीं व्यवहारों में वस्तु का आदान प्रदान भी अपना विशेष स्थान रखता है। कभी-कभी मानव अपनी बहुमूल्य वस्तु को किसी अन्य व्यक्ति के पास कुछ समय के लिये सुरक्षा की दृष्टि से रख देता है तथा समय आने पर वह पुनः वस्तु को प्राप्त कर लेता है। स्मृति ग्रन्थों में इस प्रकार के वस्तु व्यवहार को ध्यान में रखते हुए एक विशेष व्यवस्था दी गयी है। उसी व्यवस्था के अन्तर्गत ऐसी वस्तु की जो कुछ समय के लिये धरोहर के रूप में किसी के समीप स्थापित की जाति हो स्मृतिकार ने उसको उपनिधि के नाम से व्यवहृत किया है। इससे यह ज्ञात होता है कि वस्तु को धरोहर के रूप में रखने की परम्परा मानव जीवन के साथ अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है, इसीलिये स्मृति ग्रन्थों में उसको नियमित राज-व्यवस्था के साथ जोड़ दिया है। महर्षि याज्ञवल्क्य अपनी स्मृति में एक प्रकरण उपनिधि के नाम से लिखते हैं जिसमें उन्होंने उपनिधि का विशेष व्याख्यान समुचित एवं पूर्ण व्यवस्था के साथ किया है। सर्वप्रथम उपनिधि का लक्षण निम्न प्रकार किया गया है—

वासनस्थमनाख्याय हस्तेऽन्यस्य यदर्प्यते ।
द्रव्यं तदौपनिधिकं प्रतिदेयं तथैव तत् ।।या०स्मृ० ६५ ।।

अर्थात् जब कोई व्यक्ति द्रव्य को (स्वण रजतादि) किसी वस्त्रादि से आच्छादित करके अन्य व्यक्ति के हाथ में समर्पित करता है तथा उसको उसी प्रकार से यथा समय ग्रहण करने की इच्छा करता है तब उस द्रव्य को उपनिधि के नाम से कहा जाता है। यहां पर "प्रतिदेयं तथैव तत्" पदों का प्रयोग विशेष अभिप्राय के साथ किया गया है। इस आशय को याज्ञवल्क्य स्मृति की मिताक्षरा टीका में इस प्रकार देखा जा सकता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यस्मिन्स्थापितं तेन यथैव पूर्वमुद्रादिचिन्हितम् ।
समर्पितं तथैव स्थापकाय प्रतिदेयं प्रत्यर्पणीयम् ।।

उपनिधि विषयक उक्त विचार को श्री नारद जी ने भी अपने स्मृति ग्रन्थ में व्यवस्थित करते हुए कुछ विशेषीकरण के साथ उपनिबद्ध किया है, नारदीय स्मृति में धरोहर के रूप में स्थापित द्रव्य को दो भागों में विभक्त किया है । प्रथम उपनिधि तथा द्वितीय निक्षेप। इन दोनों का परस्पर स्वरूप भेद दर्शाते हुए दो श्लोक हैं—

अन्य द्रव्य व्यवहितं द्रव्यमव्याकृतं च यत् ।
निक्षिप्यते परगृहे तदौपनिधिकं स्मृतम् ।।

असंख्यातमविज्ञातं समुद्रं यन्निधीयते ।
तं जानीयादुपनिधिं निक्षेपं गणितं विदुः ।। ना० स्मृति ।।

उक्त दो श्लोकों को देखकर कहा जा सकता है कि उपनिधि और निक्षेप में अन्तर अवश्य है । अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि मनुष्य स्व द्रव्य को किस व्यक्ति के पास निक्षिप्त करे इसका समाधान हमें मनुस्मृति में प्राप्त होता है, क्योंकि निक्षिप्त वस्तु कितनी मूल्यवान् है इसका वेदन लिखित अथवा वाचिक रूप में कहीं भी नहीं होता है, अतः केवल विश्वास के आधार पर ही वस्तु को निक्षिप्त किया जाता है इसलिये निक्षेप धर्ता की पात्रता के विषय में जान लेना आवश्यक है, उसमें निम्न गुण अपेक्षित माने हैं—

कुलजे वृत्तसम्पन्ने धर्मज्ञे सत्यवादिनि ।
महापक्षे धनिन्यार्ये निक्षेपं निक्षिपेद् बुधः ।।

अर्थात् निक्षेप धर्त्ता को संभ्रान्त परिवार का होना चाहिये । उसमें चरित्र की सम्पन्नता हो सभी दृष्टियों से चारित्रिक शुद्धि का स्वरूप उसमें दीखता हो । वह केवल धर्म का आचरण हो न करता हो अपितु धर्म के वास्तविक तत्त्व का वेत्ता हो क्योंकि कृत्रिम रूप में भी कोई धार्मिक कृत्यों को करता हुआ धार्मिक कहा जाता है जब कि यथार्थ में वह उनका धर्म न होकर धर्माभास मात्र होता है । निक्षेप धर्ता को सत्यवादी अवश्य होना चाहिए क्योंकि "यथा दायस्तथा ग्रहः" की प्रवृत्ति को सत्यवादिता के आधार पर ही सुरक्षित किया जा सकता है । उसका पक्ष महान् होना चाहिए, पक्ष से अभिप्राय उसके आर्थिक, बौद्धिक, प्रतिष्ठात्मक, एवं पारिवारिक अभ्युदय से है । यदि कदाचित् वह असमय में ही काल कवलित हो जाये तो उसके पश्चात् यथावत् उपनिधि को उसके स्थापक को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्यर्पित कर सकें। निक्षेपधर्त्ता को दरिद्र नहीं होना चाहिये तथा वह आर्यवृत्ति (श्रेष्ठ) वृत्ति का पालन करता हो ये उक्त सभी गुण अपेक्षित माने गये हैं।

स्मृतिकारों ने उक्त गुणों से युक्त व्यक्ति पर भी पूर्ण विश्वास न करते हुए मानव की स्वभाव सुलभ दुर्बलता को ध्यान में रखते हुए उपनिधि प्रकरण में साक्षी की व्यवस्था दी है। यदि कदाचित् निक्षेपधर्ता प्रलोभवश उपनिधि को न देना चाहे तो उस समय साक्षी ही एकमात्र ऐसा व्यक्ति होता है जिसकी सहायता से राज्य व्यवस्था स्थापक को उसका द्रव्य वापस दिला सकती है। अत एव याज्ञवल्क्य ने साक्षी के स्वरूपों की ओर ध्यान आकृष्ट कराया है—

तपस्विनो दानशीलाः कुलीनाः सत्यवादिनः।
धर्मप्रधाना ऋजवः पुत्रवन्तो धनान्विताः ।। ६८

त्र्यवराः साक्षिणो ज्ञेया श्रौतस्मार्त क्रियापराः
यथा जाति यथा वर्ण सर्वे सर्वेषु वा स्मृता ।। ६९ या० स्मृति०

इस प्रकार साक्ष्य विधान करने के पश्चात् भी समस्या उत्पन्न होती है कि यदि किसी समय साक्षी को भी प्रलोभन देकर उसे उसके कर्त्तव्य से च्युत कर दिया जावे और निक्षेप धारक प्रथम ही न देने की अनुचिन्तना कर चुका हो तो निक्षेप स्थापक को उसका द्रव्य किस प्रकार प्राप्त हो ? इस प्रकार की समस्या उपस्थित होने पर स्मृतिकार कहते हैं कि साक्षी को राजकीय व्यवस्था के अनुसार पूर्णतया प्रभावित किया जावे कि वह सत्य रूप में स्वीकृत साक्षी भाव को प्रकट करे यदि फिर भी वह साक्ष्य को उत्सुक नहीं होता है, तब न्यायाधिकारी का कर्तव्य है कि वह वास्तविकता का ज्ञान करे। इस प्रसङ्ग में मनु महाराज पर्याप्त प्रकाश डालते हैं—

यो निक्षेपं याच्यमानो निक्षेप्तुर्न प्रयच्छति।
स याच्यः प्राड्विवाकेन तन्निक्षेप्तुरसन्निधौ ।।
साक्ष्यभावे प्रणिधिभिर्वयो रूपसमन्वितैः ।।
अपदेशञ्च संन्यस्य हिरण्य तस्य वस्त्वतः ।।
स यदि प्रतिपद्येत यथा न्यस्तं यथा कृतम् ।।
न तत्र विद्यते किञ्चित्परैरभियुज्यते ।।
तेषां न दद्याद्यदि तु तद्धिरण्यं यथाविधि ।।
उभौ निगृह्य दाप्यः स्यादिति धर्मस्य धारणा ।। मनु स्मृ० अध्याय ८ ।।

अर्थात् न्यायाधीश अपने गुप्तचरों के द्वारा वस्तु स्थिति का ज्ञान करने के लिये किसी वस्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को निश्चित करावे पुनः उसको लाने का आदेश दे, यदि वस्तु प्रत्यर्पित हो जाती है तो इसका अर्थ है कि निक्षेप धारक निर्दोष है और उस पर निक्षेप स्थापक ने असत्य अभियोग चलाया है। यदि वह धरोहर को वापिस न करे तो न्यायाधीश को उसे दण्डित करते हुए उससे निक्षेप वापिस दिलानी चाहिए। कभी-कभी देखने में आता है कि कोई व्यक्ति वस्तु निक्षिप्त करके विदेश आदि जाने पर पुनरावृत्त नहीं होता है तथा वह अब जीवित नहीं है ऐसा सिद्ध हो जाता है ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होने पर निक्षेप किसको प्रत्यर्पित की जावे इस समस्या का समाधान स्मृतिकारों ने मृत-व्यक्ति के उत्तराधिकारी को देने से किया है। वास्तव में उत्तराधिकारी कौन है इसका निर्णय राज व्यवस्था के साथ होना चाहिए।

यदि कभी दैवी आपत्ति आने पर निक्षिप्त वस्तु नष्ट हो जाती है तब विक्षेपधर्त्ता को मुक्त कर दिया जाता है, परन्तु यह मुक्ति निम्न अवस्थाओं में ही मान्य हो सकती है—

चोरैर्हृतं जलेनोढ़मग्निना दग्धमेव वा।
न दद्याद्यदि तस्मात्स न संहरत्ति किञ्चन्॥ मनु-स्मृति अध्याय ८ ॥

यदि द्रव्य चोरी हो गया है अथवा जलप्रवाह होने पर नष्ट हो गया है अथवा जल कर नष्ट हो गया है तो ऐसी स्थिति में निक्षेप को प्रत्यर्पित करने का उत्तरदायित्व नहीं रहता है। परन्तु सामान्य स्थिति में निक्षेप हर दशा में वापिस करने योग्य ही होती है। इस प्रकार संक्षेप से मानव व्यवहार में उपनिधि प्रकरण को स्मृति में दर्शाया गया है।

□

त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः।
ततो विश्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि॥ ऋ० १०.९०.४

यह संसार रहित तीन पैरों वाला पुरुष इस अज्ञान के संसार से परे है। इस परमात्मा का एक अंश इस संसार में सृष्टि एवं प्रलय के द्वारा बार-बार आता-जाता रहता है। तत्पश्चात् सर्वत्र व्याप्त होते हुए वह विराट पुरुष खाने वाले चेतन प्राणी और न खाने वाले अचेतन (पर्वत, नदी आदि) दोनों प्रकार के जगत् को लक्षित करके व्याप्त है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषि दयानन्द निर्वाण शताब्दी के अवसर पर—

आर्य समाज का भावी कार्यक्रम

श्री बलभद्र कुमार हूजा
कुलपति
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

१—आर्य समाज का कार्यक्रम स्वतन्त्र रुप से सच्चे मानव के निर्माण का कार्यक्रम है. अब समय आ गया है जब आर्य समाज के भावी कार्यक्रम केवल साम्प्रदायिक सुधार तक सीमित न रहकर श्रेष्ठ मानव बनाने के कार्यक्रम हों।

२—इक्कीसवीं सदी का समय चुनौतियों का समय है, आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी वैचारिक पूंजी अधिकाधिक रूप में साहित्य और कला के रूप में प्रस्तुत करें। आज का मानव अपनी रुचि की सामग्री साहित्य और कला के झरोंकों से पढता देखाता है। जन जन में वैदिक धर्म के प्रचार के लिए आर्य समाज का यह कार्यक्रम होना चाहिये कि वैदिक साहित्य सस्ती दरों पर विपुल रूप में वितरित हो सके, प्रत्येक आर्य समाज वैदिक सिद्धान्तों एवं ऋषि दयानन्द के विचारों को व्यक्त किये जाने वाली छोटी–छोटी पुस्तिकाओं के सेटों के वितरण का एक ऐसा केन्द्र होना चाहिये जिसके द्वारा उस शहर के सभी पुस्तकालयों, कॉलेजों सार्वजनिक सभागारों में यत्र यत्र आने वाले सभी नागरिकों को इस प्रकार की पुस्तिकायें, कैसेट, विडियो आदि सहज रूप में मिल सके।

३—विश्व का मानव आज आध्यात्मिक क्षुधा से आकुल है, भौतिक भोजन से अतृप्त आज का मनुष्य मानसिक परितोष को प्राप्त करने के लिये छटपटा रहा है, सच्चे मार्ग की खोज में आज का बुद्धिजीवी अविकल रूप से बैचेन है, व्यथित एवं संतप्त विश्व के मानव समुदाय को वेदों की पीयूष-धारा में स्नान कराने की विपुल जिम्मेदारी आर्य समाज के कन्धों पर है, वैदिक धर्म के सन्देश को विश्व के कोने-कोने तक पहुँचाने हेतु आज ऐसे आर्य प्रचारकों की आवश्यकता है जो विदेशी तथा संस्कृत भाषा में निष्णात हो, विश्व के सुदूर अंचलों में वैदिक धर्म का प्रकाश फैलाने का महान् उत्तरदायित्व आर्यसमाज का ही है।

४—आर्यसमाज का शैक्षणिक कार्यक्रम अब स्कूल एवं कॉलेज खोलने के साथ-साथ वैदिक साहित्य के अनुसंधान संस्थानों के खोलने का होना चाहिये। ऋषि दयानन्द के विचारों पर अधिकाधिक अध्ययन एवं शोध कराये जाने हेतु दयानन्द पीठों की स्थापना का व्यापक कार्यक्रम अब आर्य समाज के शैक्षणिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत अविभाज्य रूप से माना जाना चाहिये। इस दृष्टि से आर्य समाज अजमेर के प्रयत्नों की सराहना की जानी चाहिये, जिसके द्वारा दयानन्द शोधपीठ की स्थापना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थान सरकार के सहयोग से अजमेर में हो सकी। इस प्रकार के शोध पीठों की स्थापना का क्रम आर्य जनों की जाग्रति से ही पूरा किया जा सकता है।

५—वेद मन्त्रों के सर्वप्रिय अर्थ आज के परिप्रेक्ष्य में किये जाने परम आवश्यक हैं, विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ अपने-अपने विषय ज्ञान के भण्डार के साथ वेदों के अर्थ का प्रतिपादन करें, जिससे वेद का ज्ञान सर्वसाधारण के लिये उपलब्ध हो। वेद मन्त्रों से वैज्ञानिक सिद्धान्तों का विमोचन हो

६—विगत शताब्दी आर्य विचारों, मान्यताओं एवं वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार की शताब्दी थी। हमें उसमें यथेष्ट सफलता नहीं मिली। २१वीं शताब्दी में विषय के मंच पर वेद मंत्रों का वैज्ञानिक स्वरूप प्रकट करने के लिये वैदिक वाङ्मय के विपुल शोध की जिम्मेदारी आर्य समाज नहीं लेगा तो कौन लेगा ? वेदों के अंग्रेजी तथा अन्य विदेशी भाषाओं में व्याख्या ग्रन्थ निकलने चाहियें। वैदिक सिद्धान्तों को प्रकाश में लाने वाले साहित्य का व्यापक रूप से विदेशी भाषाओं में सृजन करवा कर विश्व के प्रत्येक अंचल में इस आध्यात्मिक प्रकाश को फैलाने का महान् उत्तरदायित्व प्रत्येक आर्यसमाज पर है ।

७—आर्यसमाज के सभी शिक्षा संस्थानों में शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक क्रिया-कलापों के अन्तर्गत ऋषि दयानन्द के वैचारिक दर्शन का प्रतिबिम्ब अभिमुख होना चाहिये। आर्यसमाज के अन्तर्गत आने वाली सभी शिक्षा संस्थानों का केवल एक सूत्रीय कार्यक्रम होना चाहिये वह है—संस्थान में पढ़ने वाला प्रत्येक छात्र ऋषि दयानन्द के विचारों से और आर्यसमाज के दस नियमों से ओत-प्रोत होकर सदाचारी वृत्ति लेकर निकले। प्रचार, प्रसार के तथा गुरुजन के दृष्टान्त से ही आर्यसमाज एक जीवन्त संस्था के रूप में कार्य कर सकेगा और अपने उत्तरदायित्व को निभाने में सफल होगा अन्यथा यह भी अन्य कितनी ही संस्थाओं के तरह पथभ्रष्ट होकर लुप्त हो जायेगा।

८—आर्य समाज में युवावर्ग को आकृष्ट करने हेतु आज के बदलते संदर्भ में नये कार्यक्रम चलाये जाने चाहियें, प्रत्येक आर्य समाज में व्यायाम-शाला, योग-शिविर, वाद-विवाद प्रतियोगिता, पद-यात्रायें आदि के कार्यक्रम अधिकाधिक रूप में आयोजित किये जाने चाहियें, राष्ट्रीय स्तर पर प्रत्येक वर्ष में आर्य युवकों को प्रशिक्षित किये जाने हेतु छोटे-छोटे शिविर लगाये जाने चाहियें जिसमें आर्य युवक साथ-साथ रहकर बौद्धिक एवं शारीरिक क्षमता का विकास कर आर्य समाज को गौंव के प्रहरी बन सकें। सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन में युवक ही सच्चा योगदान दे सकते हैं । प्रत्येक समाज दहेज विरोधी, मद्य निषेध आदि कार्यक्रमों को लेकर युवा शक्ति का प्रभावी उपयोग कर सकता है।

९—षोडश संस्कारों का सर्वसाधारण में प्रचार हो, प्रत्येक संस्कार की सुरभि वैदिक संस्कृति को जीवन शैली से सुरभित हो, आर्य समाज मंदिरों के द्वारा दहेज विरोधी विवाहों का आयोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना चाहिए। सादगी एवं सरल तरीके से वैदिक संस्कार कराये जाने की व्यवस्था से ही हम संस्कारों को घर-घर पहुँचा सकते हैं।

१०—आर्य समाज की प्रनिनिधि सभायें इतनी शक्तिशाली होनी चाहिये ताकि देश की कोई पार्टी राष्ट्रीय महत्त्व के राजनैतिक सवालों एवं बुनियादी समस्याओं के समाधान में आर्य समाज की भूमिका की अवहेलना न कर सके। प्रतिनिधि सभाओं की राजार्य सभायें (राजनैतिक समितियां) देश हित में आने वाले राजनैतिक दृष्टिकोण को जन मानस के सामने प्रकट करें, राष्ट्रीय नव निर्माण की धारा में आर्य समाज की चट्टान सदृश भूमिका हो। ऐसा स्वरूप सशक्त प्रतिनिधि सभाओं के दिये जाने वाले कार्यक्रमों से ही संभव है।

११—ऋषि दयानन्द की विचार धारा सम्पूर्ण जीवन के सर्वोतम उपयोग हेतु एक गतिशील कार्यक्रम प्रदान करती है। आश्रम व्यवस्था का सुदृढ़ रूप में स्थापित होना समाज को जीवित जाग्रत संस्था बनाये रखने के लिये परम आवश्यक है। जीवन के भोगों को भोगने के पश्चात् आई उपरोक्त वृत्ति का उपयोग वानप्रस्थ एवं सन्साय के रूप में यदि आर्यों में प्रचलन नहीं हुआ तो हमें निस्पृह अध्यापकों तथा प्रचारकों का समुदाय कहां से मिलेगा चूंकि वानप्रस्थ एवं सन्यास की वृत्तियां आचरण में क्रियान्वित नहीं हुई इसलिये आर्य समाज का शिक्षा प्रचार, प्रसार का चक्र अवरुद्ध है।

१२—दूर संचार साधनों के व्यापक प्रसार से आज की समूची प्रचार व्यवस्था तत्सबन्धी साधनों पर आश्रित है। वैदिक संदेश को जन-जन तक पहुँचाने हेतु दूर दर्शन, आकाशवाणी, समाचार पत्रों, वृत्-चित्रों आदि के माध्यम उपयोग में लाने के लिये आर्य विद्वानों को सामग्री तैयार करनी चाहिये। जिस तरह गुरुवाणी या योग का विशेष यथेष्ट रूप से दूरदर्शन एवं आकाशवाणी आदि साधनों में नियमित प्रचारण होता है, उसी प्रकार वेद मंत्र की सस्वर व्याख्यायें भी इन साधनों के द्वारा क्यों न अधिकाधिक प्रचारित हों?

१३—आर्य समाज को जीवन्त रूप से ज्योतिर्मय बनाने के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक आर्य सभासद स्वामी दयानन्द के निर्देशानुसार ईमानदारी से आर्य समाज को अपनी आय का शतांश दे, जिससे आर्य समाजों की हालत सुधरे और प्रत्येक आर्य समाज में एक विद्वान् पुरोहित हो। वैदिक संस्कारों को प्रभाव शाली ढंग से कराये जाने की व्यवस्था प्रत्येक आर्य समाज में होनी परम आवश्यक है। इसके बिना योग्य पुरोहितों एवं प्रचारकों के निर्माण हेतु प्रतिनिधि सभाओं द्वारा व्यापक प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिये।

१४—प्रत्येक आर्यसमाज में एक मेटाडोर वाहन तथा चलते फिरते पुस्तकालय की व्यवस्था होनी चाहिये जिससे उस क्षेत्र के दूर-दराज गांवों की परिधि चलती फिरती प्रचार व्यवस्था के अन्तर्गत आ जाये। चलती-फिरती प्रचार व्यवस्था का क्रम अविलम्ब हमारे समाजों में तेजी से बढ़ना चाहिये, तभी हम सर्वव्यापी अन्धकार को दूर कर पायेंगे। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर को आग लग रही घर के चिराग से

—डॉ० त्रिलोकचन्द
दर्शन विभाग,
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

भारत भूमि पर समय-समय पर अनेक सन्त महात्माओं ने जन्म लेकर इसकी गरिमा को बढ़ाया है। इन महापुरुषों ने अपने-अपने समय में धर्म और संस्कृति की रक्षा की है। इन्होंने अपनी-अपनी विचारधारा के अनुसार अनेक सम्प्रदायों को जन्म दिया। जैसे—नाथ सम्प्रदाय, दसनामी सम्प्रदाय, उदासीन सम्प्रदाय, रामानुज सम्प्रदाय, सखि सम्प्रदाय आदि आदि।

विक्रमी सम्वत् १५२६ ई० में पंजाब के 'रायभोये की तलवंडी' (वर्तमान ननकाना साहिब) नामक गांव के एक खत्री परिवार में महान् सन्त गुरु नानक देव ने जन्म लिया। इनके पिता का नाम श्री कालूराय खत्री तथा माता का नाम तृप्ता और बहन का नाम नानकी देवी था। यह एक कट्टर हिन्दू परिवार था। आगे चलकर श्री गुरु नानकदेव के दो पुत्र भी हुए, जिनमें से एक का नाम श्री चन्द्र था, जिन्होंने उदासीन सम्प्रदाय को चलाया तथा दूसरे श्री लक्ष्मीदास थे।

सन्त नानक देव की वाणी में भौतिक और आध्यात्मिकवाद का समन्वय है। यह समन्वय वेदों में भी है। श्री गुरु नानक देव के उपदेश कबीरदास, रविदास, आदि सन्तों से मिलते हैं। कुछ लोग तो श्री गुरु नानकदेव को कबीरदास का अवतार मानते हैं। सन्त श्री गुरु नानकदेव ने लोगों को सरल भाषा में सच्चाई का मार्ग दर्शाया। उनके अनेकों शिष्य हो गये। श्री गुरु नानकदेव के पश्चात् उनकी शिष्य परम्परा में नौ गुरु और हुए, जिनके नाम हैं—श्री गुरु अंगददेव, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी, श्री गुरु अर्जुनदेव जी, श्री गुरु हरगोविन्द जी, श्री गुरु हरराय जी, श्री गुरु हरकिशन जी, श्री गुरु तेजबहादुर जी और श्री गुरु गोविन्दसिंह जी। ये सभी गुरु हिन्दू थे। हिन्दू धर्म के अन्तर्गत यह सम्प्रदाय उसी प्रकार से चलता रहा, जिस प्रकार अन्य अनेक सम्प्रदाय चल रहे हैं।

श्री गुरु तेगबहादुर के समय में औरंगजेब का अत्याचार चरम सीमा पर था, हिन्दुओं को जबर-दस्ती मुसलमान बनाया जा रहा था। इस अत्याचार से तंग होकर कुछ कश्मीरी पण्डित इकट्ठे होकर श्री गुरु तेगबहादुर के पास गये और रोकर कहने लगे—"हे गुरु हमारी रक्षा करो। हमें औरंगजेब जबर-दस्ती मुसलमान बना रहा है।" यह देखकर कट्टर हिन्दू सन्त श्री तेगबहादुर दुःखी हुए और उन्होंने उनसे कहा कि औरंगजेब से जाकर कह दो कि हमारा गुरु तेग बहादुर यदि पहले हिन्दू से मुसलमान हो जाये तो हम भी हो जायेंगे। इस पर औरंगजेब ने श्री गुरु तेगबहादुर को दिल्ली बुलवाया। श्री गुरु अपने पांच शिष्यों सहित दिल्ली पहुँचे। औरंगजेब ने कहा—"आप मुसलमान हो जाओ, सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुविधाएं मिलेगी। श्री गुरु ने कहा—"आप हिन्दू हो जाओ।" औरंजगजेब ने कहा, मैं मुसलमान हूं, हिन्दू कैसे बन सकता हूँ ? श्री गुरु ने कहा, तो फिर मैं हिन्दू मुसलमान कैसे बन सकता हूँ ? इस पर औरंगजेब ने क्रुद्ध होकर श्री गुरु को भयभीत करने के लिये उनके पांचों शिष्यों की बड़े निर्मम ढंग से हत्या करवा दी। एक को जिन्दा आरे से चिरवा दिया। दूसरे को उबलते पानी में डालकर आलू की की तरह उबाल दिया गया। श्री गुरु इतना होने पर भी अडिग ही रहे। वे हिन्दू से मुसलमान नहीं बने। उन्होंने अपना भी बलिदान दे दिया परन्तु धर्म नहीं छोड़ा। दिल्ली चान्दनी चौक में बना गुरुद्वारा सीसगंज श्री गुरु तेगबहादुर की यादगार है। जहां आज भी प्रतिदिन हजारों लोग श्रद्धा से अपना सीस झुकाते हैं।

इसके पश्चात् श्री गुरु गोविन्दसिंह ने लगभग २५० वर्ष पूर्व खालिस (केवल) हिन्दू धर्म की रक्षा के लिये अपने शिष्यों की एक सेना बनाई, जिसका कार्य केवल हिन्दुओं को मुगलों के अत्याचारों से बचाना था। प्रत्येक सिपाही के लिये पांच नियमों का पालन करना जरूरी था, जिसका वर्णन इस प्रकार है—केस, कंघा, कड़ा, कचहरा (कच्छा) और कृपाण। केश रखने का अभिप्राय यह था कि उस से दुश्मन के हथियारों से कुछ सीमा तक रक्षा हो सके तथा व्यक्तित्व अधिक प्रभावी बन सके। श्री गुरु गोविन्दसिंह ने स्वयं कहा था—

सवा लाख से एक लड़ाऊं, तभी गोविन्दसिंह नाम कहाऊं।

कंघा, केशों को ठीक रखने के लिये था। कड़े से दुश्मन की तलवार को हाथ पर रोका जा सकता था तथा अवसर पाकर कड़े के प्रहार से भी दुश्मन पर वार किया जा सकता था। कचहरा ब्रह्मचर्य के लिये था। कच्छे से एक लाभ यह भी है कि व्यक्ति आसानी से भाग-दौड़ सकता था। कृपाण तो था ही इसलिये कि किसी भी समय दुश्मन पर वार किया जा सके। इस प्रकार श्री गुरु गोविन्दसिंह ने एक सेना बनाई थी। जिसको उन्होंने सिख पन्थ का नाम दिया। 'सिख' शब्द शिष्य का बिगड़ा हुआ रूप है। खालिस का अर्थ है—सौ प्रतिशत शुद्ध जिसका अर्थ यहां पर यह है कि इस सेना का कार्य शत-प्रतिशत रूप में हिन्दू धर्म की रक्षा करना है और इसके अलावा और कुछ नहीं। 'खालिस' शब्द से खालसा बना इस प्रकार श्री गुरु गोविन्दसिंह इस खालसा पन्थ के प्रवर्तक थे। इस सेना ने हिन्दू धर्म की रक्षा में बहुत ही प्रसंशीय कार्य किया। श्री गुरु गोविन्दसिंह के इस कार्य को सराहना करते हुए किसी ने कहा है—

न कहूं जबकि, न कहूं तबकि, मैं बात करूं अबकि,
अगर गुरु गोविन्दसिंह न होते तो सुन्नत होती सबकी॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज वही सेना हिन्दुओं पर अत्याचार कर रही है, जो रक्षा के लिये बनायी गई थी। वही आज विनाश कर रही है और वह भी इनके इशारे पर जिनसे कभी उसने अपने हिन्दू धर्म की रक्षा की थी। घर का दिया ही घर को जला रहा है। आज श्री गुरु गोविन्द सिंह की आत्मा क्या कहेगी ?

रो पड़ेगी आत्मा, गुरु गोविन्दसिंह की, जानकर हालात को।
फिर सम्हलकर पूछेगी, किसने बहकाया, हे सिखों आपको ॥

गुरुग्रन्थ साहिब में कहीं भी ऐसा नहीं है, किसी गुरु की ऐसी आज्ञा नहीं है, जैसा आज कुछ सिख कर रहे हैं। ऐसे समय में सिखपन्थ के विद्वानों, धार्मिक नेताओं, ग्रन्थियों आदि का यह कर्तव्य है कि वे ऐसे सिखों को सच्चाई बतलायें और उन्हें गुरुगोविन्द सिंह के बनाये नियमों के प्रतिकूल चलने से रोकें। □

पुस्तक-समीक्षा

पुस्तक का नाम	—	हिमालय दर्शन
सम्पादक		योगेश चन्द्र बहुगुणा
प्रकाशक	—	हिमालय दर्शन प्रकाशन समिति शिवानन्द नगर, टिहरी गढ़वाल उ० प्र०।
संकलित लेख संख्या	—	५१
पृष्ठ संख्या	—	३७०
मूल्य	—	३५ रुपये।

अदम्य महत्वाकांक्षाओं का प्रतीक हिमालय सदियों से उन्नति और स्थिरता की शिक्षा जन जीवन को प्रदान करता हुआ भारत की उत्तर सीमा पर विराजमान है। इतिहास को दृष्टि में रखकर यदि कुछ कहा जाये तो यह कहना शतशः समीचीन होगा कि भारत की उन्नति का मूल रहस्य हिमालय के उत्तुंग शिखरों, गुरु गम्भीर गह्वरों, अपार जल स्रोतों और समृद्ध वनस्पति राशियों में निहित है।

हिमालय के इन रहस्यों को जिज्ञासु पाठकों के हितार्थ उद्घाटित करने के लिये श्री योगेश चन्द बहुगुणा ने 'हिमालय दर्शन' के नाम से इस पुस्तक का सम्पादन करके स्तुत्य कार्य किया है। इस पुस्तक का सम्पादन हिमालय के अनन्य सेवी श्री सुन्दरलाल बहुगुणा और शान्तिलाल जी त्रिवेदी को यशः काम के रूप में अमर करने के लिये किया गया है। इस पुस्तक में ५१ लेखों का सुन्दर संगम है, जिसमें हिमालय के विविध रूपों का प्रकाशन किया गया है। लेखों के अध्ययन से हिमालय की गरिमा का वास्तविक ज्ञान पाठक को होता है। पुस्तक आद्योपान्त पठनीय और अनुशीलनीय है।

डा० विजयपाल शास्त्री
दर्शन विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गताङ्क से आगे—

ईश्वरीय ज्ञान वेद–प्रकाश किन पर हुआ ?

लेखक–डा० रामेश्वर दयाल गुप्त-(M.A.)Ph. D.

अब तक इस पर विचार हो चुका है कि मनुष्य के स्वाभाविक ज्ञान पर प्रभु के ज्ञान की पुट नैमित्तिक रूप से उसके मानस पर प्रकाश द्वारा पड़ती है । महर्षि दयानन्द सरस्वती ने शतपथ (११-५-८-३) का उद्धरण देते हुये बताया है कि सर्गारम्भ में वह ज्ञान अग्नि, वायु, आदित्य ऋषियों के हृदय में प्रकाशित हुआ था [अग्नेर्ऋग्वेदः वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः] मनुस्मृति १/२३ में भी यही बात दुहराई है । परन्तु इन ऋषियों को ही क्यों ज्ञान दिया । ज्ञान तो सर्गारम्भ में उत्पन्न सब जीवों को दिया जाना अपेक्षित था । स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी का मत था कि आदि जीवों ने अपने में जिन को सर्वोत्कृष्ट समझा उनको प्रमाणीभूत मानकर उनके आगे सिर झुका दिया और उनके ज्ञान से ही अपने को परीक्षित करने लगे जैसे कक्षा में मानिटर होता है । इन ऋषियों के अतिरिक्त अन्यों में ज्ञान ग्रहण करने की शक्ति ही नहीं थी । वे मुक्ति से लौटे हुये जीव थे, विशेष क्षमता से सम्पन्न थे अतः यह पद विशेष हैं, नाम विशेष नहीं । हर सर्गारम्भ में पात्र चुने जाते हैं और उनकी संज्ञा, अग्नि वायु, आदित्य प्रभृति हो जाती है । ऋग्वेद १०/७१/३ में जो कहा है अन्वविन्दन ऋषिषु प्रविष्टाम" उसका यही भाव है । ऋग्वेद ५/४४/१५ की ऋचो अग्निर्जागार तमृचः कामयन्ते० का भाव यही है कि जो अग्निवत (नेता-ऋषि) जागता है–भ्रमण करता है, उसे ऋचा प्राप्त होतो है । यहां अग्नि का अर्थ अग्नि ऋषि नहीं बल्कि पातृत्वशील के हैं । साम भाग अर्थात् वेद मन्त्रों के गान की क्षमता भी उन्हें ही प्राप्त होती है ।

बहुत से लोग यह भी कहते हैं कि "अनन्ता वै वेदाः" होने से २५००० ऋचाओं मात्र में सृष्टि का सारा ज्ञान कैसे आ सकता है । वास्तव में सृष्टि के आदि में मिला ज्ञान वेद का अंश है, अतः वेद है और उस अनन्त वेद में प्रविष्ट होने का साधन है, न कि सम्पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान है । ज्ञान की कोई सीमा नहीं होती । ज्ञान का अंश ऋषियों पर उद्‌भासित हुआ ऋषियों ने अन्यों को दिया । ज्ञान का प्रकाश "धियं जिन्वमहसे" मानव की बुद्धियों में सतत भी प्रकाशित होता रहता है । तभी गायत्री मंत्र में प्रार्थना है-धियो यो नः प्रचोदयात् । वेद तो उस ज्ञान के मापक तथा प्रेरणात्मक मन्त्रभाग हैं । वह ज्ञान सूत्र रूप में है ।

ईश्वरीय ज्ञान की कसौटी—इलहाम की आवश्यकता और उद्‌भासित होने की पद्धति पर चर्चा करके अब हमें देखना यह है कि वह ईश्वरीय ज्ञान वेद ही है या अन्य तथा कथित धर्म ग्रन्थ । इस का निर्णय करने के लिये हमें कुछ कसोटियाँ निर्धारित करनी होंगी जिन पर विविध ग्रन्थ परीक्षित किये जा सकें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताकि किसी ज्ञान-संचय को ईश्वरीय कहा जा सके। उसमें निम्न विशेषतायें होनी चाहिये—

१ यह ज्ञान सृष्टि या सर्ग के प्रारम्भ ही में दिया जाना चाहिये, क्योंकि आदि मानव से अब तक सभी को उसकी प्रेरणा की आवश्यकता है।

२ अतः उस संचय में इतिहास नहीं होना चाहिये, क्योंकि किसी भी ऐतिहासिक पुरुष के जन्म से पहले उसकी विद्यमानता अपरिहार्य है।

३ उसमें त्रैकालाबाधित सत्य अर्थात् ऋत शाश्वत नियम होने चाहियें।

४ उसकी भाषा बनावटी न होकर प्राकृत होनीं चाहिये। तथा वह भाषा स्वर शास्त्र के अनुकूल हो।

५ उसमें मनुष्य जाति का उन्नायक सत्साहित्य हो, जिसे पूर्ण ज्ञान की संज्ञा दी जा सके।

६ उसमें एक मस्तिष्क की ही कृति होने के कारण पूर्वापर विरोध न हो।

७ उसमें सृष्टि क्रम के विरुद्ध अवैज्ञानिक बातों का पृष्टि-पोषण न हो न ऐसी असंगतियाँ घोषित की गई हों।

८ उसमें प्रक्षेप न हो तथा ऐसे प्रबन्ध कर दिये गये हों कि सम्प्रदायों के अगुआ अपनी बात न मिला सकें।

९ उसमें अनावश्यक पुनरुक्ति न हो।

१० उसकी अन्तः साक्षी अर्थात् स्वतः प्रमाण जन्य संकल्प उसी में हो।

११ आप्त जनों ने युगों-युगों में उसे ईश्वरीय माना हो।

अब इनमें से प्रत्येक पर ऊहा-पोह करके देखेंगे कि इन कसौटियों पर वेद-संहितायें ठीक उतरती हैं या नहीं। (क्रमशः)

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मति (अभिमत)

वैदिक कन्सेप्ट ऑफ योग मेडिटेशन—देवेन्द्र कपूर

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि भारत ने मध्य युग में एवं उसके बाद भी मानवीय व्यक्तित्व में विद्यमान आध्यात्मिक शक्तियों की उन्नति पर विशेष बल दिया है। जिसके परिणामस्वरूप आध्यात्मिक क्षेत्र के अतिरिक्त अन्य क्षेत्र उपेक्षित एवं गौण हो गये। ठीक इसके विपरीत पश्चिमी जगत् ने मानव समाज की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति पर विशेष ध्यान दिया और उसकी आध्यात्मिक शक्तियों को प्रेरित करने का कोई प्रयास नहीं किया। जिसके कारण मानव अस्तित्व अनेक स्तरों पर तनावों से ग्रसित हो गया। विश्व की दो महान् शक्तियों के मध्य आणविक शस्त्रों की होड़, सम्प्रभु राष्ट्रों के मध्य चल रहे युद्ध, जातीय वैमनस्यता तथा लोगों में व्याप्त प्रान्तीयता की भावना ने समस्त मानव जाति को पारस्परिक विपरीत गुटों में ला दिया है।

ये सभी बातें एक ऐसी मनोदशा को प्रकट करती हैं जो कि सम्पूर्ण रूप में भ्रमित और भ्रान्तियुक्त है तथा सुव्यवस्थित चिंतन से संचालित नहीं है। मानसिक शान्ति से तात्पर्य वैयक्तिक शान्ति से है और यही विश्व शान्ति का आधार है। अत: आवश्यकता है ऐसे साधनों एवं उपायों को उपलब्ध कराने की, जो कि दिग्भ्रमित मन को अनुशासित एवं स्थिर कर सकें।

श्री देवेन्द्र कपूर ने अपनी पुस्तक "योग ध्यान की वैदिक धारणा" में मानव समाज में व्याप्त तनावों के कारणों पर अनुसंधान किया है और शांत मन: स्थिति के लिये मन को साधने के महत्त्व को समझते हुए, इसी मूल विषय को अपनी सम्पूर्ण पुस्तक का आधार बनाया है। प्रस्तुत पुस्तक में उन्होंने १८ वेदमंत्रों पर आधारित अट्ठारह ध्यान विधियों पर व्यापक रुप में प्रकाश डाला है। इन ध्यान विधियों का मैंने अविच्छिन्न रूचि के साथ अध्ययन किया है और मैंने अनुभव किया कि इन वैदिक मन्त्रों का मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है और ये मंत्र विचारों को गहनता प्रदान करते हैं। वस्तुत: में मंत्र का वास्तविक उद्देश्य जैसा कि शब्द की व्युत्पत्ति से ज्ञात होता है, मन की चिन्तन शक्ति को एक निश्चित दिशा एवं स्थिरता प्रदान करना है। इन विचारोत्तेजक व्याख्याओं में उल्लिखित मन पर संयम प्राप्त करने की विधियों से मेरा पूर्ण विश्वास है कि पाठक वर्ग अत्यन्त लाभान्वित होगा एवं योगध्यान विधि की वैदिक धारणा से पूर्ण रूपेण परिचित होगा।

श्री कपूर जी ने अपनी इस उल्लेखनीय कृति द्वारा वैदिक विद्वत्ता के क्षेत्र में एक अमूल्य सेवा, आध्यात्मिक रूप से पीड़ित मानवता को प्रदान की है, जिसके लिए मैं उनको हार्दिक बधाई देता हूँ।

रामप्रसाद वेदालंकार
आचार्य एवं प्रो-वाइस चांसलर
गुरुकुल कांगड़ी यूनिवर्सिटी हरिद्वार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-समीक्षा

पुस्तक का नाम—वर्ल्ड पर्सपेक्टिव ऑन स्वामी दयानन्द

लेखक — डॉ० गङ्गाराम गर्ग

प्रकाशक — कनसैप्ट पब्लिशिंग कम्पनी

एच-१३ बाली नगर, पो० बो० ६२७४

नई दिल्ली—११००१५

पृष्ठ — XLVI+५६२,

साईज — १४×२२

मूल्य — रु० २५०

स्वामी दयानन्द निर्वाण शताब्दी समारोह ३ नवम्बर १९८३ से ६ नवम्बर १९८३ तक अजमेर में अत्यन्त धूमधाम से मनाया गया। इस समारोह की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि स्वामी दयानन्द सम्बन्धी साहित्य का प्रकाशन रही। इसी शृंखला में डॉ० गंगाराम जी गर्ग (भूतपूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,हरिद्वार) द्वारा सम्पादित यह पुस्तक भी एक कडी है। डॉ० गंगाराम गर्ग जी ने यह पुस्तक गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की सीनेट के अनुरोध पर लिखी है तथा महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी के अवसर पर विश्वविद्यालय की ओर से यह अनुपम भेंट है। उक्त पुस्तक का सम्पादन करके जहाँ विद्वान् लेखक ने आर्यसमाज एवं स्वामी दयानन्द सम्बन्धी साहित्य में श्री वृद्धि की है, वहीं स्वामी दयानन्द पर अंग्रेजी भाषा में लिखित प्रामाणिक एवं देश विदेश के गणमान्य विद्वानों के विचार-पुष्पों का इस 'ग्रन्थ-माला' में गुम्फन करके एक अभाव का अभाव करने का संस्तुत्य प्रयास किया है।

इस पुस्तक में विद्वान् लेखक ने ऋषि दयानन्द के चरित्र एवं उनकी मान्यताओं को प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत किया है। 'गुलाब की पंखुडियां' नामक शीर्षक में देश विदेश के प्रसिद्ध एवं शीर्षस्थ व्यक्तियों की ऋषि दयानन्द विषयक उक्तियों का गुम्फन किया है। इसके अतिरिक्त देश विदेश के उच्च कोटि के ५३ विद्वानों द्वारा लिखे गये गम्भीर एवं शोधपूर्ण लेखों का संकलन भी ऋषि दयानन्द पर नयी विचार सरणि के द्वार उद्घाटित करता है। ग्रन्थ के अन्त में डॉ० भवानी लाल भारतीय द्वारा संकलित सन्दर्भ सूची दी गयी है। इस पुस्तक की भूमिका अमेरिकी विद्वान् 'श्री कैनथ जोन्स' द्वारा लिखी गई है। पुस्तक की साज-सज्जा एवं छपाई भी बहुत सुन्दर है। कुल मिलाकर संक्षेप में उक्त ग्रन्थ के विषय में कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ अंग्रेजी भाषा में स्वामी दयानन्द पर लिखे गये साहित्य में एक अद्‌भुत ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थ की बहुत से पत्र-पत्रिकाओं द्वारा साधुवाद एवं प्रशंसा की गयी है। इनमें १५ जनवरी १९८४ साप्ताहिक 'आर्य मर्यादा' जालन्धर में प्रकाशित सम्पादकीय टिप्पणी में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के माननीय कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी एवं १५ जनवरी १९८४ के आर्यमित्र पत्र में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती द्वारा उल्लिखित टिप्पणियां उल्लेखनीय हैं। श्री वीरेन्द्र जी ने इस ग्रन्थ के अंग्रेजी भाषा में सम्पादन एवं श्री हिदायतुल्ला (उपराष्ट्रपति, भारत सरकार) द्वारा अपने सन्देश में दी गयी ऋषि दयानन्द के प्रति श्रद्धाञ्जलि को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना है।

उनके अनुसार—"गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डॉ० गंगाराम गर्ग ने महर्षि दयानन्द के विषय में अंग्रेजी में एक पुस्तक प्रकाशित की है। जिसमें भारत और बाहर के देशों के बड़े-बड़े विद्वानों ने महर्षि दयानन्द के विषय में अपने-अपने विचार दिये हैं। इस पुस्तक को पढ़ कर हमें पता चलता है कि संसार ने महर्षि दयानन्द को किस रूप में देखा है। बड़े-बड़े यूरोपीय विद्वानों ने महर्षि की विचारधारा, उनके सिद्धान्तों और उनके व्यक्तित्व के विषय में बड़े सुन्दर लेख लिखे हैं। प्रायः सबने इस बात पर बल दिया है कि महर्षि ने वेदोद्धार के लिये जो कुछ किया है, वह किसी और ने नहीं किया.........।

मेरा लिखने का अभिप्राय केवल यही है कि महर्षि निर्वाण शताब्दी के सम्बन्ध में जो साहित्य प्रकाशित हुआ है उसमें डॉ० गंगाराम जी गर्ग की इस पुस्तक का विशेष स्थान है।"

वस्तुतः उक्त पुस्तक इस प्रशंसा के योग्य ही है। डॉ० गर्ग जी ने अभी कुछ ही दिन पूर्व अंग्रेजी भाषा में ही संस्कृत साहित्य को एक अद्भुत ग्रन्थ पुष्प(एन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ संस्कृत लिटरेचर, साईज-१९×२५, पृ० सं० **XLV+517**,मूल्य-२५० रु०) भेंट किया है। इस ग्रन्थ में संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य पर प्राचीन एवं अर्वाचीन कवियों, लेखकों एवं उनकी कृतियों का संक्षिप्त विवरण देकर संस्कृत साहित्य के एक अभाव की पूर्ति की है। यह ग्रन्थ संस्कृत भाषा के जिज्ञासु के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

वस्तुतः दोनों ग्रन्थ प्रशंसनीय एवं संग्रहणीय हैं।

—डा० राकेश शास्त्री

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी के छात्रों के लिये विश्वविद्यालय के विजीटर महोदय
पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार का--

सन्देश[1]

"गुरुकुल के इतिहास को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है प्राचीन और आधुनिक प्राचीनकाल का प्रतिनिधित्व मैं करता हूं और आधुनिक का प्रतिनिधित्व आप सब करते हैं। प्राचीन काल में जब हम अंग्रेजों की दासता की बेड़ियों में जकड़े हुए थे, वह युग संघर्ष का युग था। उस समय आर्य समाज का मुख्य कार्य उपदेशक तथा राजद्रोही उत्पन्न करना था जो अंग्रेज सरकार का तख्ता उलट सकें। किन्तु आज स्थिति भिन्न है। हमारा देश स्वतन्त्र है, अतः आज उपदेशक तैयार करने की आवश्यकता नहीं अपितु आज हमारा उद्देश्य विद्वान् तैयार करना है, जो वैदिक संस्कृति का प्रचार और प्रसार कर सकें,जिनका जीवन सरल, ब्रह्मचर्य एवं सदाचार पूर्ण हो। इतना ही नहीं हमारे गुरुकुल में विद्या प्राप्त करने के पश्चात् छात्र देश के हर क्षेत्र में मूर्धन्य हो। वह राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री, संसद-सदस्य, पुलिस-महानिरीक्षक आदि उच्च पदों पर भी विराजमान हो, यही हमारा आधुनिक काल में मुख्य उद्देश्य है। आज समाज की आवश्यकता भिन्न हैं। आज वह समय है जिस में यदि मजिस्ट्रेट, अधिकारी, अथवा शासक आर्य समाजी है तो लोग झुक-झुक कर कहेंगे कि हम भी आर्य समाजी हैं। । इस प्रसंग में उन्होंने अपना उदाहरण भी दिया और कहा कि मैं बचपन से ही अच्छा प्रसारक एवं अच्छा लेखक होने का स्वप्न देखता था, जिसें मेरे निरन्तर प्रयास के कारण साकारता प्राप्त हुई।"

उन्होंने कहा--"कि इस समय यदि मैं बच्चा होता तो मेरा लक्ष्य होता कि मैं प्रेजीडेन्ट बनूं यही आशा में आज इस गुरुकुल के विद्यार्थी से करता हूं। इसी सन्दर्भ में उन्होंने अध्यापकों से भी छात्र के साथ निःस्वार्थ भाव से विशेष परिश्रम करने का आग्रह किया और कहा कि वे परिश्रमी छात्र को यदि हो सके तो अतिरिक्त समय में भी समय दें। झगड़ों में न पड़ें। छात्र एवं अध्यापकों का सम्बन्ध मधुर एवं निःस्वार्थ हो। अन्त में उन्होंने गुरुकुलीय भावना के अनुरूप छात्रों का ही गुरुकुल में प्रवेश लिया जाये इस बात पर बल दिया। इसके लिये उन्होंने दिल्ली-गुरुकुल, झज्जर आदि स्थानों

---

१८ नवम्बर १९८३ को डा० सत्यव्रत सिद्धांतालंकार (विजिटर, गुरुकुल कांगड़ी विश्व-विद्यालय) की अध्यक्षता में एक सभा का आयोजन किया गया। जिसमें अध्यक्ष पद से बोलते हुए उन्होंने कहा कि--

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के गुरुकुलों से छात्रों के आगमन का प्रस्ताव रखा, क्योंकि उन्हें हम अपनी गुरुकुलीय भावना के अनुरूप तैयार कर सकते हैं। उन्होंने अंग्रेजी ज्ञान पर भी जोर दिया और कहा "अंग्रेजी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है, उसका ज्ञान होना चाहिये। हमारे छात्रों की ऐसी योग्यता हो कि वे ऊंची से ऊंची पदवी पाने के लिये परिश्रम कर सकें। अपने भाषण का उपसंहार करते हुए उन्होंने कहा, हमारे समय में नारा था कि सरकारी नौकरी नहीं करनी है। लेकिन इस समय नारा होना चाहिये कि हमें सरकारी नौकरी ही करनी है, ऊंचे पद को प्राप्त करना है, बड़े-बड़े काम करने हैं इसके लिये हम कम्पिटीशन में बैठें। आज देश की अवस्थाएं अनुकूल है पहले प्रतिकूल थीं। अतः हम अपने हृदय में भावना गडा लें कि हमें देश में ऊंचा उठना है। यही हमारा स्वप्न है।

(अन्त में उन्हें धन्यवाद देते हुए कुलपति जी ने कहा कि सन् १६४२ में हमारा नारा था 'अंग्रेजों भारत छोडो' उसके बाद सुभाष चन्द्र बोस ने नारा दिया—दिल्ली चलो तथा तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा और अब गुरुकुल के छात्रों का नारा होना चाहिए—भारत सरकार पर कब्जा करो)

प्रस्तुतकर्ता—डॉ० राकेश शास्त्री

---

७५ वर्ष पूर्व का गुरुकुल वृतांत—

स्वामी श्रद्धानन्द की लेखनी से

प्रस्तुतकर्ता—जगदीश प्रसाद विद्यालङ्कार

ब्रह्मचारियों का स्वास्थ्य अत्युत्तम है। इस समय एक को भी ज्वारादि रोग नहीं है। पढ़ाई बड़ी उत्तमता से हो रही है दयानन्द के मृत्यु दिवस पर उनके जीवन पर विचार करने के लिये विशेष अनध्याय हुआ चतुर्दशी को दिवाली की तैयारो के लिये छुट्टी दी गई। उस दिन ब्रह्मचारियों ने स्वयं कंडीले तथा पटाके आदि बनाये अमावस के दिन प्रातःकाल ब्रह्मचारी गण कन्दुक-क्रीडा में सम्मिलित रहे और कुछ भ्रमणार्थ अपने अधिष्ठाताओं सहित बाहिर गये सायंकाल पांच बजे से आरम्भ होकर छः बजे बड़ा होम समाप्त हुआ फिर भोजन पश्चात् म० अर्जुनसिंह स्वदेशो खेलों के अध्यापक ने एक दो करतब दिखलाये जिसके पश्चात् ब्रह्मचारियों ने बनेटी, फरी गतकादि के जो खेल सीखे थे उन सबकी परीक्षा दी। कुछ ब्रह्मचारियों के संरक्षक भी आये थे जो यह दृश्य देखकर बहुत प्रसन्न हुए तत्पश्चात् सवाआठ बजे से सभी ब्रह्मचारी अध्यापक अधिष्ठाता तथा अन्य सभ्यगण यज्ञशाला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

में एकत्रित हुए। वेद मन्त्रों से यज्ञशाला सुसज्जित थी तथा प्रकाश का उत्तम प्रबन्ध था। ब्रह्मचारी जयचन्द्र ने वेद मन्त्र-पूर्वक ईश्वरोपासना प्रार्थना की, जिसके पीछे ब्रह्मचारी ब्रह्मदत्त ने ऋषि दयानन्द की प्रशंसा में कुछ श्लोक स्वर सहित पढ़े। मुख्याधिष्ठाता ने इसके पश्चात् ऋषि दयानन्द की प्रशंसा में कुछ घटनायें पेश करके उनसे शिक्षा ग्रहण करने की प्रेरणा की, साढे नौ बजे यह अधिवेशन समाप्त हुआ। यद्यपि एक, दो तथा तीन श्रेणियों के ब्रह्मचारियों को इस में सम्मिलित होने से मुक्त किया गया था तथापि तृतीय श्रेणी के ब्रह्मचारी विशेष आज्ञा लेकर सम्मिलित हुये।

सायंकाल के खेल बराबर होते हैं जिनमें कुछ ब्रह्मचारी विशेष योग्यता संपादन करने का प्रयत्न कर रहे हैं। घोडों की सवारी भी अनध्याय के दिन बराबर होती है।

ब्रह्मचारियों का तोल—गत पूर्णिमा के पश्चात् अभी आधे संरक्षकों को ही भेजा गया था कि श्री डॉ० चिरंजीव भारद्वाज के लिखने पर तोल का रजिस्टर उनके पास भेजा गया। उक्त डॉ० जी ने रजिस्टर इसलिये मंगवाया है कि ब्रह्मचारियों के तोल में परिवर्तन की ऊँच-नीच देख कर आगे के लिये भोजन का ठीक प्रकार निश्चय कर दें। जब रजिस्टर लौट आयेगा तब शेष संरक्षकों की सेवा में भी उनके ब्रह्मचारियों के तोल लिखकर भेज दिये जायेंगे। गत परीक्षा का परिणाम लिखकर संरक्षकों के पास भेजा जा रहा है।

दक्षिण हैदराबाद की–दुर्घटना पर सहायतार्थ जो अध्यापकादिकों से प्राप्त हुआ है, वह १५५) से बढ़ गया है। इनमें बड़ी रकमें यह हैं। मुख्याधिष्ठाता १६) श्री पं० काशीनाथ जो १५), श्री महाशय पंतराम जी २०), श्री चौधरी बुद्धन सिंह जी १०)। ब्रह्मचारियों ने जो सात दिन शाक, दाल तथा घी छोड़ा था उससे साढ़े छयानवे रुपये प्राप्त हुए। ब्रह्मचारी भारद्वाज तथा ब्रह्मचारी इन्द्र ने पारितोषिक में मिली हुई अपनी अपनी बन्डी सहायतार्थ दे दी, जिन्हें बेचकर रोकड रुपये भेजे गये। गुरुकुल भण्डार तथा अन्य पुरुषों से जमा करके एक बड़ा गट्ठर कपड़ों का तैयार है जो भेजा जायेगा।

दर्शक इस समय बहुत आते हैं। सर्व गुरुकुल को अवलोकन करके प्रसन्न हो जाते हैं। बाबू हीरालाल जी इन्जीनियर भक्खर से आये थे, सब कुछ देखकर प्रसन्न हुए और पुस्तकालय की आलमारियों के क्रयार्थ १००) दान दे गये।

इमारत का काम भी चल रहा है। महाविद्यालय मन्दिर के दोनों बड़े कमरों पर भी गार्डर चढ़ गए। अब आशा है कि एक मास तक यह इमारत समाप्त हो जायेगी। अभी शेष इमारत बनाने के लिए किसी ठेकेदार की चिट्ठी नहीं आई। यदि ठेका न हुआ तो १५ दिसम्बर से अमानी काम आरम्भ होगा। (सद्धर्म प्रचारक, बुधवार १३ कार्तिक, संवत् १९६५, ता० २८ अक्टूबर, १९०८)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल समाचार

२ अक्टूबर, १९८३ को गांधी जयन्ती के अवसर पर मातृ ग्राम कांगड़ी में साक्षरता दिवस का आयोजन किया गया। इस अवसर पर आयोजित समारोह की अध्यक्षता माननीय कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा ने की। साक्षरता दिवस का उद्घाटन कुलपति जी ने श्यामपट पर "ॐ" लिखकर किया। गांव के निरक्षर लोगों ने जिसको अपनी स्लेटों पर लिखने का प्रयास किया। सर्वप्रथम डा० बी०डी० जोशी ने साक्षरता अभियान पर अपने भाषण में देश में वर्तमान निरक्षर लोगों की संख्या के विषय में जानकारी दी एवं बताया कि इस अभियान के लिये ४००० रु० की ग्रान्ट प्राप्त हो चुकी है। डा० विजय शंकर सक्सेना, अध्यक्ष वनस्पति विभाग ने अपने भाषण में आशा व्यक्त करते हुए कहा कि कांगड़ी ग्राम के अनपढ़ लोग प्रौढ़ शिक्षा से लाभ उठाकर अपना जीवन स्तर ऊंचा उठाने का प्रयास करेंगे।

अपने भाषण में श्री कुलपति जी ने इस अभियान की महत्ता पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि हमें विशेष रूप से नारी को शिक्षित करना है क्योंकि नारी ही मां के रूप में प्रथम शिक्षा अपने शिशु को देती है।

अन्त में कुलसचिव महोदय ने समस्त उपस्थित महानुभावों का धन्यवाद किया तथा विश्व-विद्यालय की ओर से कांगड़ी ग्राम के लोगों को साक्षर बनाने में पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन दिया तथा गुरुकुल के उद्देश्य से साक्षरता अभियान को जुड़ा हुआ बतलाते हुए कहा कि आर्य समाज का उद्देश्य ही शिक्षा का प्रचार करना है। इसलिये गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को इस कार्य में अग्रणी रहना अत्यन्त आवश्यक है। इस सभा का संचालन डा० त्रिलोक चन्द्र जी ने किया। जिन्हें प्रौढ़ शिक्षा अधिकारी नियुक्त किया गया। इस अवसर पर उन्होंने संकल्प लिया कि कांगड़ी ग्राम के १५ से पैंतीस वर्ष के किसी स्त्री पुरुष को अशिक्षित नहीं रहने दिया जायेगा।

दिनांक १० अक्टूबर, १९८३ को कुलसचिव डा० जबरसिंह सेंगर को कुछ अज्ञात व्यक्तियों ने गोली चलाकर जख्मी कर दिया। डा० सेंगर ने जो कि स्कूटर पर सवार थे, अत्यन्त साहस का परिचय दिया, वे सीधे मुख्य कार्यालय पहुँचे। जहां से उन्हें तुरन्त अस्पताल ले जाया गया। इस घटना से समस्त विश्वविद्यालय में रोष व्याप्त हो गया तथा इस प्रकार की घटना की पुनरावृत्ति को रोकने के लिये विशेष कदम उठाने की मांग की गयी।

दिनांक ३ नवम्बर, १९८३ अजमेर में आयोजित ऋषि दयानन्द निर्वाण शताब्दी के अवसर पर डा० राकेश शास्त्री, संस्कृत विभाग तथा डा० त्रिलोक चन्द्र, दर्शन विभाग के नेतृत्व में वेद महाविद्यालय एवं कला महाविद्यालय के छात्रों का एक दल सरस्वती यात्रा पर अजमेर गया तथा वहां के सभी आयोजनों में उत्साह पूर्वक भाग लिया। साथ ही वहां के एतिहासिक स्थलों पुष्कर तीर्थ, ढाई दिन का झोंपड़ा एवं आमेर का किला आदि का अवलोकन कर ज्ञान वृद्धि की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनांक ५ नवम्बर, १९८३ ऋषि दयानन्द निर्वाण शताब्दी के अवसर पर वैदिक साहित्य के प्रख्यात ११ विद्वानों–१. पं० विश्वनाथ जी (भू०पू० वेदोपाध्याय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय) २. पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार (विजीटर एवं भू०पू० कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय) ३. आचार्य प्रियव्रत जी (भू० पू० कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय) ४. पं० सत्यकाम विद्यालंकार ५. पं० रामनाथ वेदालंकार (भू०पू० उपकुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय) ६. पं० विराज वेदालंकार ७. पं० सत्यदेव भारद्वाज ८. पं० नरदेव जी ९. डा० दिलीप वेदालंकार १०. पं० क्षितीश कुमार वेदालंकार ११. आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार (वर्तमान उपकुलपति, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय) को सम्मानित किया गया। यह हमारे लिए अत्यन्त गौरव की बात है क्योंकि इससे विश्वविद्यालय की गरिमा में श्री वृद्धि हुई है।

दिनांक २० नवम्बर, १९८३ को विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में कालिदास अकादमी द्वारा अखिल भारतीय विश्वविद्यालय स्तर पर एक संस्कृत–वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व–संस्कृत विभाग के वरिष्ठ प्राध्यापक प्रो० वेदप्रकाश शास्त्री द्वारा प्रशिक्षित **दूधपुरी गोस्वामी** (वेदालंकार प्रथम वर्ष) तथा **ब्र० सत्यदेव** (एम० ए० संस्कृत द्वितीय वर्ष) ने किया। इनमें से दूधपुरी गोस्वामी ने प्रथम तथा सत्यदेव ने तृतीय स्थान प्राप्त कर विश्वविद्यालय के गौरव में श्री वृद्धि की। पुरस्कार स्वरूप दूधपुरी गोस्वामी को एक स्वर्ण पदक तथा १०० रु० नकद एवं ब्र० सत्यदेव को कांस्य पदक एवं १०० रु० नकद रूप में प्राप्त हुए। इन दोनों छात्रों के संयुक्त प्रयास के फलस्वरूप विश्वविद्यालय को एक चल विजयोपहार प्राप्त हुआ। इसके लिये दोनों छात्र बधाई एवं प्रशंसा के पात्र हैं।

२६ नवम्बर, १९८३ को कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा जी की अध्यक्षता में विज्ञान महाविद्यालय में एक सभा का आयोजन किया गया। इस में मुख्य अतिथि श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी के दौहित्र, संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषा के विद्वान्, वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ एवं उच्चकोटि के सम्पादक पं० सत्यकाम विद्यालंकार जी ने मुख्य अतिथि पद को सुशोभित किया। इसमें सर्वप्रथम आचार्य रामप्रसाद जी ने मुख्य अतिथि का परिचय दिया पश्चात् डा० त्रिलोक चन्द्र, योग निदेशक द्वारा गत वर्ष १ नवम्बर १९८२ को स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय योग प्रशिक्षण केन्द्र की संक्षिप्त रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी। इसमें ५२ प्रशिक्षार्थियों ने प्रवेश लिया था, जिनमें ४६ प्रशिक्षार्थी उत्तीर्ण हुए। उत्तीर्ण छात्रों को पं० सत्यकाम विद्यालंकार जी ने प्रमाण पत्र प्रदान किये एवं छात्रों को आशीर्वाद देते हुए कहा कि—"गुरुकुल का लक्ष्य वेद–साहित्य का अनुवाद तथा प्रचार करना तथा जीवन को कल्याणकारी कार्यों में लगाने के लिये प्रेरित करना है। योग एक साधन है, इसका लक्ष्य ईश्वर की निकटता प्राप्त करना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनांक २ दिसम्बर, को अकस्मात् ही जन्तु विभाग के प्रवक्ता डा० तिलकराज सेठ को जबरदस्त दिल का दौरा पड़ा, जबकि इससे पूर्व वह पूर्ण रूपेण स्वस्थ थे। उन्हें तत्काल राम कृष्ण मिशन अस्पताल में भर्ती कराया गया। चिकित्सकों ने उन्हें तीन माह की पूर्ण विश्राम की सलाह दी है। अब वे धीरे-धीरे स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। गुरुकुल परिवार उनके शीघ्र स्वास्थ्य लाभ की कामना करता है।

३ दिसम्बर, १९८३ को आचार्य रामप्रसाद जी वेदालंकार की अध्यक्षना में एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमें डा० सत्यकाम विद्यालंकार ने 'वेदों की वैज्ञानिकता' विषय पर अपने विद्वत्तापूर्ण विचार प्रस्तुत किये। सभा का संयोजन डा० भारत भूषण विद्यालंकार, वेद विभाग ने किया।

दिनांक ३ दिसम्बर, को पं० सत्यकाम विद्यालंकार (श्रद्धानन्द जी के दौहित्र) के साथ कुलपति श्री हूजा जी एवं डा० बी. डी. जोशी ने मातृ ग्राम कांगड़ी की पाठशाला के भवन में रात्रि वास किया। रात्रि ८ से १० बजे तक पं० सत्यकाम जी की अध्यक्षता में समस्त ग्रामवासियों की एक सभा का आयोजन किया गया। इस सभा में ग्रामवासियों की अनेक समस्यायें उभर कर सामने आईं और बड़े खुले रूप से समस्याओं एवं उनके निदानों पर विचारों का आदान प्रदान हुआ। श्री शराफत अली, ग्राम विकास अधिकारी के इस विचार विमर्श में सक्रिय योगदान से सभा की व्यवहारिकता को अधिक लाभ मिला।

दिनांक ४ दिसम्बर,८३ की प्रातः ६ बजे ही माननीय कुलपति जी के अनुरोध पर पं. सत्यकाम जी द्वारा गांव के छात्रों एवं ग्रामवासियों के लिये अत्यन्त प्रेरणा पूर्ण श्रमदान कार्य का श्री गणेश किया गया।

दिनांक ७ दिसम्बर से १७ दिसम्बर ८३ तक जन्तु विभाग के अध्यक्ष डा. बी.डी. जोशी के नेतृत्व में विज्ञान महाविद्यालय के छात्रों का एक दल सरस्वती यात्रा पर रामेश्वरम् एवं कन्याकुमारी गया तथा छात्रों ने सामुद्रिक जीव विज्ञान से सम्बन्धित अनेक जानकारी प्राप्त की। स्नेक पार्क,मद्रास तथा मद्रास यूनिवर्सिटी में हो रही अन्तरिक्ष विज्ञान प्रदर्शनी से भी छात्रों का ज्ञानवर्धन हुआ।

दिनांक ९ दिसम्बर,८३ को आचार्य श्री रामदेव दिवस के उपलक्ष्य में वेद महाविद्यालय के शिक्षक-कक्ष में एक सभा का आयोजन किया गया। सभा की अध्यक्षता आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार ने की। इस अवसर पर वक्ताओं ने आचार्य श्री रामदेव जी के त्यागमय जीवन पर अपने विचार प्रस्तुत किये तथा बताया कि वे हमारे लिये प्रेरणा के स्रोत हैं। प्रमुख वक्ताओं में आचार्य श्री रामप्रसाद जी वेदालंकार, श्री सुरेश चन्द्र त्यागी, (प्राचार्य विज्ञान महाविद्यालय), प्रो० वेद प्रकाश शास्त्री एवं प्रो० मनुदेव बन्धु रहे। सभा का संयोजन प्रो० वेदप्रकाश शास्त्री संस्कृत विभाग ने किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३ दिसम्बर १९८३ को स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के अवसर पर श्रद्धानन्द द्वार से एक शोभा यात्रा में मान्य कुलपति हूजा जी, आचार्य रामप्रसाद जी,डा० जबर सिंह सैंगर (कुलसचिव) सुरेश चन्द्र त्यागी, प्राचार्य विज्ञान महाविद्यालय तथा सहायक मुख्याधिष्ठाता एवं विश्वविद्यालय तथा गुरुकुल विभाग के समस्त प्राध्यापक, कर्मचारियों, तथा छात्रों ने भाग लिया। सबसे आगे गुरुकुल विभाग के छात्र बैण्ड की धुन के साथ मस्त होकर श्रद्धानन्द जी के नारे लगाते हुये चल रहे थे। यह शोभा यात्रा वेद मन्दिर में पहुंचकर एक सभा में परिवर्तित हो गयी। जिसकी अध्यक्षता कुलपति श्री हूजा जी ने की । सभा का संयोजन डा० जयदेव वेदालंकार दर्शन विभाग ने किया। सभा में स्वामी श्रद्धानन्द जी को भावभीनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित की गयी तथा उनके स्वप्नों को मूर्त रूप प्रदान करने का संकल्प लिया गया।

दिनांक २१ से ३१ दिसम्बर ८३,तक गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय राष्ट्रीय सेवा योजना का द्वितीय वार्षिक शिविर पुण्य भूमि कांगड़ी ग्राम में सम्पन्न हुआ। इस वर्ष भी शिविर में ५४ शिविरार्थियों ने भाग लिया एवं शिविर का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व तथा व्यवस्था का भार डॉ. बी. डी. जोशी ने कुशलता-पूर्वक वहन किया। कुलपति श्री हूजा जी ने दो दिन पूर्ण रूप से शिविर स्थल में बिताये और छात्रों के साथ मिलकर श्रमदान एवं बौद्धिक गोष्ठियों में सक्रिय रूप से भाग लिया। शिविर का उद्घाटन २३-१२-८३ को श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के पुण्य अवसर पर प्रो० एल० आर० शाह, भूतपूर्व निदेशक, राष्ट्रीय सेवा योजना, भारत सरकार द्वारा सम्पन्न हुआ। समारोह की अध्यक्षता मान्य कुलपति श्री हूजा जी ने की।

दिनांक २६ दिसम्बर ८३ का लोकसभा अध्यक्ष डॉ० बलराम जाखड़ जी भी शिविर स्थली कांगड़ी ग्राम पधारे और स्थल के प्राकृतिक वातावरण से अत्यन्त प्रभावित हुए। लगभग प्रत्येक छात्र से भी जाखड़ जी ने व्यक्तिगत रूप से परिचय प्राप्त किया और ऐसे शिविरों की उपयोगिता की अत्यन्त सराहना की।

दिनांक २८ दिसम्बर ८३ को श्री वेंकट नारायणन कृषि उत्पादन आयुक्त, उ.प्र. सरकार, भी कांगड़ी ग्राम पधारे तथा शिविरार्थियों से विचार विमर्श किया। बाद में कुलपति की अध्यक्षता में एक सभा का आयोजन किया गया, जहां ग्रामवासियों की समस्याओं तथा निदानों पर विस्तृत चर्चा हुई।

इस अवसर पर जिला बिजनौर के लगभग सभी उच्च प्रशासनिक अधिकारी उपस्थित थे। दिनांक ३१-१२-८३ को शिविर के समापन समारोह के मुख्य अतिथि बिजनौर के जिलाधीश श्री दर्शन सिंह जी रहे। उन्होंने आश्वासन दिया कि गुरुकुल विश्वविद्यालय के माध्यम से किये जा रहे कार्य में भरपूर सहयोग देगें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ जनवरी १९८४ को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से स्वीकृति प्राप्त हो जाने पर एक जनवरी से तीन केन्द्रों पर प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत अध्ययन-अध्यापन का कार्य आरम्भ हो गया। निम्नलिखित गांवों में यह कार्यक्रम चल रहा है :—

कांगड़ी, जगदीशपुर, जमालपुर, सीतापुर, रोहालकी, किशनपुर, मेहवड़ कलां, खेड़ली, टिबड़ी, कुंजबाग आदि। कनखल व ज्वालापुर के कुछ मौहल्लों में भी प्रौढ़ शिक्षा के केन्द्र चल रहे हैं। जमालपुर गांव में दो महिलायें महिला केन्द्र चला रही हैं। अत्यन्त उत्साह और प्रगति के साथ अशिक्षितों को शिक्षित बनाया जा रहा है।

१२ जनवरी, १९८४ को गुजरात विद्यापीठ के कुलपति डा० रामलाल पारीख का गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आगमन हुआ। उनके सम्मान में वेद महाविद्यालय के शिक्षक–कक्ष में एक सभा का आयोजन किया गया। जिसका संयोजन डा० विनोद चन्द्र सिन्हा, अध्यक्ष इतिहास विभाग ने किया। पारीख जी को माल्यार्पण के पश्चात् कुलपति श्री हूजा जी ने अपने संक्षिप्त भाषण में गुरुकुल किस दिशा में कार्य कर रहा है, इस ओर इंगित किया। मुख्य अतिथि ने गुरुकुल के कार्य की प्रशंसा करते हुए गुरुकुल को सर्वाधिक ऊंची एवं पुरानी संस्था बताया और कहा कि इस समय भारतीय संस्कृति पर चारों ओर से आक्रमण हो रहा है। गुरुकुल जैसी संस्थाएं ही इस आक्रमण से भारत की रक्षा कर सकती हैं। उन्होंने गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली की प्रशंसा करते हुए अपने आदर्शों पर दृढ़ रहने का आग्रह किया।

दिनांक १३ जनवरी, ८४ को उज्जैन में सम्पन्न हुई प्रतियोगिता के विजेताओं दूधपुरी एवं सत्यदेव के सम्मानार्थ एक सभा का आयोजन स्टाफ रूम में किया गया। मान्य कुलपति श्री हूजा जी के आदेश से समस्त कार्यवाही संस्कृत में ही सम्पन्न हुई। गुरुकुल के मूल भूत उद्देश्यों पर मान्य कुलपति जी ने प्रकाश डालते हुये आशा व्यक्त की कि गुरुकुलीय परिसर में इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पूर्ण प्रयास किया जायेगा। कुलपति जी की संस्कृत भाषण सुनने की इच्छा से प्रो० वेद प्रकाश शास्त्री, डा० जयदेव, डा० विजय पाल शास्त्री, डा० सत्यव्रत राजेश तथा डा० राकेश शास्त्री ने संस्कृत भाषा में ही भाषण दिया। अन्त में आचार्य श्री रामप्रसाद वेदालंकार जी ने संस्कृत में अपने विचार प्रकट करते हुए धन्यवाद दिया।

२६ जनवरी, ८४ को परिसर में अत्यन्त उत्साहपूर्वक गणतन्त्र दिवस मनाया गया। वि०वि० के कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजाजी ने ध्वजारोहण किया। ध्वजारोहण के पश्चात् उन्होंने एन.सी.सी. कैडेट एवं विद्यालय स्काउट्स की सलामी भी ली। अपने संक्षिप्त भाषण में श्री कुलपति जी ने कहा कि गुरुकुल प्रगति की दिशा में बढ़ा रहा है, किन्तु हमें और भी उत्साह के साथ इस ओर सक्रिय होना चाहिए। राष्ट्रीय आन्दोलन में गुरुकुल की भूमिका पर भी उन्होंने प्रकाश डाला। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगति का एक वर्ष

वर्ष १९८३ में विश्वविद्यालय पुस्तकालय प्रगति के पथ पर तीव्र गति से अग्रसर हुआ। इस आलोच्य वर्ष में पुस्तकालय के संग्रह में लगभग २८०० पुस्तकों की वृद्धि हुई, छात्रों के लिये विभिन्न विषयों की लगभग १५०० पाठ्य पुस्तकें मंगवाई गईं।

गत वर्ष जहां विभिन्न विषयों की २७० पत्रिकायें पुस्तकालय में मंगवाई जाती थीं वहां आलोच्य वर्ष के अन्त तक ३५० पत्रिकायें मंगवाई जाने लगीं, गुरुकुल के इतिहास में प्रथम बार सभी विषयों में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के जरनल्स मंगवाने का कार्य प्रारम्भ किया गया। लगभग ५०,००० रु० की राशि अंतर्राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं को मंगवाने में विनियोजित की जा रही है।

पुस्तकालय को इस वर्ष सर्व प्रथम केवल पुस्तिकों की सुरक्षा एवं जिल्दबंदी हेतु संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार से ३०,००० रुपये का अनुदान प्राप्त हुआ, इस अनुदान से पुस्तकालय की १००० पत्रिकाओं की जिल्दबंदी का कार्य भी तेज गति से कराया जा रहा है।

पुस्तकालय में यहां के पुराने एवं दुर्लभ संग्रह को देखते हुए १९०० से पहले की सभी पुस्तकों का 'दुर्लभ पुस्तक संग्रह' के नाम से पृथक् संग्रह बनाया जा रहा है। इस संग्रह में से धीरे धीरे अत्यन्त दुर्लभ पुस्तकों को प्रकाशित करने की योजना भी सातवीं पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम में सम्मिलित की जा रही है।

पुस्तकालय समिति की दिनांक २-१-८४ को सम्पन्न बैठक में पुस्तकालय की अनेक प्रकार की वर्षों से उलझी समस्याओं का समाधान किया गया। अब पुस्तकालय में दीमकों से पुस्तकों का नष्ट होना बंद हो गया, सारे पुस्तकालय भवन को पेस्ट कन्ट्रोल ऑफ इण्डिया के सहयोग से दीमक से सुरक्षित कर दिया गया है।

विजिटिंग टीम के समक्ष पुस्तकालय के स्वरूप को पूर्ण आधुनिक बनाने हेतु अनेक योजनायें प्रस्तुत की जा रही हैं।

१ समस्त पुस्तकालय संग्रह को खुले परिवेश में रखने हेतु स्टील की रैक्स मंगवाये जाने का प्रस्ताव।

२ प्राध्यापकों एवं शोध छात्रों के गंभीर अध्ययन हेतु पृथक् से कक्ष बनवाने का प्रस्ताव।

३ माइक्रोफिल्मिंग कक्ष बनवाने का प्रस्ताव।

४ पुस्तकालय को ५,००,००० रुपये का विशेष अनुदान दिये जाने का प्रस्ताव।

५ इस पुस्तकालय की छवि को राष्ट्रीय वैदिक पुस्तकालय के रूप में प्रकट करने हेतु व्यापक योजनाओं पर विचार किया जा रहा है।

पुस्तकालय में इस वर्ष फोटो स्टेट मशीन के आ जाने से शोध-छात्रों का बहुत सुविधा हो सकेगी, इससे पुस्तकालय की दुर्लभ सामग्री को भी सुरक्षित करने में सहायता मिलेगी।

विश्वविद्यालय के निर्धन छात्रों को पुस्तकालय में आंशिक रोजगार देने के कार्यक्रम में इस वर्ष ४ छात्रों का चयन किया। पुस्तकालय की प्रगति में यहां के अधिकारियों, प्राध्यापकों का भी प्रत्येक पग पर सहयोग प्राप्त होता रहता है।

पुस्तकालय में १९८३ से प्रतियोगात्मक पुस्तक संग्रह की पृथक् से स्थापना की गई, विभिन्न प्रतियोगात्मक परीक्षाओं में बैठने वाले छात्रों के लिये यह संग्रह वरदान सिद्ध हुआ है।

प्रस्तुतकर्ता
जगदीश विद्यालंकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य समाज के नियम

१ सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२ ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

३ वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेदों का पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।

४ सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५ सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

६ संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७ सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य बर्तना चाहिए।

८ अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९ प्रत्येक को अपनी उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१० सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

शर्मा प्रिण्टर्स (नजदीक पंजाब नेशनल बैंक) ज्वालापुर।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल-पत्रिका

चैत्र, वैशाख : २०४० | अंक : ३-४

मार्च-अप्रैल : १९८४ | वर्ष : ३६ | पूर्णांक: ३५४-५५

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालयस्य मासिक-पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक-मण्डल

प्रधान-सम्पादक ... ... रामप्रसाद वेदालङ्कार
आचार्य एवं उपकुलपति

सम्पादक ... ... डॉ० विनोद चन्द सिन्हा
अध्यक्ष, इतिहास-विभाग

सह-सम्पादक ... ... श्री रामेश्वर दयाल गुप्त
एम० ए० (द्वितीय वर्ष)

प्रबन्धक-सम्पादक ... ... श्री मनुदेव 'बन्धु'
वेद-विभाग

डॉ० राकेश शास्त्री
संस्कृत-विभाग

गुरुकुल-सम्वाददाता ... ... डॉ० रामप्रकाश शर्मा
संस्कृत-विभाग

विषय-सूची

विषय	लेखक	पृष्ठ-संख्या
१—श्रुति सुधा	आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार	१
२—महापुरुषों के वचन	,,	२
३—महापुरुष चरितम्		३
४—सम्पादक के नाम पत्र	डॉ० गंगाराम गर्ग	४
५—वैदिकयुगे नारीजातिश्च	डॉ० प्रमिला वात्स्यायन	६
६—स्वागत-भाषण	श्री बलभद्र कुमार हूजा	८
७—दीक्षान्त-भाषण	श्री सत्यप्रकाश सरस्वती	१८
८—कविता	स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती	२७
९—गुरुकुलों की समस्याओं का हल	डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार	२८
१०—बृहत्तर भारत में भारतीय संस्कृति	डॉ० विनोद चन्द्र सिन्हा	३२
११—मुझे आगे बढना है (कविता)	श्री महेन्द्र सिंह 'उत्साही'	३६
१२—आचारशास्त्र एक तुलनात्मक अध्ययन	डॉ० जयदेव वेदालंकार	३७
१३—फूलों की घाटी	डॉ० काश्मीर सिंह भिण्डर	४२
१४—स्वतन्त्र देश में अवसान (कविता)	श्री के० एल० शर्मा	४४
१५—राष्ट्रोत्थान कौन कर सकता है ?	श्री सुरेशचन्द्र त्यागी	४५
१६—विश्वविद्यालय के प्रांगण से	आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार	४८
१७—राष्ट्रीय सेवा योजना वृत्तान्त	डॉ० बी० डी० जोशी	५२
१८—ईश्वरीय ज्ञान की कसौटी	डॉ० रामेश्वर दयाल गुप्त	५७
१९—सम्मति	श्री भूपेन्द्र हूजा	५८
२०—पुस्तक के सम्बन्ध में	डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार	६०
२१—पुस्तक-समीक्षा	डॉ० राकेश शास्त्री	६१
२२—श्रद्धानन्द की लेखनी से	श्री जगदीश विद्यालंकार	६२
२३—गुरुकुल समाचार	डॉ० राकेश शास्त्री	६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

गुरुकुल पत्रिका

(गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालयस्य, मासिक पत्रिका)

चैत्र, वैशाख २०४० अंक : ३-४
मार्च, अप्रैल : १९८४ वर्ष : ३६ पूर्णांक ३५४-५५

श्रुति-सुधा

इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधिक्षमा विशुरूपं यदस्य।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतं चिदर्वाक्॥ साम० ५८७॥

अन्वय :—इन्द्रः जगतः चर्षणीनां राजा, अधिक्षमा विश्वरूपं यत् [अस्ति तत्] अस्य [एव अस्ति] ततः दाशुषे वसूनि ददाति। उपस्तुतं राधः अर्वाक् चित् चोदत्।

सं० अन्वयार्थ :—इन्द्र संसार का, मनुष्यों का राजा है। इस पृथिवी पर नाना रूपों वाला जो कुछ भी है वह सब भी इसी का ही है। उसी में से दानी को वह नानाविध वैभव देता है। अति प्रशंसनीय धन वह हमारी ओर प्रेरित करे।

अन्वयार्थ :—(इन्द्रः जगतः चर्षणीनां राजा) सर्वविध ऐश्वर्यों का स्वामी, परमेश्वर इस सकल जगत् का और इस में रहने वाले सभी मनुष्यों का राजा है-स्वामी है। इतना ही नहीं (अधिक्षमा विशुरूपं यत्) इस पृथिवी पर नानारूपों वाला जो प्राणिजात है वा जो पदार्थ जात है वह भी सब (अस्य) इस इन्द्र का ही है, या इस सब का भी वही राजा है। (ततः दाशुषे वसूनि ददाति) वह जगत् का स्वामी वह प्रभु अति प्रशंसनीय मनोवांछित अपने धन को भी इधर आत्मसमर्पण करने वाले साधक की ओर प्रेरित करे।

वह इन्द्र ही इस सम्पूर्ण संसार का और इसमें विद्यमान प्राणिसमूह और पदार्थसमूह का स्वामी है, राजा है। वह सर्वविध धन-वैभव दानशील को देता है। अति स्तुत्य वैभव-आन्तरिक दिव्य वैभव भी इस आत्मसमर्पण करने वाले उपासक की ओर ही वह प्रवाहित करता है। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापुरुषों के वचन

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।

(गीता ६।५)

मनुष्य को अपने ही सहारे अपना उद्धार करना चाहिये और हीनभावना से अपने को बचाना चाहिये।

कुलीनमकुलीनं वा वीरं पुरुषमानिनम् ।।
चरित्रमेवं व्याख्याति शुचिं वा यदि वाशुचिम् ।।

(वा० रामा०-२।१०९।४)

मनुष्य के चरित्र या बर्ताव से ही पता लग जाता है कि वह कुलीन है या अकुलीन, वीर है या मात्र डींग मारने वाला तथा पवित्र है या अपवित्र।

यः संयमधुरां धत्ते धैर्यमालम्ब्य संयमी ।
स पालयति यत्नेन वाग्वने सत्यपादपम् ।।

(ज्ञानार्णव-पृ० १२१)

जो संयम से रहने वाला व्यक्ति धैर्य का सहारा लेकर संयम की धुरा को धारण करता है, वही वाणी के वन में सत्यरूपी वृक्ष की यत्नपूर्वक रक्षा करता है अर्थात् धैर्य और संयम के बिना मनुष्य सत्य की रक्षा नहीं कर सकता।

न कंचिदवमन्येत सर्वस्य शृणुयान्मतम् ।
बालस्याप्यर्थवद्वाक्यमुपयुञ्जीत पण्डितः ।।

(अर्थशास्त्र-चाणक्य १/१५)

बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिये कि वह किसी का अपमान न करे, सबके मत को सुने, एक बालक की भी अच्छी बात को सुनकर उसका उपयोग करे।

नात्मानमवमन्येत पूर्वाभिरसमृद्धिभिः ।
आ मृत्योः श्रियमन्विच्छेन्नैनां मन्येत दुर्लभाम् ।।

(मनुस्मृति ४/१३७)

पूर्व की विफलताओं के कारण अपने को हीन समझकर हतोत्साहित नहीं होना चाहिये, प्रत्युत् अभ्युदय के लिए जीवन पर्यन्त परिश्रम करते रहना चाहिए और उसको दुर्लभ नहीं मानना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

□□□

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापुरुष चरितम्

स्वामी दर्शनानन्द :

यः ख्यातः सद्दार्शनिकाग्रणीः सन् बभूव शास्त्रार्थमहारथीन्द्रः ।
यद् युक्तिजातं प्रबलं नितान्तं स दर्शनानन्दसरस्वतीड्यः ।।

जो अपने समय के प्रसिद्ध उत्तम दार्शनिकों में अगुआ होकर शास्त्रार्थ महारथियों में श्रेष्ठ बन गये। जिनकी युक्तियाँ बहुत प्रबल होती थीं, वे स्वामी दर्शनानन्द जी सरस्वती स्तुति के योग्य हैं।

महात्मा नारायण स्वामी :

परोपकारे सततं प्रसक्तान्, दान्तान् प्रशान्तान् सुगुणैश्च कान्तान् ।
सप्रश्रयं तानिह संस्मरामो, नारायण स्वामी महात्मनो वयम् ।।

परोपकार में निरन्तर तत्पर, जितेन्द्रिय, प्रशान्त अपने गुणों से कान्त, महात्मा नारायण स्वामी का हम आदर पूर्वक स्मरण करते हैं।

महात्मा हंसराज :

योग्यो भृशं किन्तु समाजसेवाव्रतं समादाय चकार कार्यम् ।
आजीवनं साधु महान् मनीषी, श्री हंसराजः किल सोऽभिनन्द्यः ।।

अत्यधिक योग्य होते हुए भी समाज सेवा के कठिन व्रत को लेकर जिसने आजीवन कार्य किया। वह सज्जन, महान् विद्वान् श्री हंसराज निश्चय ही सभी के अभिनन्दन के योग्य हैं।

धर्मवीर लेखराम :

वेदोदितो धर्म इहास्त्यभीष्टः, लोकस्य सर्वस्य हिताय नूनम् ।।
तस्य प्रचारे सततं प्रसक्तः, श्री लेखरामो महनीय आसीत् ।

सम्पूर्ण संसार के कल्याण के लिये निश्चय ही वेद में कहा गया धर्म अभीष्ट है, ऐसा समझकर वेद धर्म के प्रचार में निरन्तर लगे हुए लेखराम जी सबके पूजनीय थे।

(महापुरुषकीर्तनम्—पं० धर्मदेव)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक के नाम पत्र

श्रीमन्नमस्ते।

११ दिसम्बर, १९८३ को महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी की ओर से स्वामी सत्यप्रकाश जी सरस्वती एवं राय साहब चौधरी प्रताप सिंह जी ने आर्य समाज, अनारकली, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली में जब मेरा सम्मान किया तो मुझे अन्य सामग्री एवं ग्रन्थों के साथ परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा प्रकाशित "महर्षि दयानन्द निर्वाण शती स्मृति ग्रन्थ" अर्थात् Dayananda Commemoration Volume भी मिला। इसमें मेरा भी लेख है। ग्रन्थ उत्तम बना है। इसके लिये सभी संबद्ध महानुभाव बधाई के पात्र है।

उक्त ग्रन्थ के "हिंदी खण्ड" में पहला लेख श्री दीनानाथ सिंह आर्य का है जो महर्षि के जीवन के अन्तिम दिवस से संबन्धित है। लेख बड़े परिश्रम से लिखा गया है। उन्होंने अपने लेख के अंतिम भाग में लिखा है कि श्री गोपाल राव हरि जी ने अपने ग्रन्थ में कहीं भी जोधपुर की विरोधी प्रवृत्तियों का उल्लेख नहीं किया, न नन्ही जान का, न नौकर द्वारा चोरी का। लेख के अन्त में श्री आर्य जी लिखते हैं—"जगन्नाथ रसोइये का नाम, दूध के साथ कांच पीसकर दिया जाना और स्वामी जी का जगन्नाथ को रुपया देना तथा देश की सीमा से बाहर जाने की सलाह–ऐसी कथाएं हैं, जो लोक प्रचलित हैं–उनकी पुष्टि करना भी कठिन है और अस्वीकार करना भी।"

महर्षि को विष दिये जाने के विषय में श्री गोपालराव हरि, देवेन्द्र बाबू एवं जोधपुर के राव राजाओं के क्या विचार हैं, मैं इस विवाद में पड़ना नहीं चाहता, पर एक दो तथ्य प्रस्तुत करना चाहता हूँ। महर्षि का निर्वाण अक्तूबर१८८३ में हुआ और कुछ ही मास बाद अगले ही वर्ष १८८४ में मैक्समूलर ने अपने लेख में लिखा है कि उन्हें समाचार पत्रों में से संकेत देखने को मिले हैं कि स्वामी जी की मृत्यु उनके शत्रुओं द्वारा विष देने से हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि इंग्लैंड में बैठे लोगों को भारत में ही रहने वालों की अपेक्षा भारत के विषय में अधिक जानकारी थी। इसका कारण भी स्पष्ट है क्योंकि उस समय इंग्लैंड का भारत पर राज्य था। यही नहीं, मैक्समूलर ने अपनी मृत्यु से एक वर्ष पूर्व अर्थात् १८९९ में स्वामी जी पर एक और लेख लिखा था, जिसमें स्वामी जी को जहर देने वाली बात को दुहराया है और अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है कि उन्हें बतलाया गया है कि जोधपुर की वेश्याओं के बहकावे पर किसी ब्राह्मण रसोइये द्वारा स्वामी जी को जहर दिया गया और रसोइये ने आत्महत्या कर ली थी। आगे मैक्समूलर महोदय लिखते हैं कि स्वामी जी की सहसा मृत्यु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का यही कारण था, अन्यथा दयानन्द बहुत शक्तिशाली थे और उनमें नेतृत्व करने की क्षमता थी। ये बातें मैक्समूलर ने कहां-कहां लिखी हैं, इसकी पूरी जानकारी निर्वाण शताब्दी पर ही प्रकाशित मेरे ग्रन्थ "World Perspectives on Swami Dayananda Saraswati" में पृष्ठ संख्या १२४ और १२७ पर दी गई है। यह ग्रन्थ Concept ने छापा है और Daystar Publications, B-2/48 A, Lawrence Road, New Delhi–110035. (फोन : ७१२११६१) से भी उपलब्ध है। डॉ० भवानीलाल भारतीय ने भी अपने ग्रन्थ "नवजागरण" के पुरोधा : दयानन्द सरस्वती (१९८३ पृष्ठ ५२३) में मैक्समूलर के इन लेखों की ओर संकेत किया है। इन तथ्यों से स्पष्ट है कि महर्षि को विष देने वाली बात कल्पित नहीं है, बल्कि उसी समय ज्ञात तथ्यों पर आधारित है।

—डॉ० गंगाराम गर्ग
II/२०, वानप्रस्थाश्रम, ज्वालापुर
हरिद्वार–२४९४०७

दिनांक १५-१२-१९८३

□ □ □

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥
(यजु० ४०।२)

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने कर्तव्य कर्मों को करता हुआ ही पूर्ण आयु–पर्यन्त जीने की, अर्थात् अपने को समुन्नत करने की इच्छा करे। उसका कल्याण इसी में है; कर्तव्य कर्म को छोड़कर भागने में नहीं। कर्मबन्धन से बचने का यही उपाय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैदिकयुगो नारीजातिश्च

—डॉ० प्रमिला वात्स्यायन
रीडर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
रांची गर्ल्स कॉलेज, रांची

कस्यचित् अपि समाजस्य प्रगतिं ज्ञातुं तत्समाजे तत्कालीनसमये नार्यावस्था कीदृशी इति ज्ञानमावश्यकम् । प्रगतिशीले समाजे नारी अपि स्वतंत्रव्यक्तित्वयुक्ता, शिक्षिता एवं प्रगतिशीला अस्ति । रुग्णे एवं पराङ्मुखे समाजे नारी दलिता, धर्षिता एवं अशिक्षिताऽस्ति । वेदेषु अस्माकं समाजस्य सांस्कृतिको निधिः सुरक्षितः मानवतायाः विकासस्य इतिहासश्च समाहितः । अतएव वैदिकयुगे नार्यावस्था कीदृशी आसीत् इति जिज्ञासा विशेषतया स्वाभाविकी अस्मिन् युगे यदा सर्वत्र नारीमुक्त्याः आन्दोलनस्य चर्चा श्रूयते ।

'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' इति कात्यायनस्मरणात् संहितावद् ब्राह्मणग्रन्थाः अपि वेदपदार्थान्तर्गता एव । वेदकालीनसमाजः निःसन्देहरुपेण पुरुषप्रधानः पितृमूलकः समाजः आसीत् । पुत्राः, कन्याः, वध्वः सर्वे तस्य छत्रछायायां सुखपूर्वकं अवसन् । पिता कन्यानां शिक्षादीक्षाविषये विशेष-सावधानः आसीत् । कन्याः अन्यविषयातिरिक्तं काव्यकलासंगीतनृत्याभिनयेषु अपि पारंगताः अभूवन् । ऋग्वेदे अनेकाः सूक्तविधायिकाः ऋषिकाः दृश्यन्ते । काक्षीवतः पत्नी घोषा निजतपस्यया मन्त्रदर्शनेन च अश्विनकुमारयोः अनुकम्पया परिपक्वावस्थायां विवाहसौख्यं अनुभूतवती । ऋग्वेदस्य दशममण्डले द्वौ सूक्तौ अश्विनीकुमाराभ्यां काक्षीवतीघोषायाः एव ।

कन्यानां उदारशिक्षायाः एव परिणामः आसीत् यत् लोपामुद्रा, अपाला, रोमशा, सूर्या प्रभृति ऋषिकाः ऋग्वेदकालीनसमाजे आसन् । उपनिषद्काले समाजस्य उच्चस्तरे कन्यासु अपि उपनयनसंस्कारः प्रचलितः आसीत् । 'पुराकल्पे तु नारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते' कथयति स्मृतिकारः । तदनन्तरं ताः विधिपूर्वकं शिक्षां अगृह्णन् । हारीतस्य इदं कथनं प्रेक्षणीयं-'द्विविधाः स्त्रियो ब्रह्मवादिन्यः सद्योद्बाहाश्च । ब्रह्मवादिनामग्नीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे च भैक्षचर्येति ।' ब्रह्मवादिनीः स्त्रियः उपनिषद्युगस्य विशिष्टता । ताः निजजीवनं ब्रह्मचिन्तने अनयन् । एताः समकालीनदार्शनिकैः सह शास्त्रार्थं अपि अकुर्वन् । बृहदारण्यके उपनिषदे याज्ञवल्क्यस्य पत्नी मैत्रेयी याज्ञवल्क्येन सह शास्त्रार्थे प्रवृत्ता आसीत् । मैत्रेय्याः जीवने, कार्यकलापे वाणयां च तत्त्वज्ञानस्य पूर्णता प्राप्यते । यदा याज्ञवल्क्यः निजसम्पत्तीनां विभाजनं करोति तदा मैत्रेयी कथयति 'येनाहं नामृता स्याम्, किं तेन कुर्यामिति ।' तदा याज्ञवल्क्यः तां प्रति आत्मतत्त्वं कथयति । वाचान्कवीगार्गी तम् एव याज्ञवल्क्यं शास्त्रार्थे पराजितवती । उपनिषद्काले नार्यः गुरुकुलेषु अध्यापिका रूपे अपि प्रतिष्ठिताः आसन् । पाणिनिः स्पष्टरुपेण ताः 'उपाध्यायाः' कथयति ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋग्वेदस्य विवाहसूक्ते विवाहस्य उच्चादर्शो दृश्यते। पतिः कथयति—

"गृभ्णामि ते सौभाग्यत्वाय हस्तं मया जरदष्टिर्यथासः।

भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यमणत्वादुर्गार्हपत्याय देवाः॥" (ऋ० १०/८५/३६)

अनेन सुस्पष्टं यत् धार्मिककार्येषु स्त्रीणां महत्त्वपूर्णस्थानं आसीत्। गृहस्थस्य किमपि कार्यं विना पत्नीं न अभवत्। अतएव पूर्वोक्तमन्त्रे पतिः कामयते पत्न्याः यावज्जीवनं साहचर्यम्। तैत्तिरीय-ब्राह्मणस्योक्तिरस्ति "अयज्ञियो वा एष योऽपत्नीकः" (२/२/२६)। वैदिकसिद्धान्तानुसारं पतिः पत्नी च एकस्य शरीरस्य द्वे अंगे आस्ताम्। एकं बिना द्वितीयं अपूर्णम्। विवाहसूक्ते पुनर्पुनः द्वयोः दीर्घजीवनस्य कामना कृता।

वैदिककाले काचित् क्षत्रियकन्याः एव स्वयंवराः आसन्। प्रचलितो विधिः अयमेव आसीत् यत् पिता एव कन्यायाः वरं चिनोति स्म 'ऋग्वेदस्य तृतीये मण्डले यत् कथितं 'पिता यत्र दुहितुः सेकमृञ्जन मनसा दधन्वे' (ऋ०, ३-३१-१) तत् इमं विधिं प्रति एव संकेतितम्। शतपथे ब्राह्मणे अपि सुकन्या कथयति यत् 'यस्मै मां, पिताऽदामैवाहं तं जीवन्तं हास्यामीति (शतपथ ब्राह्मण ४-१-५-९ विवाहविषयका) मातापित्रोः सम्मतिः कन्याय आवश्यकी आसीत्। बृहद्देवता अस्मिन् विषये एकं आख्यानं कथयति। श्यावाश्वः ऋषिः राजकन्यां पत्नीरूपे प्राप्तुं इच्छति। अतः सः नृपं निजाभिलाषया अवगतं करोति। नृपः निजां पत्नीं शशीयसीं वदति अस्मिन् विषये। तस्याः सहमत्या एव नृपः आप्तऋषित्वाय श्यावाश्वाय कन्यां ददाति। बालविवाहस्य एकोऽपि प्रसङ्गः ऋग्वेदे न प्राप्यते। ऋग्वेदस्य दशममण्डले वर्णितः विवाहः युवावस्थानन्तरं प्रौढावस्थायां कृतः विवाहः आसीत्। पारस्करगृह्यसूत्रे कथितं 'समुद्वह्य यथर्तु प्रवेशनम्।' अयं अभिगमनाज्ञा संकेतः यत् वरो वधू च आपन्नयौवनौ। यद्यपि वैदिकः आर्यः सामान्यतया केवलं सकृत् एव पाणिग्रहणं करोति स्म, तथापि यत्र-तत्र एकस्यैव नरस्य एकाधिकविवाहानां संकेतानि अपि प्राप्यन्ते।

दुहितारूपे, पत्नीरूपे, मातारूपे च स्त्री सर्वदा सम्मान्या आसीत्। विवाहसूक्ते सा "सम्राज्ञी श्वसुरे भव, सम्राज्ञी श्वश्रू वा भव। ननान्दरि सम्राज्ञी भव, समाज्ञी अधिदेवेषु।" इति आशीर्वचनेन समन्विता। न केवलं ताः गृहकार्येषु एव चतुराः आसन्, अपितु कृषिवाणिज्यादिकार्येषु अपि नराणां योगदायिकाः आसन्। नार्यः पतिभिः सह युद्धक्षेत्रं अपि अगच्छन्। अगस्त्यस्य पुरोहितस्य खेलस्य ऋषेः पत्नी विशाला निजपत्या सह युद्धक्षेत्रं गतवती। वृत्रासुरस्य माता दनुरपि पुत्रेण सह युद्धक्षेत्रं गता आसीत्, इन्द्रेण तत्र मारिता च सा। संक्षेपेण ऋग्वेदे जाया गृहरूपासीत्— 'जायेदस्तम्।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह पर मान्य कुलपति द्वारा

स्वागत भाषण

अर्चनीय स्वामी जी, परिद्रष्टा महोदय, कुलाधिपति जी, विशिष्ट अतिथिगण, देवियों, सज्जनों एवं ब्रह्मचारियों !

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के ८४ वें दीक्षान्त समारोह के अवसर पर मुझे आपका अभिनन्दन करते हुये अतीव प्रसन्नता हो रही है। स्वामी सत्य प्रकाश जी का मैं अत्यन्त आभारी हूं कि उन्होंने इस दीक्षान्त समारोह में पधारने का हमारा निमन्त्रण स्वीकार किया और अपनी गरिमामयी उपस्थिति से समारोह की शोभा बढ़ायी।

स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी के व्यक्तित्व से हम सभी परिचित और प्रभावित हैं। उनका जीवन एक खुली किताब है और हमारे लिये प्रेरणा का एक भारी स्रोत है। आप विज्ञान और वेद दोनों के मर्मज्ञ विद्वान् हैं। आपने १९६७ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन शास्त्र के प्रोफेसर पद से अवकाश प्राप्त किया और १९७१ में सन्यास ग्रहण किया। भौतिकी और रसायन शास्त्र में आपके सैकड़ों अनुसंधान पत्र प्रकाशित हो चुके हैं। आप विज्ञान परिषद् के प्रमुख संचालक रहे हैं। 'अंग्रेजी हिन्दी वैज्ञानिक कोष' तथा 'वैज्ञानिक विकास की भारतीय परम्परा' आपकी उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। देश में हिन्दी माध्यम से वैज्ञानिक विषयों पर लिखने वाले वैज्ञानिकों में आप अग्रणी हैं। इसके साथ ही आप पातञ्जल योग और उपनिषदों में पारंगत हैं। आपने ऋग्वेद का अंग्रेजी में अनुवाद करके अंग्रेजी भाषा भाषी लोगों में वेद के प्रचार का महत्त्वपूर्ण कार्य किया हैं। सी० एस० आई० आर० द्वारा प्रकाशित भारत की सम्पदा शृंखला पुस्तकों के आप मुख्य सम्पादक रहे हैं।

आदरणीय स्वामी जी !

आप जैसे मनीषी व्यक्ति को अपने बीच पाकर हम अपने आपको इसलिये भी गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं, क्योंकि आधुनिक ऋषियों की परम्परा का इस संस्थान के संस्थापक ने पुनरावर्तन किया है और आपका गैरिक परिधान उसी अनुपम आध्यात्मिक प्रकाश का प्रेरक प्रतीक है। आज दीक्षा लेने वाले स्नातकों के लिये यह दिन और आपका उपदेश अविस्मरणीय रहेगा।

आपकी उपलब्धियां और प्रखर योग्यता को ध्यान में रखते हुये इस विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने इस वर्ष आपको विद्या-मार्तण्ड की मानद उपाधि से अलंकृत करने का निश्चय किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह (१९८३-८४) एवं अन्य कार्यक्रमों की झलकियां

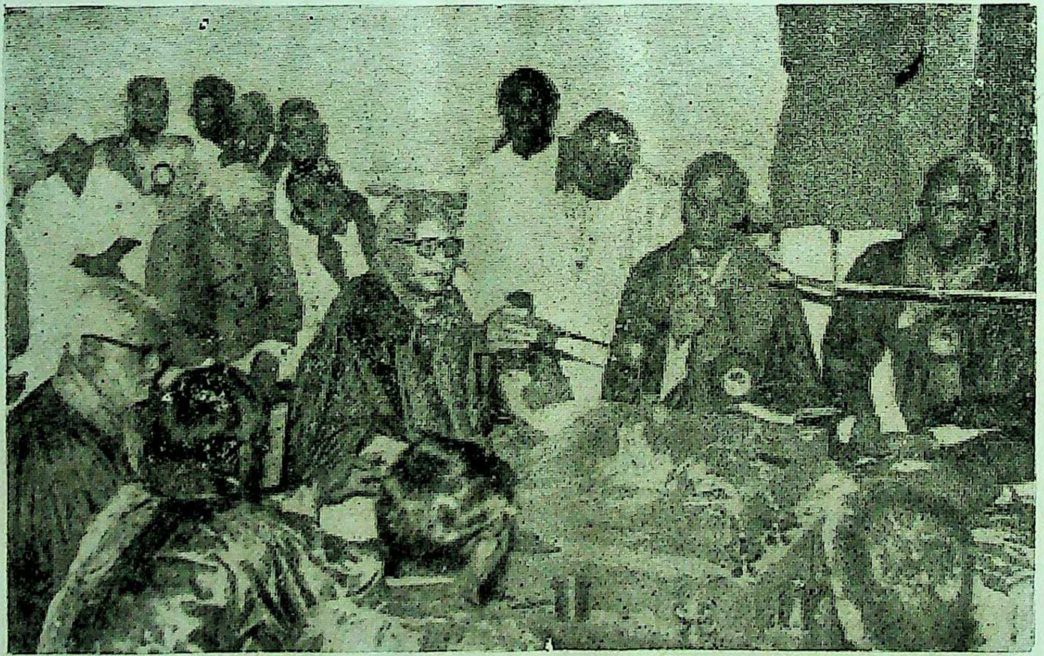

विश्वविद्यालय के दीक्षान्त यज्ञ का दृश्य नवस्नातकों को आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार यज्ञ कराते हुए, साथ में अधिकारीगण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर अधिकारीगण-

दाएं से-श्री सरदारी लाल वर्मा, आचार्य श्री रामप्रसाद वेदालङ्कार, डॉ० एम० आराम (कुलपति, गांधी रुरल इन्स्टीट्यूट, मदुराई) कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र, स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती, कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा, डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार (परिद्रष्टा), पं० सत्यकाम विद्यालंकार (आचार्य), डा० गंगाराम गर्ग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

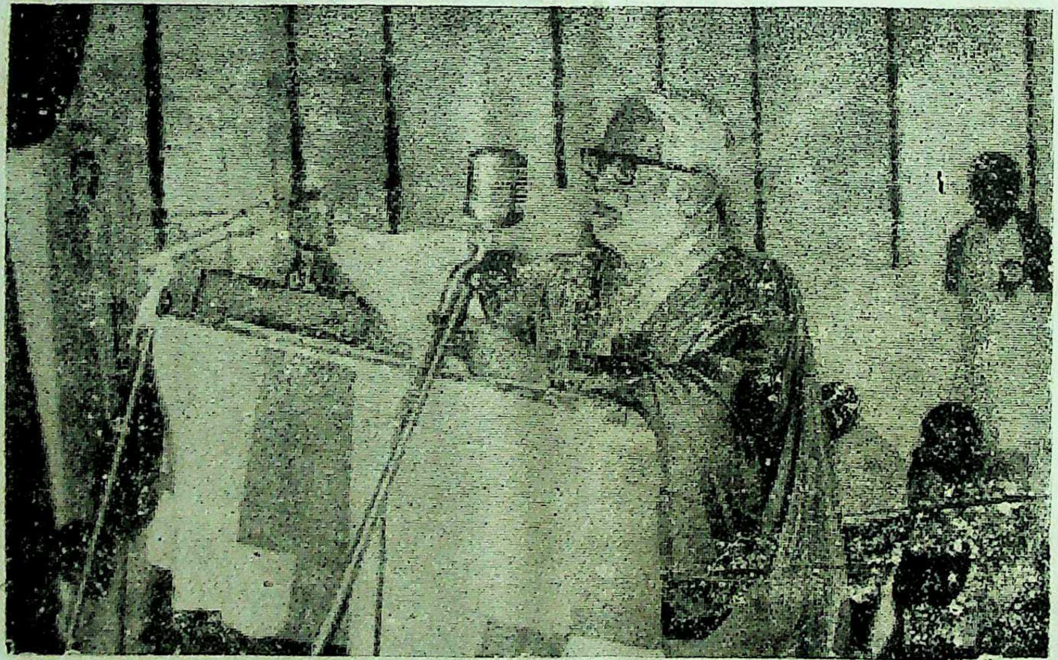

कुलपति जी दीक्षान्त समारोह पर स्वागत भाषण देते हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी दीक्षान्त समारोह पर नवस्नातकों को सम्बोधित करते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी ओर से हम आपको यह उपाधि प्रदान करते हुये अपने को गौरवान्वित अनुभव करते हैं।

देवियों एवं सज्जनों !

इस वर्ष के आचार्य गोवर्धन शास्त्री पुरस्कार विजेता श्री सत्यकाम विद्यालंकार का भी मैं अभिनन्दन करता हूं। श्री सत्यकाम विद्यालंकार वेदों के निष्णात ज्ञाता हैं और उन्होंने भी ऋग्वेद का अंग्रेजी में अनुवाद करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को गति दी है। आप गुरुकुल के यशस्वी स्नातक हैं और वर्षों से वेद का प्रचार, भाषण, चित्रकला तथा शब्दों के आलेखों द्वारा करते रहे हैं।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि विश्वविद्यालय की कार्यपरिषद् ने आपको इस विश्वविद्यालय में मानद प्रोफेसर के पद पर कार्य करने हेतु आमन्त्रित किया है और आर्य विद्या सभा ने आपको गुरुकुल के आचार्य का पद—भार सौंपा है। आपने अत्यन्त कृपा कर इन दोनों पदों पर कार्य करने की सहमति प्रदान की है। हम आपके प्रति कृतज्ञ हैं।

मान्य पण्डित जी, आपकी उपलब्धियों को देखते हुए विश्वविद्यालय की सीनेट ने आपको 'विद्यामार्तण्ड' की उपाधि से विभूषित करने का निश्चय किया है। उसकी ओर से यह उपाधि प्रदान करते हुए हम अपने को गौरवान्वित अनुभव करते हैं।

इस अवसर पर मैं गुरुकुल कांगड़ी की ओर से और आप सबकी ओर से भारत के पहले अन्तरिक्ष यात्री राकेश शर्मा का भी अभिनन्दन करना चाहूंगा, आर्य जनता को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि राकेश शर्मा आर्य समाज के प्रसिद्ध उपदेशक पं० लोकनाथ, जो कि 'यज्ञरूप प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये' गीत के रचयिता हैं, के पौत्र हैं। मेरी उत्कट इच्छा है कि चांद पर उतरने वाला पहला भारतीय गुरुकुल का ब्रह्मचारी हो।

इधर जो कुछ पंजाब में हो रहा है। उसके बारे में भी हमें कुछ सोचना है, करना है। एक वक्त था जब हमारा देश 'आसिन्धु' सिन्धु पर्यन्त था और सिन्धु से ही हमने हिन्दू नाम लिया था। लेकिन हमारे देश के चार टुकड़े बने और अब पाँचवाँ टुकड़ा बनाने का षड्यन्त्र रचा जा रहा है। गुरुकुल के गुरुजन और आर्यजनों को सोचना है कि इसका किस प्रकार से प्रतिकार किया जाय तथा राष्ट्र की मूल भूत एकता पर मंडराते हुये साम्प्रदायिक खतरों का कैसे मुकाबला किया जाये।

इस सन्दर्भ में मैं श्री वी० के० आर० वी० राव द्वारा वी० टी० कृष्णामाचारी स्मृति व्याख्यान माला में दिये गये व्याख्यान को दोहराना चाहूंगा जिसमें उन्होंने कहा कि हमें राष्ट्र निर्माण की सर्वांगीण प्रक्रिया में भारतीय तत्त्व चिन्तन और मूल्यों के आधार पर ही विकास का ढांचा स्थिर करना है। भारत में भिन्नता होते हुये भी एक राष्ट्रीयता का स्वरूप विद्यमान है। अतः न केवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शासन तन्त्र को अपितु स्वयंसेवी संस्थानों को भी इस महान् राष्ट्रीय यज्ञ में इकट्ठे मिलकर कार्य करना है जिससे देश में फैली हुई संकुचित विचार धारा और व्याप्त पाखण्ड का नाश हो, प्राचीन और आधुनिक जीवन मूल्यों का समन्वय हो और राष्ट्र हर दृष्टि से अभ्युदय तथा कल्याण की ओर अग्रसर हो सके।

उपस्थित भद्रजनों !

वार्षिक दीक्षान्त समारोह गत वर्ष की गतिविधियों को भी उपस्थित करने का एक सुखद अवसर होता है।

अपने स्थापना काल से लेकर ८४ वर्षों की सुदीर्घ यात्रा में इस विश्वविद्यालय ने युग की कई करवटें देखीं। आँधी और तूफान के अनेक झटके महसूस किये। लेकिन सुदृढ़ और अडिग चट्टान के सदृश कुलपिता के आदर्शों से पोषित यह विश्वविद्यालय आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त शिक्षा संस्थान के रूप में प्रतिष्ठित हो चुका है और सम्पूर्ण विश्व की दृष्टि आज गुरुकुल पर केन्द्रित है।

कॉमनवेल्थ विश्वविद्यालयों के बर्मिंघम सम्मेलन में गुरुकुल के कुलपति के रूप में अगस्त १९८३ में मुझे आमन्त्रित किया गया था। इस सम्मेलन में विश्व के प्रमुख शिक्षा शास्त्रियों ने भाग लिया। इसमें मैंने निरन्तर शिक्षा एवं सर्वांगीण ग्राम सुधार में गुरुकुल विश्वविद्यालय की भूमिका पर प्रकाश डाला। मैंने आयरलैण्ड, फ्रांस, हालैंड, पश्चिमी जर्मनी, बैल्जियम आदि देशों के प्रमुख विश्वविद्यालयों का अवलोकन भी किया। मैंने अनुभव किया कि वहाँ के शिक्षा शास्त्री गुरुकुल शिक्षा स्वरूप को समझने और ग्रहण करने में जिज्ञासा तथा रुचि लिये हुये हैं। मैंने अनेक कुलपतियों को गुरुकुल में आकर शिक्षा की भारतीय परम्परा को देखने का निमन्त्रण दिया है।

१९८० के जिला जज सहारनपुर के निर्णय के बाद गुरुकुल में पुनर्निर्माण का युग आरम्भ हुआ। किन्तु गत तीन वर्षों में आशा के विपरीत कतिपय अप्रत्याशित दिशाओं से गुरुकुल की प्रगति में बाधायें डालने के अनेक प्रयत्न किये गये। फिर भी मैं निःसंकोच कह सकता हूँ कि बावजूद इन बाधाओं के मान्य परिद्रष्टा डा० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार और कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी के नेतृत्व में गुरुकुल निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर हुआ है। संवैधानिक व्यवस्था के अनुरूप नियमित रूप से शिक्षा-पटल, कार्य परिषद् एवं शिष्ट परिषदों की बैठकें सम्पन्न हुईं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार तथा उत्तर-प्रदेश सरकार के प्रतिनिधि इन बैठकों में सम्मिलित हुये। उनके सहयोग एवं परामर्श से विश्वविद्यालय को उज्ज्वल स्वरूप प्राप्त हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतवर्ष विश्वविद्यालय के गुरुजनों और अधिकारियों ने समय–समय पर अनेक शिक्षा सम्मेलनों, परिचर्चाओं एवं संगोष्ठियों में भाग लिया।

५ जून १९८३ को विश्वविद्यालय में पर्यावरण दिवस पर एक विद्वद् संगोष्ठी का आयोजन हुआ। देश के अनेक विद्वानों ने इस संगोष्ठी में भाग लिया। भारत सरकार के पर्यावरण मन्त्रालय के उपमन्त्री माननीय श्री दिग्विजय सिंह इस संगोष्ठी के उद्घाटन के लिये पधारे।
देवियों एवं सज्जनों !

मुझे आपको सूचित करते हुए प्रसन्नता है कि भारत सरकार के पर्यावरण विभाग ने गंगा के समन्वित अध्ययन की योजना के अन्तर्गत इस विश्वविद्यालय को लगभग १० लाख रुपये का अनुदान देना स्वीकार किया है। इस कार्य हेतु हमें ऋषिकेश से लेकर गढ़मुक्तेश्वर तक का गंगा का भाग मिला है। डा० विशयशंकर अध्यक्ष, वनस्पति–विज्ञान इस प्रयोजना के निदेशक हैं।

२५ जुलाई १९८३ को विश्वविद्यालय में वृक्षारोपण का कार्यक्रम बड़े भव्य रूप से मनाया गया। इस अवसर पर उत्तर प्रदेश के मन्त्री श्री शिवनाथ सिंह कुशवाहा, चिपको आन्दोलन के प्रणेता पद्मश्री सुन्दरलाल बहुगुणा, मेरठ मण्डल के आयुक्त श्री बी० के० गोस्वामी, जिलाधीश श्री एल० के गुप्ता ने पर्यावरण सम्बन्धी अपने विचार अभिव्यक्त किये। गत वर्षा ऋतु में विश्वविद्यालय परिसर एवं कांगड़ी ग्राम में हजारों वृक्षों का आरोपण किया गया।

२५ से २७ दिसम्बर तक अखिल भारतीय कृषक समाज ने इस विश्वविद्यालय में डॉ० बलराम जाखड़, अध्यक्ष लोकसभा के नेतृत्व में अपना वार्षिक सम्मेलन आयोजित किया। इस अवसर पर देश भर से हजारों कृषकबन्धु इस विश्वविद्यालय में आये। उन्होंने इसे देखा और इसकी प्रगति की सराहना की।

९-१० मार्च १९८३ को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की छठी पंचवर्षीय योजना को अन्तिम रूप देने के लिये गुरुकुल में आयी। इसके सदस्य थे–श्री रमारंजन मुखर्जी, भू०पू० कुलपति बर्दवान विश्वविद्यालय, प्रो० आर० सी० गौड, अलीगढ़ विश्वविद्यालय, प्रो० एम० एल० रैना, पंजाब विश्वविद्यालय, श्री बी० आर० क्वाटरा उप-सचिव, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, इस समिति के सचिव थे।

इस सन्दर्भ में जो प्रश्न उभर कर सामने आया वह था कि क्या गुरुकुल की कोई निजी विशेषता है अथवा गुरुकुल भी अन्य विश्वविद्यालयों की तरह ही है जो बी० ए० की परीक्षायें लेते हैं और डिग्रियां बांटते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस अवसर पर मैंने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के ८० वें दशक का कार्यक्रम उपस्थित करते हुये कहा कि गुरुकुल सामान्य विश्वविद्यालयों की तरह नहीं, अपितु विश्व की समस्याओं के समाधान की दिशा में भी उपयोगी हो सकता है। वह सन्देश है आध्यात्मिक मूल्यों का प्रचार, विज्ञान का प्रसार और पाखण्ड का खण्डन, अर्थात् श्रेयस् और प्रेयस् का संगम। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द जानते थे कि देश तभी सशक्त होगा जब सभी देशवासी सशक्त, सबल, हृष्ट-पुष्ट, तेजस्वी, ओजस्वी और विचारवान् होंगे। वह देश की निर्बल असहाय, असमर्थ जनता को बलवान्, स्वावलम्बी तथा समर्थ बनाना चाहते थे। अतः जहां एक ओर उन्होंने समाज सुधार के कार्यक्रम पर बल दिया, वहां व्यक्तिगत सुधार पर भी उन्होंने यथेष्ट बल दिया।

इसी हेतु स्वामी श्रद्धानन्द से आज से ८४ वर्ष पूर्व गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की, ताकि यहां से निकले हुये ओजस्वी स्नातक अच्छे ब्राह्मण, अच्छे वैश्य बनें और देश के उद्धार में अपना योगदान दें, लेकिन जिस पौराणिकता पाखण्ड और पोपलीला के विरुद्ध स्वामी दयानन्द ने युद्धभेरी बजाई थी वह अभी भी देश में व्याप्त है। अतः उनके कार्यक्रम को गतिमान करने हेतु तथा अज्ञान और रूढ़ियों के इन गढ़ों को मिटाने हेतु व्रत—संकल्प नवयुवक समुदाय की, दयानन्द के वीर सैनिकों की, बहुत आवश्यकता है और उनको तैयार करने का कार्य गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय का है।

इस सन्दर्भ में आचार्य सत्यकाम विद्यालकार ने गुरुकुल को वैदिक संस्कृति का अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र बनाने की योजना विश्वबिद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी के सम्मुख रखी थी, जिसे उन्होंने बहुत पसन्द किया।

विजिटिंग कमेटी ने हरिद्वार की शैक्षणिक आवश्यकताओं का भी जायजा लिया तथा विश्वविद्यालय की गतिविधियों का गहराई से अध्ययन किया और इसकी कमजोरियों एवं क्षमताओं का मूल्यांकन किया। आशा की जाती है कि उनकी सिफारिशें गुरुकुल के विस्तार में बहुत उपयोगी सिद्ध होगीं।

१९ मार्च, १९८४ को गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय में आचार्य गोवर्धन शास्त्री स्मृति मन्त्रोच्चारण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस अवसर पर गोवर्धन ज्योति की छठी रश्मि का विमोचन करते हुये महात्मा आर्य भिक्षु ने कहा कि "आचार्यों का परम कर्तव्य है कि वे बालकों में गुणों की वृद्धि करें तथा अवगुणों को दूर करें।'

इन दिनों आर्य समाज गुरुकुल काँगड़ी ने भी अंगडाई ली है। संघड विद्या सभा ट्रस्ट जयपुर की आर्थिक सहायता से आर्य समाज गुरुकुल काँगड़ी ने स्वामी दयानन्द के ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दूसरे तीसरे एवं छठे समुल्लास के सरलीकृत एवं संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित किये। इसी प्रकार उन्होंने 'व्यवहार भानु' के सरलीकृत संस्करण का प्रकाशन किया। इन तीनों पत्रिकाओं का प्रकाशन इस आशा से किया गया है कि स्वामी जी के विचार घर-घर तक पहुँचें।

मुझे यह कहते हुए भी प्रसन्नता हो रही है कि पद्मश्री विनयचन्द्र मौदगिल्य, प्राचार्य गन्धर्व महाविद्यालय, नई दिल्ली, जिनकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल में हुई थी, ने गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को संगीत शिक्षा की ओर प्रेरित करने हेतु अपनी अमूल्य सेवायें प्रदान की हैं। इस शृंखला में उन्होंने पिछले दिनों तीन दिन तक गुरुकुल में प्रवास किया तथा चुने हुये ब्रह्मचारियों को सस्वर वेदमन्त्र एवं अन्य गीत सिखाये।

मुझे आपको यह सूचना देते हुए हर्ष हो रहा है कि पिछले दिनों इस विश्वविद्यालय में अमेरिकन अध्ययन के अखिल भारतीय संगठन का १८ वाँ वार्षिकोत्सव मनाया गया। इस अवसर पर उ०प्र० के पर्यटन मन्त्री श्री गुलाब सेहरा ने अपने सन्देश में कहा कि ऐसी संस्थाओं ने देश विदेश में एकात्मकता प्रतिष्ठित करने में लाभदायक भूमिका निभाई है। अवध विश्वविद्यालय के कुलपति श्री मेहरोत्रा ने कहा कि इस प्रकार के सम्मेलनों से गुरुकुल कांगड़ी की छवि निखरेगी। इस सम्मेलन का उद्घाटन हमारे मान्य परिद्रष्टा डा० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार ने अपने ओजस्वी भाषण से किया। उन्होंने कहा कि किपलिंग तो कहता था, पूर्व पश्चिम का संगम सर्वथा असम्भव है। मैं भारतीय किपलिंग कहता हूं पूर्व और पश्चिम अभिन्न हैं और सदा ही एक दूसरे से जुड़े रहेंगे।

देवियों तथा सज्जनों !

आप जानते ही हैं कि गुरुकुल का मातृ-ग्राम काँगड़ी ग्राम है। इस विश्वविद्यालय द्वारा इस गाँव को पूर्ण रूप से अंगीकृत कर लिया गया है। २६ दिसम्बर १९८३ को लोकसभा अध्यक्ष श्री बलराम जाखड़ का इस गाँव में पदार्पण हुआ तथा वे इस गाँव की प्रगति से काफी प्रभावित हुये। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ज्वालापुर ने ग्रामवासियों को कुटीर उद्योग धन्धों के लिए ऋण देने का व्यापक कार्यक्रम शुरू किया है जिससे यहाँ के निवासियों की आर्थिक स्थिति में पर्याप्त सुधार हुआ है।

गत वर्ष श्रद्धानन्द सप्ताह के दौरान डा० बी०डी० जोशी के निर्देशन में पुण्य भूमि में राष्ट्रीय सेवा योजना के अन्तर्गत कैम्प लगाया गया, विश्वविद्यालय के ५० छात्रों ने अत्यन्त लगन और निष्ठा से काँगड़ी ग्राम में कार्य किया।

अन्य विशिष्ट अतिथिगण के अलावा माननीय बलराम जाखड, श्री आर० वेंकटनारायण, कृषि उत्पादन आयुक्त उत्तर प्रदेश, श्री दर्शन सिंह जिलाधीश, बिजनौर ने कैम्प का अवलोकन किया। इसका उद्घाटन भारत सरकार के भू०पू० सलाहकार श्री शाह ने किया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० त्रिलोक चन्द के निर्देशन में गुरुकुल काँगड़ी द्वारा प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम के अन्तर्गत ३० प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों का सफलतापूर्वक संचालन किया जा रहा है।

गुरुकुल पुस्तकालय ने भी आशातीत प्रगति की है। गत वर्ष पुस्तकालय में विभिन्न विषयों की लगभग ५,००० पुस्तकें मंगाई गईं। इस समय विभिन्न विषयों की ३५० पत्रिकायें नियमित रूप से आ रही हैं। पुस्तकालय में इस वर्ष गुरुकुल से प्रकाशित सम्पूर्ण साहित्य एवं गुरुकुल के स्नातकों के विपुल प्रकाशन को पृथक् रुप से 'गुरुकुल प्रकाशन संग्रह' के नाम से संगृहीत किया गया है। इसके लिये पुस्तकालयाध्यक्ष श्री जगदीश विद्यालंकार धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रो० विनोद चन्द्र सिन्हा के नेतृत्व में गुरुकुल का संग्रहालय राष्ट्रीय ख्याति की ओर अग्रसर हो रहा है। इस सत्र से यहाँ अष्टधातु कक्ष और चित्रकला कक्ष की भी स्थापना की गई है। पंजाब विधान सभा के अध्यक्ष माननीय श्री मेहरोत्रा ने, जो पिछले दिनों गुरुकुल आये थे, गुरुकुल के संग्रहालय हेतु १०,००० रु० विशेष अनुदान के रूप में स्वीकृत किये।
मित्रों !

आपको जानकर प्रसन्नता होगी कि विश्वविद्यालय में शोध तथा प्रकाशन का कार्य आलोच्य वर्ष में उत्साहवर्धक ढंग से बढ़ा है। आपको ज्ञात ही है कि गुरुकुल से नियमित रूप से प्रकाशित होने वाली पाँच पत्रिकाओं के अतिरिक्त ऋषि दयानन्द निर्वाण शताब्दी पर गुरुकुल काँगड़ी ने अपने श्रद्धासुमन प्रस्तुत करते हुये 'ऋषि दयानन्द की साधना और सिद्धान्त' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया। निर्वाण शताब्दी के अवसर पर गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय के सौजन्य से डा० गंगा राम गर्ग ने अंग्रेजी में 'वैदिक पर्सपैक्टिव ऑन स्वामी दयानन्द सरस्वती' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया। इस पुस्तक की भूमिका सुप्रसिद्ध दार्शनिक प्रो० कैनिथ जॉन्स द्वारा लिखी गई।

वेद एवं कला महाविद्यालय के वेद, संस्कृत, प्राचीन भारतीय इतिहास तथा हिन्दी विभागों में अनुसंधान–कार्य प्रगति पर है। इस वर्ष वेद–विभाग में ५ छात्रों के पंजीकरण किये गये इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि अब तक केवल चार विभागों में ही अनुसंधान कार्य की अनुमति थी इस वर्ष दर्शन–विभाग में भी अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने की अनुमति विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने प्रदान कर दी है। तदनुसार दर्शन विभाग में भी ५ छात्र पंजीकृत किये गये हैं। इसके अतिरिक्त अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने हेतु मनोविज्ञान, अंग्रेजी तथा विज्ञान महाविद्यालय के वनस्पति–विज्ञान, जीव–विज्ञान तथा रसायन–विज्ञान आदि विभागों में भी अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से पत्राचार चल रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय अपने स्थापना काल से ही उच्चतर अध्ययन तथा अनुसंधान कार्य में अग्रणी रहा है। महर्षि दयानन्द को केन्द्र बनाकर शोध के विविध परिदृश्य प्रस्तुत किये जाते रहे हैं। वैदिक मानवतावाद, वेद वर्णित संस्थायें, दयानन्दकृत यजुर्वेद भाष्य में समाज का स्वरूप, प्राचीन भारत में धर्म निरपेक्षता, जनमत, भारत–कुम्बुज सम्बन्ध, बाली द्वीप में भारतीय संस्कृति का विकास, मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में वैदिक परम्परा, सत्यदेव परिव्राजक तथा आर्य समाज और प्रेम चन्द ऐसे कार्य हैं जो विश्वविद्यालयीय शोध कार्य की तुलना में प्रतिबद्ध किन्तु लोकोपयोगी कार्य का दिशाबोध कराते हैं। वैदिक शिक्षा दर्शन का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में विनियोग करना ही हमारा लक्ष्य है और भावी अनुसंधान कार्य की रूपरेखा भी इसी दिशा में स्थिर की जा रही है

आज की नई पीढ़ी स्वतन्त्रता के ऊंचे महलों में उपलब्ध सुख सुविधाओं की तो आकांक्षा करती हैं और उनके अभाव में उग्र आन्दोलन चलाने की बात भी करती है, पर वह नहीं जानती कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये उनके पूर्वजों ने क्या कुर्बानियां दीं, क्या यातनायें भोगीं? स्वतन्त्रता के लिए लड़ी गई लड़ाई तथा उसकी बुनियादी विशेषताओं का राष्ट्रीय दृष्टिकोण से आकलन कर, भारतीय इतिहास की पुनर्रचना के लिए योजनाबद्ध अध्ययन करने की आवश्यकता को ध्यान में रख कर विश्वविद्यालय ने अपनी छठी योजना में लाजपतराय अनुसंधान पीठ प्रतिष्ठित करने का प्रस्ताव अनुदान आयोग के समक्ष रखा। विजिटिंग कमेटी के सदस्यों ने इस प्रस्ताव का हार्दिक अनुमोदन किया है। मुझे विश्वास है कि भारत की स्वतन्त्रता एवं पुनर्जागरण के इतिहास की नवसंरचना में यह पीठ अप्रतिम योगदान करेगी।

विश्वविद्यालयीय संकायों के विद्यार्थियों को आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की विशेष उपलब्धियों से परिचित कराने के लिए भारतीय विश्वविद्यालयों के विद्वानों के व्याख्यानों का आयोजन किया गया। मगध विश्वविद्यालय, गया के इतिहास के प्रोफेसर डॉ० उपेन्द्र ठाकुर, जवाहर लाल नेहरू वि० वि० के सेन्ट्रल एशिया स्टेडीज के अध्यक्ष डॉ० रामराहुल, दिल्ली वि० वि० के मनोविज्ञान विभाग के अध्यक्ष डॉ० एच० सी० गांगुली, रांची विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के अध्यक्ष डॉ० आर० एस० श्रीवास्तव तथा मुजफ्फरनगर के प्रोफेसर डॉ०विश्वनाथ मिश्र ने विजिटिंग फैलो के रूप में आकर व्याख्यान दिए। इनके आगमन से वि० वि० की सार्थकता बढ़ी है।

प्राध्यापकों की नियुक्तियों के निमित्त विषय-विशेषज्ञ के रूप में जगन्नाथ वि० वि०, पुरी के कुलपति डॉ० सत्यव्रत शास्त्री, वर्दवान वि० वि० के कुलपति प्रो० रमारंजन मुखर्जी, गुजरात विद्यापीठ के कुलपति डा० रामलाल पारिख तथा कश्मीर वि० वि० के कुलपति श्री वहीद मलिक यहाँ पधारे। उन्होंने वि० वि० की प्रगति को देखकर हार्दिक सन्तोष व्यक्त किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के श्री के० एन० सिंह, कर्नाटक उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा लाओस, वियतनाम और कम्पूचिया के मान्य राजदूत भी इस वर्ष गुरुकुल पधारे और यहां की प्राचीन गुरु-शिष्य प्रधान प्रणाली को देखकर अभिभूत हो गये।

भारत की भावात्मक एकता की पुष्टि तथा नवनिर्माण की अद्यतन जानकारी के लिए जहां, यहां के विद्यार्थी बम्बई, कन्याकुमारी, रामेश्वरम्, मद्रास, अजमेर, जयपुर, आगरा तथा मथुरा की सरस्वती यात्रा पर गये, वहां अन्तर्विश्वविद्यालय खेल परिषद् की सदस्यता प्राप्त कर हमारे विद्यार्थी खेल-कूद के क्षेत्र में भी उतरे। इस वर्ष अलीगढ़ वि०वि० में आयोजित अन्तर्विश्वविद्यालयीय हाकी प्रतियोगिता में हमारे छात्रों का उल्लेखनीय प्रदर्शन रहा।

विद्यार्थियों की शारीरिक क्षमता की वृद्धि के लिए जिमनेजियम की व्यवस्था को भी सुधारा गया, यद्यपि इस क्षेत्र में बहुत कुछ करना शेष है। इसका उद्घाटन श्री टी० एन० चतुर्वेदी तत्कालीन शिक्षा सचिव, भारत सरकार ने किया।

विश्वविद्यालय के छात्रों को परिसर में ही उचित व्यवसाय मार्ग निर्देशन तथा व्यवसाय जगत् की पूरी जानकारी देने के लिए एक विश्वविद्यालय सेवा योजना एवं मंत्रणा-केन्द्र की स्थापना की गई है, जो व्यवसायोन्मुख शिक्षा के व्यवहारीकरण में यह एक ठोस कदम है और इस दिशा में इस अंचल के छात्रों को आगे बढ़ने का पूर्ण अवसर मिल सकेगा। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प्रदत्त इस योजना के लिए हम हृदय से आभार व्यक्त करते हैं।

शिष्ट परिषद् तथा कार्यपरिषद् में शिक्षा मंत्रालय तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा आगामी तीन वर्षों के लिए मनोनीत सदस्यों डा० एल० पी० सिन्हा,कुलपति हिमाचल विश्वविद्यालय, डा० एम० आराम, कुलपति, गांधी रुरल इन्स्टीट्यूट मदुराई, जस्टिस श्री आई० डी० दुआ, श्री गुरुबख्श सिंह, उप-सचिव, शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार, डा० रामलाल पारीख, कुलपति, गुजरात विद्यापीठ, तथा श्री आर० एस० चितकारा का मैं इस अवसर पर हार्दिक स्वागत करना चाहूंगा। ये अपने क्षेत्र के प्रतिष्ठित विद्वान् हैं और इनके दीर्घ अनुभवों से हमें भरपूर लाभ मिलेगा।

यदि इस अवसर पर मैं कन्या गुरुकुल की उपलब्धियों का जिक्र न करूं तो बात अधूरी ही रहेगी। यहां की आचार्या बहन दमयन्ती कपूर कन्याओं को वेद, वेदांग, व्याकरण. संस्कृत तथा गृह-कलाओं में पारंगत बनाने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहती हैं। कन्याओं को अतीत के राष्ट्रीय आदर्शों से प्रेरणा लेकर जीवन संग्राम में विवेक तथा उत्साहपूर्वक चल पड़ने के लिए तैयार करना ही इस संस्था का लक्ष्य है। कन्या गुरुकुल की स्नातिकाओं में ललित कला, उद्योग तथा शिक्षा के क्षेत्र में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नये आयाम स्थापित किये हैं। यहां की छात्रायें चरखा कताई, काव्य तथा वाद-विवाद-प्रतियोगिता, खेल, विज्ञान-प्रतियोगिता तथा गृह-विज्ञान प्रदर्शनी में प्रथम रहती हैं। खेलों में प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय स्तर पर यहां की छात्राओं का चयन हुआ है।

निर्माण कार्यों की श्रृंखला में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदत्त धनराशि से ८ प्रोफेसर-क्वाटर्स का निर्माण सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा किया जा रहा है। इसका शिलान्यास १ फरवरी १९८४ को कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी के सान्निध्य में हमारे परिद्रष्टा डा० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार ने किया।

विश्वविद्यालय विभाग गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली की जीती जागती प्रयोगशाला है। ब्रह्म-मुहूर्त में उठकर नित्य-क्रिया से निवृत होकर श्री ईश्वर भारद्वाज के नेतृत्व में ब्रह्मचारी वेदमन्त्रों का सस्वर पाठ तथा योगाभ्यास करते हैं। वरिष्ठ ब्रह्मचारियों को प्रो० चन्द्रशेखर त्रिवेदी द्वारा प्रतिदिन एक वेद-मन्त्र अर्थ सहित कंठस्थ कराया जाता है। ब्रह्मचारियों की नियत वेश-भूषा, भोजन-व्यवस्था तथा आवासीय व्यवस्था में इस वर्ष विशेष सुधार हुआ है। पण्डित सत्यकाम जी के सुदक्ष आचार्यत्व में ब्रह्मचारियों का दल अपने कार्य में निरन्तर अग्रणी होता चलेगा, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है।

मैं एक बार पुनः गुरुकुल की गत वर्ष की उपलब्धियों के लिये विश्वविद्यालय अनुदान आयोग शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार, उत्तर प्रदेश सरकार, आकाशवाणी नजीबाबाद, विश्वविद्यालय की शिष्टपरिषद्, कार्यपरिषद् तथा शिक्षा पटल के मान्य सदस्यगण के प्रति आभार प्रकट करना चाहूँगा, जिन्होंने समय-समय पर हमें अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया तथा हमारा मार्ग प्रदर्शन किया। इसके साथ ही मैं स्थानीय प्रशासन को भी धन्यवाद देना चाहूँगा, जिन्होंने इस दौरान परिसर में शान्ति व्यवस्था बनाये रखने में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया।

मैं इस अवसर पर अपने अध्यापकों, कर्मचारियों एवं विद्यार्थियों को भी साधुवाद देना चाहूँगा, जिन्होंने मेहनत और लगन से ये सब उपलब्धियां प्राप्त कीं।

मान्यवर स्वामी जी !

इस वर्ष पी-एच० डी० की १, एम० ए० की ६२, एम०एस० सी० की ४२, बी० एस० सी० की ३२ तथा अलंकार की १७ उपाधियां प्रदान की गई हैं।

अब आपसे निवेदन है कि नव-स्नातकों को आशीर्वाद देने की कृपा करें।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर आर्य जगत् के उद्‌भट विद्वान् स्वामी श्री सत्य प्रकाश जी सरस्वती का नवस्नातकों को–

दीक्षान्त भाषण–

नव दीक्षिन्त सौम्य युवास्नातक वृन्द !

आपके गुरुकुल विश्वविद्यालय के कुलाधिपति, कुलपति एवं अधिकारियों ने मुझे दीक्षान्त भाषण देने के लिए स्नेह पूर्वक आमंत्रित किया है, इसके लिये मैं आभारी हूं। मैं भी एक विश्वविद्यालय का अन्तेवासी रहा और उसी में १९२५, १९२७ और १९३२ में मैंने तीन उपाधियां पायीं और तीन दीक्षान्त भाषण सुने। मैं भारत की पराधीनता के युग का स्नातक हूं। मेरे समय में देश में इतने विश्व विद्यालय नहीं थे, जितने आज हैं। मेरा विश्वविद्यालय १८८८ के लगभग (१८५७ की क्रांति के ३१ वर्ष बाद) स्थापित हुआ था। १८५८ में पहली शृंखला के तीन विश्वविद्यालय स्थापित हुए–कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के। लगभग ३० वर्ष बाद दो और बने–प्रयाग और लाहौर के। आज विश्वविद्यालय स्तरीय उपाधि देने वाली संस्थायें १०० से ऊपर हैं। आपका विद्यालय २ अन्तेवासियों और एक आचार्य से प्रारम्भ हुआ–हरिश्चन्द्र, इन्द्र और मुंशीराम। मुझे उन दिनों की याद है जब हरिश्चन्द्र और इन्द्र स्नातक हुए थे। मैं नहीं जानता कि उस समय १९१२ के प्रथम दीक्षान्त भाषण में क्या कहा गया था। आपका गुरुकुल देश का गौरव था और आर्य जगत् को उस पर अभिमान था। कहा जाता है कि २ मार्च १९०१ को हरिद्वार में एक विद्यालय का शुभारम्भ हुआ–जिसमें १ आचार्य और विद्यार्थी थे। हरिश्चन्द्र की आयु १३ वर्ष की रही होगी और इन्द्र कुछ और छोटे थे। महर्षि दयानन्द की मृत्यु के दो वर्ष बाद १८८५ में आर्यजगत् ने महर्षि की स्मृति में दयानन्द स्कूलों की शृंखला प्रारम्भ की जिनकी शती धूमधाम से मनाने की तैयारियां प्रारम्भ हो गयी हैं। हंसराज और मुन्शीराम–ये दो व्यक्ति शिक्षा के क्षेत्र में देश के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे। इन दोनों संस्थाओं के प्रारम्भिक युग में पार्थक्य अधिक था। मुन्शीराम जी का गुरुकुल राष्ट्रीय था और हंसराज जी द्वारा प्रेरित दयानन्द विद्यालय भारत की पराधीनता के प्रतीक थे और सरकारी स्कूलों के सामञ्जस्य में थे।१९४७की स्वतन्त्रता के बाद आज सभी विद्यालय और विश्वविद्यालय राष्ट्रीय और राष्ट्र के गौरव हैं। विद्यालयों के दो ही उद्देश्य हैं–पूर्वार्जित ज्ञान का संरक्षण, और नवीन ज्ञान अर्जन। इसे ही वैदिक परिभाषा में क्रमश: क्षेम और योग कहेंगे। गुरुकुलों से भी हमें यही आशा का है और नवीन पद्धति के विश्वविद्यालयों से भी। पुराने ऋषियों ने परम्परा से ज्ञान के विभिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती दीक्षान्त भाषण देते हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षेत्रों में हमें जो सामग्री दी, वह भी सुरक्षित रहे और साथ ही साथ अपने स्नातकों से हम यह भी पूछने का अधिकार रखते हैं कि इस ज्ञान सागर में उन्होंने नया क्या दिया। हमारे पुराने ऋषियों ने अपने अपने क्षेत्र में पुराना भी सुरक्षित रखा और नया भी दिया था। गौतम, कपिल, कणाद, यास्क और पाणिनि के ग्रन्थ देखिये, सबने अपने पूर्वजों के ज्ञान को आगे की पीढ़ियों तक बढ़ाया भी और अपना नया भी दिया। मानव योनि की यह विशेषता हैं। पशुओं का ज्ञान श्रुति है, न शास्त्र। मनुष्य से ही यह अपेक्षा की जाती है, कि पुराना भी पढ़े, और आगे उसमें कुछ वृद्धि भी करे, गुरुकुल के नवीन स्नातकों से भी मैं यह कहूंगा। आपके ऊपर ऋषि-ऋण है। आपका पढ़ा हुआ और आपके आचार्यों का पढ़ाया गया तभी तेजस्वी होगा, जब हम यह कह सकेंगे, कि आपने अपने अध्ययन के फलस्वरूप ज्ञान-भण्डार का और पुराने वाङ्मय को, पूर्व विचार धारा को, कला को, शिल्प को, कौशल को, जनजीवन के प्रवाह को भी कुछ नया दिया है। नवीनता के पर्यावरण में प्राचीनता भी गौरवान्वित होती है और इसी प्रसंग में ऋग्वेद प्रारम्भ में ही **पूर्वेभिः** और **नूतनैः ऋषिभिः**— दोनों प्रकार के ऋषियों की कल्पना की है। ऋषि दयानन्द की परिभाषा में पहले समय के विद्वानों को पूर्व-ऋषि और आप जैसे नवीन अध्येता ब्रह्मचारी और विद्वानों को जो नवीन तर्कों के विशेषज्ञ हों, जिन्होंने अपने अपने क्षेत्रों में नये मार्ग प्रशस्त करने का संकल्प किया हो, वेद प्रतिपादित नूतनऋषि कहा गया है। पूर्व ऋषियों के प्रति समादर की भावना रखना, और नूतन-ऋषियों की बातों को निष्ठा पूर्वक सुनना तथा मानना इस प्रकार की भावना जिस समाज में जाग्रत रहती है, वह समाज उन्नति की ओर अग्रसर रहता है, अन्यथा समाज में रुढ़िवादिता व्याप्त होने लगती है। आप सब स्नातक नूतन-ऋषि हैं और इसलिए मेरे जैसे वयोवृद्ध व्यक्ति द्वारा आप नवस्नातकों का स्वागत, अभिनन्दन और विनम्र अभिवादन।

विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में मेरी दृष्टि में यह अन्तर है कि हम विश्वविद्यालय के प्राचार्यों और विद्यार्थियों से यह अपेक्षा करते हैं कि वे शास्त्र का विकास करेंगे; किन्तु महा-विद्यालय के विद्यार्थी और आचार्यों का कर्तव्य है, कि वे पढ़कर पूर्वार्जित ज्ञान को जीवित रखेंगे और आगे आने वाली पीढ़ियों को यह ज्ञान सौंप देंगे। आज जो स्नातक शिक्षित होने के अनन्तर दीक्षित हो रहे हैं, उनसे मैं यही कहूँगा, कि जो कुछ आपने गुरुओं के समीप रहकर सीखा है, उसको समाज में जीवित रखें और मुझे आशा है कि आप में से कुछ स्नातक उस शास्त्रीय ज्ञान को प्रशस्त करने में भी उद्यत रहेंगे। मैं पुरानी यज्ञशाला को ज्ञान-विज्ञान के विकास की वेधशालाएं, अनुसंधान शालाएं और प्रयोगशालाएं मानता हूँ। उन्हीं यज्ञशालाओं में बैठकर प्राचीन ऋषियों ने वेदांग, उपांग और उपवेदों का विकास किया था। महर्षि दयानन्द ने यज्ञ की जो परिभाषा अपने ग्रन्थों में की है, वह आज के स्नातकों को सर्वदा याद रखनी चाहिये। महर्षि यज्ञ की परिभाषा इस प्रकार करते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'यज्ञ' उसे कहते हैं कि जिसमें विद्वानों का सत्कार, यथायोग्य शिल्प अर्थात् रसायन जो कि पदार्थ विद्या, उसके उपयोग और विद्यादि शुभ गुणों का दान, अग्निहोत्र, जिनसे वायु, वृष्टि, जल, औषधी की पवित्रता करके सब जीवों को सुख पहुँचाना है, उसको उत्तम मानता हूँ। आर्य समाज के विद्वानों ने स्वामी दयारन्द की इस परिभाषा की सर्वदा उपेक्षा की है। आज गायत्री यज्ञ, पारायण यज्ञ, शांति यज्ञ, हमारे विद्वानों को सद् उद्देश्यों से बहुत दूर विचलित कर रहे हैं। हिन्दू वातावरण में और महर्षि दयानन्द द्वारा अनुप्राणित वातावरण में यही तो अन्तर है। हमने यज्ञ को रूढ़ि अर्थों में लेना आरम्भ किया है। जो लोग वैज्ञानिक प्रयोग शालाओं में, शिल्प में, कारखानों में, अनुसन्धान-शालाओं में और चिकित्सा संस्थानों में कार्य कर रहे हैं, हमने उन्हें याज्ञिक समझा ही नहीं। आपके गुरुकुल में तो कम से कम यज्ञ की वास्तविकता परिभाषा का स्वरूप निखारना चाहिए, प्रसन्नता की बात है, कि आपकी गुरुकुल भूमि से कुछ ही दूरी पर रानीपुर में भारत हैवी इलैक्ट्रिकल्स का विशाल उद्योग है, ऋषिकेश में भी उपयोगी कार्य हो रहा है। यह सब यज्ञ हैं। क्या आपने इन यज्ञों के ऋत्विजों का आह्वान, आदर सत्कार किया ? आप अपने स्नातकों को इन यज्ञों के प्रति निष्ठावान् बनाएं। नहीं तो आपकी यज्ञों के प्रति श्रद्धा हिन्दुओं की कोटि की अन्धश्रद्धा ही कहलावेगी (वस्तुतः श्रद्धा शब्द का जो यौगिक अर्थ है, उनके साथ अन्ध शब्द का प्रयोग हो ही नहीं सकता)। अभी अजमेर में जो महर्षि निर्वाण शताब्दी मनाई थी, उसमें हमने पहली बार महर्षि द्वारा प्रतिपादित यज्ञ की परिभाषा चरितार्थ की–देश के ८-९ वैज्ञानिकों को और कतिपय अन्य विशेषज्ञों को स्वर्ण पदक से सम्मानित किया था, जिन्होंने अपने अपने क्षेत्रों में कार्य करके भारत को गौरवान्वित किया है। वह समारोह ऋषि से शब्दों में यज्ञ था। यजुर्वेद के अध्याय १८ में प्रथम सत्ताइस मंत्र ऐसे हैं, जिनके अन्त में 'यज्ञेन कल्पताम्' ये दो शब्द बराबर प्रयुक्त हुए हैं। इन दोनों को भाष्य करते समय महर्षि दयानन्द ने लगभग प्रत्येक मंत्र का अर्थ अलग अलग किया है। मैं आज के स्नातकों से कहूँगा कि इस पुण्य-स्थली में यज्ञ द्वारा तुम सबने विद्या प्राप्त की है। आप अपना आगे का जीवन भी यज्ञ द्वारा निर्मित करें। आपका समस्त जीवन यज्ञमय हो। देवहित आपकी आयु अर्पित हो, आपके यज्ञ भी यज्ञ पर आधारित हों—आयुर्यज्ञेन कल्पताम्, यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्। आप याज्ञिक बनें। किन्तु जब मैं ऐसा उद्बोधन आपको दे रहा हूँ, तो मेरा अभिप्राय यह नहीं है, आप प्रातः से सायं तक काष्ठाग्नि पर स्वाहोच्चार के साथ हव्य द्रव्य की आहुति डालते या डलवाते रहें। स्वामी दयानन्द ने यजुर्वेद के अष्टादश अध्याय के मन्त्रों में यज्ञेन शब्द का प्रसंगानुसार अलग अलग अभिप्राय लिया है। मैं कुछ उदाहरण दूंगा। आप में से कइयों ने आचार्य के चरणों में बैठकर शायद यजुर्वेद पढ़ा हो।

१– पृथिवी, नक्षत्र, द्यौ, दिशा के प्रसंग में–यज्ञ ने पृथिवीकाल-विज्ञापकेन (१८)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२– अंशु, उपांशु, मैत्रावरुण, मन्थी, आदि के प्रसंग में-यज्ञेन अग्निपदार्थोपयोगेन (१९)

३– स्रुच, कलश, ग्रावाण, वेदि, बर्हि आदि के सम्बन्ध में-यज्ञेन हवनादिना (२१)

४– अग्नि, धर्म, अंक, सूर्य के प्रसंग में–यज्ञेन संगतिकरण योग्येन परमात्मना (२२)

५– एक, तीन, पांच आदि संख्याओं के प्रसंग में यज्ञेन संगतिकरणेन योगेन दानेन वियोगेन वा, अर्थात् जोड़, गुणाव, घटाना, भाग देना आदि अंकगणित द्वारा (१४)

६– त्र्यवि, दित्यवाट्, त्रिवत्स आदि गाय, भेड़, बकरी आदि के प्रसंग में - यज्ञेन पशुपालन–विधिना (२६), और इसी प्रकार षष्ठवाट्, षष्ठौही, उक्षा आदि के प्रसंग में–यज्ञेन पशु शिक्षाख्येन (२७)

७– व्रीहि, यव, माष, तिल, गोधूम आदि के प्रसंग में–यज्ञेन सर्वान्नप्रदेन परमात्मना (१२)

८– अश्मा, मृत्तिका, हिरण्य, लोह,सीस,त्रपु आदि के प्रसंग में- यज्ञेन संगतिकरणयोग्येन (१३)

स्वामी दयानन्द जब यज्ञ का अर्थ संगतिकरण करते हैं तो उनका अभिप्राय रसायन विद्या, धातु विद्या, शिल्प, भौतिकी आदि से होता है ।

आर्य जगत् में स्वतन्त्रता के बाद सुन्दर यज्ञशालाओं के भवन तैयार करने की परिकल्पना उठी, तो हमने देश-देशान्तर में भव्य और रमणीक यज्ञ शालाएं बना डाली–मन्दिर, मस्जिद और गिरजे भी बहुत बने, परन्तु आर्य समाज की प्रेरणा से स्वामी दयानन्द के अभिप्राय की एक भी यज्ञशाला नहीं बनी। किन्तु भारत राष्ट्र तो इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता था। आज हमारा आर्यसमाज कुछ गिर कर हिन्दु बनता जा रहा है; किन्तु यह अच्छा हुआ कि भारत राष्ट्र न तो हिन्दू राष्ट्र बना, न मुस्लिम राष्ट्र। हमारा राष्ट्र अभी तक आर्य (भारतीय) राष्ट्र बना हुआ है। आज हमारे देश में १०० के लगभग विभिन्न कार्यों की राष्ट्रीय प्रयोगशालायें हैं। सैकड़ों कारखाने हैं, चिकित्सा, कृषि, शिल्प और विज्ञान को प्रोत्साहन देने वाली यज्ञशालायें हैं। इन पर हमें गर्व है। ये संस्थान और संस्थायें राष्ट्रीय यज्ञस्थली हैं। किन्तु रुढ़िग्रस्त हिन्दुत्ववादी आर्य समाज आज भी इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देख रहा है।

मैं अपने आज के स्नातकों से आग्रह पूर्वक संकेत करूंगा कि आपकी शिक्षा–दीक्षा आर्य जगत् के सर्वश्रेष्ठ शिक्षा–संस्थान में हुई है। इसके लिए आपको बधाई है। आपके कुलपति और कुलाधिपति और अधिकारियों से भी कहूँगा, कि आप अपने अन्तेवासियों को दयानन्द के सपनों को पूरा करने की प्रेरणा दें। इन्हें राष्ट्रवादी बनाएं। ये राष्ट्रीय संस्थानों में यशस्वी स्थान प्राप्त करें।

इस संबंध में एक घटना का उल्लेख करूं। कई वर्षों की बात है, मैं गृहस्थी था। अपनी पत्नी के साथ स्पेन के प्रसिद्ध नगर बार्सिलोना गया वहां मरियम के नाम पर एक गिरजाघर कई दशकों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन रहा है। आयोजकों की कल्पना है कि वह संसार का सबसे ऊंचा गिरजाघर होगा। अभी केवल आगे की ऊंची दीवार तैयार हुई है। गिरजे के जिस श्रद्धालु पादरी ने मुझे गिरजा घर घुमाकर दिखाया, उसने वेदना भरे भावुक शब्दों में कहा—आज लोग यूनिवर्सिटियों को तो धन देते हैं, किन्तु भगवान् के नाम पर बनने वाले गिरजों के लिये नहीं। यही तो ईसाईयत है, मुसलमान भी ऐसा ही समझता है, अधोगति प्राप्त हिन्दु की भी यही मनोवृति है और आर्यसमाज का व्यक्ति भी इसी मनोवृति में साथ दे रहा है। यह सम्प्रदाय वादिता है आर्य समाज को इसी से बचाना है। स्वामी दयानन्द इसी मनोवृति से हमें बचाना चाहते थे। वैदिक धर्म यथार्थ जीवन का है, यज्ञमय जीवन का निर्माण वेद की शिक्षा है। उन्नीसवें शतक में वेद के परमोद्धारक ऋषि दयानन्द एकमात्र ऐसे धर्माचार्य थे जिन्होंने यूरोप में विकसित ज्ञान विज्ञान एवं नये शिल्प का स्वागत किया। आज का यूरोपीय या अमरीकी विद्वान् बाइबिल की दुहाई नहीं देता। उसका ज्ञान-विज्ञान मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए है। ईसाइयों ने वैज्ञानिकों का विरोध किया, मुसलमानों ने भी विरोध किया। पौराणिक हठाग्राहियों ने भी विरोध किया। हममें से भी कुछ रूढिवादी हिन्दू आर्य समाजियों ने भौतिकतावाद की गन्ध विज्ञान और शिल्प में पायी, पर विज्ञान के चरण आगे बढते गये। वेद, वेदाँग, उपवेद सबको मिलाकर वर्तमान नाम विज्ञान है। विज्ञान ही मानव मात्र का समान धर्म है। विज्ञान प्रतिपादित–अपौरुषेयत्व में निष्ठा रखना ही सच्ची आस्तिकता है और इसी अपौरुषेयत्व के प्रति नतमस्तक होना मनुष्य का सहज स्वाभाविक धर्म है। अपौरुषेय सृष्टि में विराट् पुरुष का दर्शन करना और इस पुरुष के साक्षात्कार से व्यक्ति और समाज को शाश्वत नैतिकतत्त्व की ओर अग्रसर करना मनुष्य का स्वाभाविक सहज धर्म है। हम अपने विगत मध्यकालीन इतिहास में हिन्दू गणित, ग्रीक ज्योतिष, अरब की रसायन-इन संकुचित भावनाओं के शब्दों का प्रयोग करते थे; किन्तु आज मानव मात्र का एक गणित है, एक रसायन है, एक शिल्प शास्त्र है। ऋषि दयानन्द ने इसी प्रकार की एक कल्पना तथाकथित धर्म के क्षेत्र में की थी। वे समस्त मानव को एक धर्म मंच पर, एक आस्तिकता पर और एक नैतिकता पर लाना चाहते थें। आपके गुरुकुल के स्नातकों से भी इस दिशा में कार्य करने की पूरी आशा हमें थी। हम कभी-कभी आपको ही लक्ष्य करके आवेश में खुशियों के साथ गाया करते थे कि गुरुकुल का ब्रह्मचारी अरब देश में वेद-घोष ले जावेगा, भारत से दूर वेद का प्रचार करेगा। इस सब का एक अर्थ था कि राष्ट्र या देश की, जातपांत की, सम्प्रदायों की सीमायें लांघ कर एक मानवता को हमारा स्नातक प्रश्रय देगा, सभी देशों के अन्धविश्वासों और अज्ञानों को दूर करेगा।

हम २२-२४ वर्ष के वय ब्रह्मचारी से बहुत आशा नहीं करते। आप सब स्नातक जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। आप वैवाहिक गृहस्थ जीवन में रुद्र और आदित्य ब्रह्मचारी बनने की चेष्टा करें। ज्ञान के विस्तारक का नाम ब्रह्मचारी है। ब्रह्म और वेद शब्द समानार्थक हैं। सृष्टि ज्ञान का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम ही विद्या है। इसके दो भेद हैं—परा और अपरा। मूर्त सम्बन्धी ज्ञान सृष्टि का नाम अपराविद्या है। अपराविद्या ईश्वर में निष्ठा उत्पन्न करती है, किन्तु पराविद्या सृष्टि से हमें ऊपर उठाकर सृष्टि रचयिता तक ले जाती है। अमूर्त सृष्टि का ज्ञान पराविद्या है। इस पराविद्या के पांच अध्याय हैं। पांचों के विषय अमूर्त हैं—पहले अध्ययन का विषय इन्द्रियाँ हैं, दूसरे का प्राण, तीसरे का मानस क्षेत्र या अन्तःकरण, चौथे का जीवात्मा और पांचवें का विराट् पुरुष या ब्रह्म। ये पराविद्या अध्ययन के शीर्षक हैं। उपनिषदों में इसी विद्या का उल्लेख है। ये पांचों तत्त्व निराकार हैं। भौतिक या रसायन शास्त्र के क्षेत्र से बाहर इनका क्षेत्र है। इन क्षेत्रों में न्यूटन का सिद्धान्त नहीं लगेगा, न आइन्स्टीइन का। इनका विषय काल्पनिक नहीं है, यथार्थ है। इन पांच की सहायता के बिना कोई ज्ञान अर्जित नहीं हो सकता। इनके तत्त्व दर्शन के प्रति कोई उपेक्षा की भावना नहीं रख सकता। वेद का अध्ययन इस दिशा में भी आपका मार्ग प्रशस्त करेगा। आप अपनी ज्ञानपिपासा को बढ़ाते जायें। आपका गृहस्थ धर्म इस जीवन में बाधा नहीं डालेगा। ऋषियों की भी पत्नियां थीं। ऋषि स्वयं भी ऋषि थे और उनमें से कतिपय की सन्तानें भी ऋषि थीं। कुछ ऋषि-पत्नी भी थी, और ऋषिकायें भी थीं। सर विलियम ब्रैग नोबुल पुरस्कार विजेता हुए और उसका पुत्र ब्रैग (जूनियर) भी साथ ही साथ इस पुरस्कार में उसका साझी हुआ। सर जे० जे० थॉमसन ने नोबुल पुरस्कार पाया और उसके पुत्र जी० पी० थॉमसन ने भी। मेडम क्यूरी ने अपने पति पीरे क्यूरी के साथ भौतिकी के क्षेत्र में नोबुल पुरुस्कार पाया और दुबारा उसकी पत्नी क्यूरी ने रसायन के क्षेत्र में यही पुरस्कार पाया। क्यूरी-परिवार की पुत्री आइरीन क्यूरी और उसके दामाद जोलियों ने भी साथ-साथ नोबुल पुरस्कार पाया। इस अर्थ में मैं आपसे कह रहा हूँ कि गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट होकर भी आप ऋषित्व प्राप्त कर सकते हैं। आज आप वसु हैं। मेरी आकांक्षा है कि आपका ब्रह्मचर्य, आपका वेद प्रेम आगे भी बढ़े, जीवन भर आपका वेदाध्ययन बना रहे, गृहस्थ रहकर भो आप रुद्र ब्रह्मचारी बनें तथा आपका पढ़ा-लिखा तेजोवान् बने। अभी तो आपने ज्ञान का 'अ, इ, उ, ण्' सीखा है, श ष स र, हल् तक पहुँचते पहुँचते कई जीवन लगेंगे। ज्ञान की कोई सीमा नहीं। परमात्मा की थाह नहीं, परमात्मा की रची सृष्टि की भी थाह नहीं। परमात्मा अज्ञेय है और उसकी रचना का प्रत्येक कण भी अज्ञेय है। अज्ञ से अज्ञेय को समझने की पात्रता केवल ज्ञानियों में है। अज्ञानी अपने तुच्छ ज्ञान में ही अपनी सर्वज्ञता समझता है। आदित्य ब्रह्मचारी ही यह जानता है कि जो कुछ उसने जाना, वह कितना कम है, शून्य के बराबर। केनोपनिषद् का ऋषि, सुकरात ऐसा तत्त्ववेत्ता, न्यूटन ऐसा वैज्ञानिक ही इस सत्य के आस्वादन का अधिकारी था।

आप सम्भवतया समझते हों कि गुरुकुल या आचार्य—कुल की परम्परा आपकी ही संस्था में है। उपनिषदों में गुरु-शिष्यपरम्परा की कतिपय नामावलियां हैं। सुकरात, प्लेटो और अस्तूर की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम्परा प्रसिद्ध है। विज्ञान के क्षेत्र में, यूरोप के विश्वविद्यालयों में विज्ञान के क्षेत्र में यह परम्परा तीन सौ वर्षों की है। हममें प्रत्येक व्यक्ति जिसने विज्ञान के क्षेत्र में कुछ भी यशस्वी काम किया है, अपने गुरु के नाम पर गौरवान्वित होता है। मेरे गुरु अभी जीवित हैं, ९३ वर्ष की आयु के। मैं और मेरे गुरु भाई आज तक भी (८० वर्ष की आयु में भी) उनकी आंख से आंख मिलाकर बातचीत करने की उद्दण्डता नहीं करते उनके भी गुरु थे, उनके समय में गुरु की भी यही स्थिति थी। मैं अपनी वंश वृत्ती बताऊं तो ७००-६०० वर्ष पहले के जगत्–प्रसिद्ध जर्मन रसायन से अपना नाता जोड़ सकता हूं। पर यह गुरु-शिष्य सम्बन्ध प्रथम स्नातक उपाधि के समय स्थापित नहीं होता। जिस गुरु ने अनुसंधान और उच्च अध्ययन के क्षेत्र में हाथ पकड़ कर कुछ सिखाया, वह अन्तिम गुरु हमारा गुरु है। मेरा एक गुरु और अनेक शिष्य। मेरे एक माता पिता उनके पुत्र। गुरु और शिष्य में इतना गहरा सम्बन्ध इन गुरुकुलों में हुआ है, कि गुरु अपने शिष्य को न केवल अपने ज्ञान क्षेत्र में आलोक देता है वह उसके मानों पूरे जीवन का उत्तर दायित्व लेता है कहां नौकरी लगे, कहां आगे के कार्य के लिए सुविधायें प्राप्त हों और कभी-कभी कहां शादी विवाह हो, इन सबकी उसे चिन्ता है। मालूम नहीं कि आपके गुरुकुल में यह परम्परा कहां तक स्थापित हुई है पहले गुरु के गौरव से शिष्य गौरवान्वित होता है और बाद को शिष्य के गौरव से गुरु भी अपने को यशस्वी समझता है। कभी किसी बात में गुरु की अपकीर्ति हुई, तो शिष्य को उस अपकीर्ति का परिणाम भी भोगना पड़ता है।

विगत ८० वर्षों में आपके गुरुकुल ने शिक्षा और आर्य समाज के प्रचार-प्रसार के संबंध में अच्छी सेवा की थी, आपके अनेक स्नातकों के विद्यानुराग से हम सभी परिचित हैं। हिन्दी साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में इन स्नातकों ने अभूतपूर्व ख्याति प्राप्त की। दिल्ली नगरी में १००, २०० आप के स्नातक अच्छा काम कर रहे हैं। किसी एक का नाम नहीं लेना चाहता। देश देशान्तर में मिशनरी का काम भी इन्होंने अच्छा किया। आज के स्नातकों को अपने इन बड़े गुरु भाइयों के चरणों पर चलने का हौंसला बढाना चाहिए। नौकरियां हम बड़े-बड़े विश्वविद्यालय–स्नातकों को भी नहीं दे पाते, पुनः आपको भी हम आश्वासन नहीं कर सकते। जब कभी मैं आपके गुरुकुल के पुराने स्नातकों के सम्पर्क में आया हूँ। उनमें एक विशेषता पायी है, वह है आत्मविश्वास की। यह आत्मविश्वास उन्हें नित्य नूतन संघर्षों के लिये साहस और सामर्थ्य देता है आपके स्नातक यशस्वी हुए हैं और पी.एच.डी. एम.ए. आचार्य या शास्त्री की उपाधियाँ ले लेने में इन्हें कोई कठिनाई मालूम नहीं होती। वाद प्रतिवाद प्रतियोगिता में मैं इन स्नातकों की कुशलता प्रायः विश्वविद्यालय में भी देख चुका हूं।

मैं न तो स्नातकों को उपदेश देने का साहस करूंगा और न अधिकारियों को सुझाव। पर कुछ बातें अवश्य कहूँगा। तैत्तरीय उपनिषद् के उद्बोधन से उत्तम और उद्बोधन हो ही क्या सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ? स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्रीय वातावरण में सभी भारतीय विश्वविद्यालयों ने पूर्णतया या अंशतः इसे अपना लिया है। यह उद्‌बोधन किसी सम्प्रदाय की बपौती नहीं हैं। यह उस समय का है जब मानवता संकीर्ण सम्प्रदायों में बंटी थी न हिन्दू था न बौद्ध, न ईसाई और न मुसलमान।

आज युग विशेषज्ञता का है। आपके विश्वविद्यालय महाविद्यालय या गुरुकुल की कुछ विशेषता होनी ही चाहिये। प्रत्येक विश्वविद्यालय अपने पाठ्यक्रम, पठन–पाठन पद्धति आदि विवरणों में स्वतन्त्र है (सीमा या बाधा केवल अर्थ तन्त्र की है, अनुदानों की है) आप पूर्ण स्वतन्त्रता पूर्वक अपने संस्थान की विशेषता का विकास करें। ऊंचे स्तर पर पहुँच कर कोई भी शिक्षा संस्थान सभी विषयों के अध्ययन का भार नहीं ले सकता। मेरा सुझाव है, कि अन्य संस्थानों का आप न तो अनुकरण करें और न उनसे प्रतियोगिता। आप अपने लिये सीमित क्षेत्र का वरण करें। स्मरण रक्खें कि विज्ञान विषयक शोध संस्थान आप नहीं चला सकते। आज यह क्षेत्र इतना व्ययसाध्य है कि इंग्लैंड, फ्रांस और जर्मनी के पुराने विश्वविद्यालय भी अपने को इस कार्य के लिए दरिद्र पा रहे हैं।

आप स्नातक कक्षाओं में विद्यार्थियों की संख्या बढ़ाने की आतुरता न दिखावें। आप अपनी पद्धति के गुरुकुलों से देश की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई संख्या के शिक्षण की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते।

आप अपने गुरुकुलों में ऐसे स्नातक तैयार करें, जो वैदिक वाङ्मय के ऊंचे विद्वान् हों। अष्टाध्यायी, निरुक्त, महाभाष्य के महाविद्वान् हों इन्हें आप भाषाशास्त्र के विद्वान् बनायें। इस क्षेत्र में काम करने के लिए तपस्या करनी पड़ेगी। एकाध आचार्य और दो चार शिष्य लैटिन, ग्रीक और प्राचीन भाषाओं के विशेषज्ञ बनें और भारत के इतिहास के मर्मज्ञ हों। चीन की पुरानी संस्कृति का ये अध्ययन करें और धीरे–धीरे इस क्षेत्र को विकसित करें। आपका संग्रहालय और पुस्तकालय इन सीमित क्षेत्रों में सम्पन्न हो।

आपके प्राच्य–विभागीय छात्रों को भी संसार की गति विधि से परिचय होना चाहिए। पाठ्यक्रम से बाहर इनके लिये कुछ विशेष व्याख्यानों का प्रबंध करना होगा। चुने हुए कुछ आचार्यों और कुछ शिष्यों को ऐसे कामों के लिए आपके अधिकारियों को प्रोत्साहन देना होगा।

आर्य समाज के प्रति भी आप के गुरुकुल का एक कर्त्तव्य है। मैं आपसे पुरोहित तैयार करने के लिए नहीं कहता। निष्ठावान् तपस्वी उच्चस्तरीय मिशनरी आपको तैयार करने होंगे। देश के अनेक प्रान्चलों में आपके स्नातक काम करने का अवसर प्राप्त करें, आर्य समाज की संस्थायें इनका भरणपोषण कर निकटवर्ती एवं दूरस्थ देशों में इन्हें भेजें। ये सेवा–व्रती अपने कार्य के योग्य आपके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम से शिक्षा–दीक्षा प्राप्त करें और फिर कार्यरत हों, तो आर्य जगत् को भी गुरुकुल पर भरोसा होगा।

बहुत दिनों से मेरी कल्पना रही है कि उच्चस्तरीय अनुसन्धान या शोधपत्रिका आर्यजगत् की भी होनी चाहिये। होशियारपुर से एक पत्रिका निकलती है। आपके गुरुकुल से वैदिक मैगजीन निकालता था, एक वैदिक पाथ निकलता है। ये पत्रिकायें आज की दृष्टि से स्तरीय या मानक नहीं हैं। यदि इन पत्रिकाओं का जीवन क्षणिक है, तो ये यशस्वी नहीं हो सकती। मैं स्वयं प्रयाग के विज्ञान परिषद् से विज्ञान शोध सम्बन्धी एक पत्रिका ('विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका') लगभग २७ वर्ष से निकाल रहा हूँ–यह हिन्दी भाषा की एक मात्र अधिकृत शोध पत्रिका है। यदि गुरुकुल को ऐसी पत्रिका निकालनी है। तो गुरुकुल के पास कम से कम ५ लाख रुपये की एक स्थायी निधि होनी चाहिये। इतनी धनराशि से पचास– साठ हजार रुपया वार्षिक ब्याज आवेगा। तब आश्वस्त होकर उसके ब्याज से त्रैमासिक उच्चस्तरीय पत्रिका निकाली जा सकेगी। आज अनेक विश्व-विद्यालयों ने दयानन्द पीठ की स्थापना की है। इनकी संख्या बढ़ती जायेगी। बिना स्तरीय शोध पत्रिका के इन पीठों का काम भी अधूरा रहेगा। क्या आर्यसमाज के क्षेत्र में गुरुकुलों में निष्ठा रखने वाले ५–१० धनी मानी ऐसे व्यक्ति नहीं मिल सकते जो इस काम के लिए एक–एक लाख रुपया दे दें? शोध संस्थान खोलने की बात मैंने कलकत्ता में भी सुनी, बम्बई में भी, दिल्ली में भी अजमेर में भी। शोध संस्थान का नाम तो लोगों ने सुना है, किन्तु शोध कार्य के लिये शोधकर्ता को जो शोध स्वतन्त्रता चाहिये, उसे कोई देने को तैयार नहीं है। हमारा समाज भी रूढ़ियों से बंधा हुआ है। शोधकर्ता अपने क्षेत्र में कल्पना की मुक्त उड़ान लेता है। दूसरों को भी उसकी प्रत्यालोचना करने का अधिकार है, पर विचारों के स्वातंत्र्य और उनके प्रकाशन में कोई बाधा नहीं डाल सकता। आपका गुरुकुल संस्थान इस कार्य को उदारता से प्रारम्भ करे तो बहुत अच्छा होगा। आप नहीं करेंगे तो कोई करेगा ही। सम्भवतया यूनिवर्सिटी वालों को करना पड़े। गुरुकुलों और यूनिवर्सिटियों में अब निकट का सम्पर्क बढ़ाना चाहिए।

स्वतन्त्रता के बाद हमारे सम्मुख विगत कई वर्षों से दुःखद कहानियाँ भी आयीं। उत्तर भारत में यह विषाक्तता तेजी से फैली। हमारी समस्त शिक्षा - संस्थायें इसके कलुषित प्रभाव से ग्रस्त हो गयीं। अभी यह प्रभाव मिटा नहीं है। विद्यार्थियों में यह विष ऐसा फैला कि उनके लिए अभि-शाप बन गया। इसमें सबसे अधिक हानि युवकों और छात्रों की हुई। ये संयम खो बैठे, दूसरों ने अपने स्वार्थ के लिए उन्हें मूर्ख बनाया। आज गुरुकुल भी उस प्रभाव से बच न पाया। मैं अनैतिक तत्त्वों की बात नहीं करना चाहता, जिन्होंने यह स्थिति पैदा कर दी गुरुकुल को प्रतिष्ठा की हानि हुई है, और विश्वविद्यालयों की भी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९४७ से पूर्व देश परतन्त्र था, उस परतन्त्रता में भी विश्वविद्यालयों को स्वतन्त्रता प्राप्त थी और उस समय का शासक उस स्वतन्त्रता का सम्मान करता था। देश स्वतन्त्र हो गया; किन्तु हमारी परतंत्रता बढ़ती गयी। आर्थिक स्वतन्त्रता आयी–राष्ट्रीयकरण हुआ, जिसका अर्थ था सरकारीकरण। सरकारीतंत्र की अस्थिरता ने देश में उच्छृंखलता पैदा की। उत्तरदायित्वों से शून्य अधिकारी की मांग बढ़ी और इसका अवश्यंभावी परिणाम युवकों को भोगना पड़ा। युवक आज की भयंकर परिस्थिति के जनक भी हैं और भोक्ता भी। ऐसे पर्यावरण में मैं गुरुकुलों के आदर्शों की बात ही नहीं करना चाहता।

नव स्नातकों को बहुत बहुत आशीर्वाद और शतशः बधाइयां आप और आपके गुरुकुल के गौरव में देश का गौरव है। मेरी समस्त शिक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय में हुई। मैंने वही कार्य किया। उनकी एक एक ईंट पर मुझे गर्व है और प्यार है। पर जब आज उसकी धरती पर चलता हूँ, तो आंखों को नीचे किये हुए, सशंकित सा, जहां वर्षों से दीक्षान्त समारोह ही न हो पाया।

□ □ □

यज्ञाग्नि के दिग–दिगन्त हो, सुरभित व्याधि विपद भय क्षय हो।
वैदिक विचार धारानुकूल प्रिय जन-जन का परिपूर्ण हृदय हो॥
ओम पताका घर–घर फहरे ऋषिवर दयानन्द की जय हो।
सत्पथ प्रेरक अटल व्रत. आर्यों का ध्रुव सम दृढ़ निश्चय हो॥
निन्दक वेद पराजित हों, वैदिक धर्म की अविचल जय हो।
अज्ञाततम का नाश हो, तमसो मा ज्योतिर्गमय हो॥
रहो स्वस्थ सानन्द प्रसन्नचित, जिओ सुखी शत वर्ष अभय हो।
सब विधि यह नव वर्ष सभी को सुखद शांति मंगलमय हो॥

स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती
अधिष्ठाता–वेद प्रचार विभाग, दिल्ली
आर्य प्रतिनिधि सभा, १५–हनुमान रोड,
नई दिल्ली–११०००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुलों की समस्याओं का एक ही हल है

—डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार
परिद्रष्टा, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले गुरुकुलों की बाढ़ सी आ गयी थी। जगह-जगह गुरुकुल खुल रहे थे। कोई राज्य ऐसा नहीं था जिसमें गुरुकुल नाम की कोई न कोई संस्था नहीं थी। महात्मा गांधी, पं० जवाहरलाल नेहरू, श्री राजेन्द्र प्रसाद ये सब राष्ट्रीय चेतना का केन्द्र अगर कहीं देखते थे, तो उनकी दृष्टि गुरुकुलों की तरफ जाती थी। नाम चाहे गुरुकुल हो, चाहे विद्यापीठ हो—सबका मतलब एक ही था—राष्ट्रीयता, भारतीयता, इस देश की संस्कृति में प्रेम। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद यह स्वाभाविक था कि इन संस्थाओं को सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त होती, क्योंकि देश के अन्धकार के युग में ये ही राष्ट्रीयता, भारतीयता तथा देश की संस्कृति को बनाये रखने वाले केन्द्र थे, जिन्होंने बिदेशी संस्कृति के इस देश की संस्कृति पर हो रहे आक्रमण का डटकर मुकाबला किया था।

स्वतन्त्रता आयी और सरकार ने १९६२ में गुरुकुल पद्धति के मूल स्रोत गुरुकुल कागड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता प्रदान की। यह मान्यता इस कारण नहीं दी गयी थी कि जहां गुरुकुल स्थापित था उसके आस-पास अंग्रेजी, गणित, फिलॉसफी, सोशियोलोजी आदि की उच्च शिक्षा देने वाली संस्थाएं नहीं थीं। स्कूल-कॉलेज जगह-जगह शहर-शहर खुले हुए थे जहां प्रचलित शिक्षा पद्धति के अनुसार जो चाहता शिक्षा प्राप्त कर सकता था। गुरुकुल को विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता देने का लक्ष्य यह था कि जिन सिद्धान्तों को लेकर गुरुकुलों की स्थापना की हुई थी उन सिद्धान्तों को सुरक्षित रखा जाये। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के कुछ आधारभूत सिद्धान्त हैं। उदाहरणार्थ, ब्रह्मचर्य, तपस्या का सादा जीवन, गुरु-शिष्य का दिन-रात का सम्बन्ध, आश्रम-व्यवस्था, प्रातःकाल उठकर संध्या-हवन करना, संस्कृत तथा वैदिक संस्कृति का ज्ञान एवं उसे जीवन में उतारना, सह—शिक्षा का न होना, जन्म की जात-पांत को न मानना इत्यादि ये गुरुकुल शिक्षा पद्धति के आधारभूत सिद्धान्त हैं। इन सिद्धान्तों का यह अर्थ नहीं है कि गुरुकुल में पढ़े बालकों को वर्तमान विज्ञान से वंचित रखा जाये। जब गुरुकुल कांगड़ी अपने यौवन पर था तब यहां के विद्यार्थी उक्त सिद्धान्तों को जीवन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घटाते हुए शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिकतम विज्ञान का पूर्ण ज्ञान रखते थे, साथ ही संस्कृत के भी पूर्ण पंडित होते थे। थोड़े शब्दों में कहा जाए तो कहा जा सकता है कि गुरुकुल के विद्यार्थी प्राचीन भारतीय संस्कृति में ओत-प्रोत होने के साथ-साथ पूर्व तथा पश्चिम के विज्ञान में भी निष्णात होते थे और इसी संमिश्रण को गुरुकुल शिक्षा पद्धति का नाम दिया गया था। १९६२ से जब गुरुकुल काँगड़ी को सरकार द्वारा विश्वविद्यालय की मान्यता तथा आर्थिक सहायता दी जाने लगी तब गुरुकुल का यही चित्र सरकार के सामने था, यही उसका स्वप्न था। यह मान्यता गुरुकुल विश्वविद्यालय को नहीं, परन्तु गुरुकुल कांगड़ी जैसा भो वह था उसे दी गयी थी।

दुर्भाग्यवश, अब स्थिति वह नहीं है। अब जो छात्र विश्वविद्यालय की कक्षाओं में पढ़ते हैं उन्हें गुरुकुल की परम्पराओं का न तो ज्ञान है, न उन परम्पराओं को जानने की उनमें उत्सुकता है। अब गुरुकुल के विद्यालय विभाग में तो वह परम्परा मौजूद है, परन्तु गुरुकुल विश्वविद्यालय विभाग में अपनी वह विशेषता नहीं रही जिसके कारण इस संस्था को विश्वविद्यालय की पदवी दी गई थी। ९-१० मार्च ८४ को युनिवर्सिटी ग्रान्ट्स कमीशन की एक विजिटिंग कमेटी गुरुकुल विश्वविद्यालय की कुछ आर्थिक योजनाओं का अध्ययन करने वहां गई थी। मैं भी उनके साथ गुरुकुल गया था। बातचीत के दौरान इस कमेटी के एक मुख्य सदस्य ने मुझे कहा कि सुना है वहां यज्ञशाला में कोई यज्ञ नहीं करता, वह सूनी पड़ी रहती है। मैंने उन्हें कहा कि असली गुरुकुल है, छोटे बच्चों का गुरुकुल, जिसमें बाल्यावस्था में बच्चे लिये जाते हैं, उसमें तो प्रातः सायं दोनों समय सन्ध्या हवन होता है। जब हम लोग गुरुकुल पहुँचे, रात को सोने के बाद उठने पर प्रातः चार बजे ब्रह्मचारी वेदों के मन्त्रों का उच्चारण कर रहे थे और पांच बजे के लगभग शौचादि से निवृत्त होकर योगासन कर रहे थे। यह सब देखकर कमेटी के सदस्य प्रभावित अवश्य हुए, परन्तु मेरा मन कहता रहा कि दिखाते हम इस बच्चों के गुरुकुल को हैं और इसका लाभ मिलता है गुरुकुल के उस भाग को जिसमें न गुरुकुलीयता है, न गुरुकुलीय संस्कृति है और जिसमें 'गुरुकुल' इस नाम के सिवाय ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे यथार्थ रूप में गुरुकुल कहा जा सके, ऐसा गुरुकुल जो गुरुकुलीय सिद्धान्तों पर आधारित हो।

मैंने यह सारी समस्या कमेटी के सामने नग्न रूप में रखी। गुरुकुल को अनुदान के रूप में जो मान्यता मिली है वह उसके गुरुकुलीय रूप को, गुरुकुलीय संस्कृति को कायम रखने के लिये मिली है, परन्तु इस ग्रान्ट से लाभ मिल रहा है गुरुकुल के उस भाग को जो गुरुकुलीय रूप या गुरुकुलीय संस्कृति नहीं है। होना तो यह चाहिए था कि गुरुकुल विश्वविद्यालय में वे विद्यार्थी दिखलायी देते जो अन्य शिक्षा संस्थाओं से अपनी विशेषता के कारण भिन्न हैं, परन्तु हो यह रहा है कि इसका विकास अन्य चालू शिक्षा संस्थाओं का प्रतिबिम्ब होता जा रहा है। उसी के लिये लाखों रुपयों की माँग हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही है, और उसी के लिये यू० जी० सी० लाखों दे रही है। इस संस्था में वे विद्यार्थी भरती हो रहे हैं जो गुरुकुलीयता या गुरुकुलीय संस्कृति से शून्य होते हैं, अधिकांश संख्या उन्हीं लोगों की है। इस समस्या का हल ढूढ़ना आवश्यक है क्योंकि अगर यह समस्या हल हो जाती है तो भारत भर के सब गुरुकुलों की समस्या इस विश्वविद्यालय का विकसित अंग होने के कारण हल हो जायेगी। इस समय वृक्ष का तना बढ़ता जा रहा है, उसकी जड़ सूखती जा रही है। गुरुकुलीयता या गुरुकुलीय संस्कृति को पनपाने के लिए उसकी जड़ में पानी देना होगा ताकि अपने ढंग का यह वृक्ष हरा-भरा हो, इसके पत्तों में चमक हो, फूलों में सुगन्ध हो और फलों में रस हो।

कमेटी के सदस्यों में से उन सज्जन ने जिन्होंने शंका की थी कि यहां की यज्ञशालाएं सूनी पड़ी रहती है इस समस्या का हल सुझाया। उन्होंने कहा कि गुरुकुल को विश्वविद्यालय की मान्यता उसकी अपनी बिशेषता के कारण दी गयी थी। यह विशेषता वहां से शुरु होती है जहां से बालक गुरुकुल में प्रवेश करता है। गुरुकुल का विद्यालय विभाग उसी प्रकार विश्वविद्यालय का अङ्ग है जिस प्रकार गुरुकुल का कॉलेज विभाग अङ्ग है या जिस प्रकार पैर सम्पूर्ण शरीर का अंग है। गुरुकुल विश्वविद्यालय को दी जाने वाली ग्रान्ट के लिये आपको यह प्रयत्न करना चाहिये कि गुरुकुल का विद्यालय विभाग तथा कन्या गुरुकुल इन दोनों को गुरुकुल विश्वविद्यालय का अभिन्न अंग माना जाय ताकि दोनों विभागों को आर्थिक अनुदान से इतने उच्च स्तर पर लाया जा सके जिस कारण आपके गुरुकुल के वातावरण में पढ़े हुए छात्रों तथा छात्राओं से सारा विश्वविद्यालय भर जाये और आपको बाहर से छात्र लेने की आवश्यकता न रहे, इसी प्रकार आप अपनी संस्कृति तथा अपनेपन को कायम रख सकते हैं अन्यथा बाहर से छात्र भरती करते-करते किसी समय आप नाम मात्र के गुरुकुल कहलायेंगे, आपका अपनापन नष्ट हो जायगा, अनुदानों से आप एक बड़ी युनिवर्सिटी बन जाएंगे, परन्तु भीतर से खोखले हो जायेंगे।

इस सिलसिले में उन्होंने अलीगढ़ यूनिवर्सिटी तथा जामिया मिलिया का दृष्टान्त दिया। ये संस्थाएं स्वतन्त्र रूप से केन्द्र द्वारा शासित हैं। इनके विद्यालय-विभाग भी केन्द्र द्वारा विश्वविद्यालय को प्रदत्त अनुदानों से चलते हैं। इनकी अपनी-अपनी विशेषता है जिसे प्रजातान्त्रिक राज्य में बनाये रखना राजनीतिक सिद्धान्त है। राजनीति में अल्प संख्यक लोगों या संस्थाओं को राज्य से पूर्ण संरक्षण प्राप्त होता हैं। गुरुकुल पद्धति में लड़के-लड़कियों का एक साथ रहकर पढ़ना निषिद्ध है। यह हमारे सिद्धान्त का अंग है। इसमें किसी को दखल देने का अधिकार नहीं है। इसलिये अगर गुरुकुल के संचालक सिद्धान्त के आधार पर लड़कियों के गुरुकुल को एक अन्य परिवार में रखते हैं तो इस आधार पर निरन्तर मिलने वाली सरकारी सहायता से वंचित किया नहीं जा सकता। गुरुकुल विश्वविद्यालय को सैद्धान्तिक रूप से एक 'यूनिट' मानकर उसे विद्यालय-विभाग, कन्या गुरुकुल विभाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा कॉलेज विभाग के तौर पर युनिवर्सिटी ग्रान्ट कमीशन से अथवा केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय से अन्य केन्द्रीय विद्यालयों की तरह गुरुकुलीय पद्धति को शिक्षा तथा जीवन विधि को ध्यान में रखते हुए भरपूर आर्थिक सहायता मिलनी चाहिये ताकि भारत भर के गुरुकुल एक दृढ़ नींव पर खड़े होकर एक सूत्र में बंध सकें। हमें गुरुकुल विश्वविद्यालय के लिए हमारे "फ्रीडिंग गुरुकुल" सहायक होंगे ताकि हमारा विश्वविद्यालय उन गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त छात्रों से इतना भर जाये कि हमें बाहर से छात्रों को लेने की आवश्यकता ही न रहे।

इस दिशा में गुरुकुल के संचालकों को सक्रियता से, तत्परता से तथा बार-बार आवेदन पत्र देकर और मिलने-जुलने से प्रयत्न करने की आवश्यकता है ताकि गुरुकुल शिक्षा पद्धति शिक्षा के जगत् में अपना स्थिर स्थान बना सके। इस समस्या को हल करने के लिये एक साधिकार कमेटी बना देनी चाहिए जो सिर्फ इस समस्या को हल करे, क्योंकि गुरुकुलों के अध्यापकों का असन्तोष दूर करने का यही एक मार्ग है कि उन्हें विशेष पद्धति का अनुसरण करने के कारण गुरुकुल विश्वविद्यालय के यूनिट का अंग स्वीकार किया जाय।

□ □ □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृहत्तर भारत में भारतीय संस्कृति

—डॉ० विनोदचन्द्र सिन्हा,
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,

वृहत्तर भारत प्राचीन भारतीय इतिहास के गौरव की गाथा है। हमारे सांस्कृतिक प्रचार की एक रोचक कहानी है और विश्व को सभ्य और सुसंस्कृत बनाने का एक प्रबल प्रयास है। इसीलिये प्रस्तुत विषय पर आप के समक्ष कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्यों को रखने का प्रयास किया है।

इतिहास साक्षी है कि विश्व में भारतीय संस्कृति के प्रसार की कहानी बेजोड़ है। ईसाईयत के प्रचारक जब अपने धर्म प्रचार के लिये निकले तो उनके एक हाथ में बाईबिल और दूसरे हाथ में शराब की वोतल थी। ईसाई धर्म को फैलाने के लिये वे बाईबिल मुफ्त बांटते थे और प्रलोभन के रूप में अंग्रेजी शराब की बोतल भी दी जाती थी। शराब तो प्रतीक है। कहने का अभिप्राय है कि ईसाईयत को फैलाने के लिये प्रलोभन के समस्त मार्ग खोल दिये गये थे। ठीक इसी प्रकार से इस्लाम के बन्दे जब अपने धर्म प्रचार के लिये निकले तो उनके एक हाथ में कुरान और दूसरे हाथ में तलवार थी। कुरान के अपनाने से जो इनकार करता था, दूसरे साथ में लटकी हुई तलवार से उसकी गर्दन काट दी जाती थी। यह बात प्राय: सर्वविदित है कि हजरत मुहम्मद साहब के पश्चात् उनके खलीफाओं के समय में इस्लाम धर्म का प्रचार और प्रसार बलपूर्वक किया गया। सातवीं शती में अरब प्रायद्वीप में इस्लाम धर्म का अभ्युदय हुआ था और आठवीं शती के मध्य तक विश्व के एक विशाल भूखण्ड पर इस्लाम की विजय वैज्यन्ती फहराने लगी थी। इस्लाम की विश्वव्यापी लहर शीघ्र ही सीमान्तों से भारत में प्रवेश करने लगी थी। किन्तु सुदीर्घ काल तक मुस्लिम शासकों द्वारा शक्ति प्रयोग तथा शान्ति पूर्वक प्रचार से भी इस्लाम धर्म को भारत में उल्लेखनीय सफलता मिली। भारत में आने से पूर्व इस्लाम जिन देशों में गया था, उसे विलक्षण सफलता मिली थी, किन्तु इस देश में काफी प्रयास के बाद भी इस्लाम भारत के एक बहुत थोड़े से भाग को अपना अनुयायी बना सका था।

ईसाई और इस्लाम धर्म के प्रचार की तुलना जब भारतीय संस्कृति के प्रचार के साथ जाती है, तो एक अजीब ही दृश्य हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। ईसा मसीह और हजरत मुहम्मद साहब से सैकड़ों वर्ष पूर्व जब भारतीय पण्डित अपनी संस्कृति के प्रसार के लिये भारतीय सीमाओं से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहर निकले तो उनके हाथ न कोई विशेष पोथी थी और न शराब की बोतल या तलवार। वृहत्तर भारत में भारतीय संस्कृति के प्रसार की कहानी तो निराली है।

प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति भारतीय सीमाओं को पार करके जिस विशाल प्रदेश में फैली, उसे ही हम वृहत्तर भारत कहते हैं। इसमें साइबेरिया से सिंघलद्वीप और ईरान से प्रशान्त महासागर के बोर्नियों और बालि टापू तक का फैला हुआ विशाल भूखण्ड सम्मिलित है। भारत की इश सांस्कृतिक विजय की कहानी बड़ी ही अद्‌भुत है। रक्त की बूंद भी बहाये बिना भारतीय पण्डितों ने जो कार्य किया विश्व के इतिहास में उसका सानी नहीं है। ईसा के जन्म से सैकड़ों वर्ष पूर्व भारतीय पण्डित भारतीय सीमाओं को पार करने लगे थे। मन में कोई प्रलोभन नहीं था। शक्ति की बात कभी उठी ही नहीं। एक ही संकल्प था कि विश्व को मानवता का सन्देश देना है। बदले में लेने की कोई भी भावना नहीं थी। आने जाने की बात आज बड़ी सरल है। यातायात के द्रुतगामी साधनों ने दूरियों को लगभग समाप्त कर दिया है। किन्तु प्राचीन काल में सीमाओं को पार कर बाहर जाना एक कठिन बात थी मार्ग के पर्वत जंगली जानवर और मरुस्थल बहुत बड़े अवरोधक थे। पैदल यात्रा में जाड़ा, गर्मी और बरसात की समस्यायें भी आती थीं। इनकी कोई भी चिन्ता न करते हुए भारतीय पण्डितों ने जो कार्य किया है उसे कभी भी भुलाया नहीं जा सकता।

भारतीय संस्कृति के प्रसार के दो प्रधान प्रेरक कारण थे। प्रथम तो आर्थिक है। वित्रेषण मनुष्यों को दूर दूर के देशों में जाने और भारी संक्टों के उठाने की प्रेरणा देता है। हिन्द महासागर में भारत की केन्द्रीय स्थिति होने से वह प्राचीन विश्व के सभ्य देशों के समुद्री रास्तों के मध्य में पड़ता था। अतः भारतीय पश्चिम के सिकन्दया और पूर्व में चीन के समुद्र तक व्यापार के लिये जाया करते थे। उन दिनों यह समझा जाता था कि वर्मा, मलाया, जावा तथा सुमात्रा आदि देशों में सोने की खानें हैं। इन्हें सुवर्ण भूमि और सुवर्ण द्वीप से नाम से पुकारा जाता था। धन की आशा में भारतीय व्यापारी जहां गये वहां स्वाभाविक रूप से भारतीय संस्कृति भी ले गये। असभ्य जातियों को सभ्य बनाने में भारतीय व्यापारियों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन व्यापारियों से प्राथमिक जानकारी मिलने के फलस्वरूप, भारतीय संस्कृति प्रसार का दूसरा कारण भी निर्मित हो गया। यह दूसरा कारण लोक कल्याण की कामना और धर्म प्रसार को भावना थी। इससे अनुप्राणित होकर भारतीय ऋषि और चित्रक मानव जाति को सभ्य और उन्नत बनाने के लिये निकल पड़े। कभी-कभी महत्त्वाकांक्षी सरदारों तथा क्षत्रिय राजकुमारों ने भी वृहत्तर भारत के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। इस प्रकार भारतीय संस्कृति के प्रसार के तीन मुख्य साधन व्यापारी, धर्म प्रसारक और उपनिदेशक थे। हमारे उपनिदेशक का आशय दूसरे देशों में भारतीयों का स्थायी रूप से बस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाना था। सुवर्णद्वीप में इस प्रकार के अनेक भारतीय राज्य स्थापित हुए। कहा जाता है कि अशोक के काल में निर्वासित भारतीयों ने मध्य एशिया की एक प्रमुख बस्ती खौतन का उपनिदेशक कुणाल की हृदयस्पर्शी कथा ने संबन्धित है। कुणाल अशोक का प्रिय पुत्र था। उसकी आखें बहुत सुन्दर थी। युवा होने पर उसका विवाह काँचनमाला के साथ हुआ। अशोक ने बुढ़ापे में तिष्यरक्षिता नामक एक सुन्दरी ने विवह किया। यह स्त्री कुणाल की मनमोहक आंखों पर मुग्ध थी उसने कुणाल से प्रणय की याचना की किन्तु पुत्र ने विमाता के साथ इस पाप को स्वीकार नहीं किया। अतः तिष्यरक्षिता उसकी कहर शत्रु बन गयी। कुछ समय बाद कुणाल को तक्षशिला का प्रान्तपति बनाकर वहां भेज दिया गया। इसी बीच अशोक बीमार पड़ा। उसकी चिकित्सा का भार तिष्यरक्षिता पर था। उसे अपना बैर चुकाने का अवसर मिल गया। उसने तक्षशिला के पौरों और जानपदों के पास एक जाली चिट्ठी भेजी। इसमें अशोक की ओर से यह आदेश था कि कुणाल की आंखें निकाल ली जायें। तक्षशिला के पौरजानपद इस आदेश को मानने को तैयार नहीं थे। किन्तु कुणाल को जब इस आदेश का पता लगा तो उसने बिना किसी हिचक से अपनी आंखे निकलवा दी और कांचनमाला के साथ पाटलिपुत्र लौटा। कहा जाता है कि अशोक को जब इस घटना का पता लगा तो उसने तिष्यरक्षिता को जीवित जलवा दिया। जो लोग इस षड्यन्त्र में सम्मिलित थे, उन्हें देश निर्वासन की सजा दी गयी। राज्य से निकले हुये ये व्यक्ति खौतन में जाकर बस गये। यह भी कल्पना की गयी है कि सम्राट अशोक मृत्यु दण्ड देना पसन्द नहीं करता था। उस समय राज-द्रोहियों को निर्वासन का दण्ड दिया था और सम्भवतः इस कार्य के लिये मध्य एशिया के क्षेत्र को चुना गया था। आठवीं शताब्दी तक मध्यएशिया में भारतीय संस्कृति के यहां इतने अधिक अवशेष मिलें हैं कि इसे उपरलाहिन्द कहा जाता है। उपरला हिन्द होते हुए भारतीय संस्कृति का प्रचार चोन और जापान में हुआ। पूर्वी देशों में भारतीय संस्कृति का फैलाव मानव जाति के विकास में भारतवर्ष की बहुत बड़ी देन है। मध्य एशिया इसमें महत्त्वपूर्ण पड़ाव था। अतः इस क्षेत्र में भारतीय संस्कृति का फैलना असाधारण महत्त्व रखता है। वर्तमान समय में साईबेरिया के दक्षिण में. तिब्बत तथा भारत के उत्तर में, कैस्पियन सागर के पूर्व में तथा गौबी मरुस्थल के पश्चिम में अवस्थित मध्य एशिया के विशाल भूखण्ड को तुर्किस्तान का नाम दिया जाता है। राजनीतिक दृष्टि से आज इसके तीन बड़े भाग हैं। चीनी—तुर्किस्तान, रुसी—तुर्किस्तान और अफगान—तुर्किस्तान। मुस्लिम आक्रान्ताओं के कारण यहां के अधिकांश प्राचीन अवशेष नष्ट हो चुके हैं। फिर भी पूर्वी अथवा चीनी तुर्किस्तान से पुरातत्त्व की प्रचुर सामग्री प्राप्त हुई है।

प्राचीन काल में वृहत्तर भारत के दो प्रधान क्षेत्र थे। प्रथम तो मध्य एशिया जिसकी संक्षिप्त चर्चा आप की गयी। दूसरा था दक्षिण पूर्वी एशिया इस सम्पूर्ण क्षेत्र को परला हिन्द के नाम से पुकारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है। इसमें वर्मा, मलाया, कम्बुज, जावा, सुमात्रा, बालि, बोर्नियो और प्रशान्त महासागर के अनेक क्षेत्र सम्मिलित थे। बुद्ध और मौर्यकाल में पूर्व के इन प्रदेशों से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध रहा है। परन्तु ईसवी सन् के प्रारम्भ से भारतीयों ने अपने वहाँ उपनिवेश बसाने प्रारम्भ कर दिये। शुंग–सातवाहन काल तक दक्षिण पूर्वी एशिया में भारतीयों की अनेक बस्तियां बस गयी थीं। गुप्त काल में तो यह दशा आ गयी कि इस क्षेत्र के प्रायः सभी देशों में ऐसे राज्य कायम हो गये। जिन्हें पूर्णतया भारतीय कहा जा सकता है। गुप्तकाल में भारतीय संस्कृति का विश्वव्यापी प्रसार प्राचीन भारतीय इतिहास का स्वर्णिम अध्याय है।

जब भारतीयों ने दक्षिण पूर्वी एशिया में प्रवेश करके अपने उपनिवेश स्थापित किये, तो उस समय यह भूखण्ड बर्बर जातियों द्वारा आवासित था। हिन्दू आवासकों ने इन्हें सभ्यता का प्रथम पाठ पढ़ाया। जीवन का शायद ही कोई ऐसा पहलू बना हो, जो इनके प्रभाव से अछूता रह पाया हो। सुवर्ण द्वीप के आवासन का श्रेय हिन्दू राजकुमारों और ब्राह्मणों को है अतः यहां शैव और वैष्णव धर्मों की प्रधानता रही, जावा तथा बोर्नियो आदि स्थानों से हिन्दू देवताओं की सैकड़ों मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। प्रसिद्ध पुरातत्त्व वेत्ता क्राफोर्ड ने तो जावा के सम्बन्ध में लिखा है कि पुराणों का शायद ही कोई ऐसा देवता हो जिसकी प्रतिमा जावा में न पाई गई हो। आज भी बालि के शिल्पी, इन्द्र, विष्णु और कृष्ण को मूर्तियाँ बनाते हैं। यहां के अधिकांश निवासी आज भी हिन्दू हैं। जो भारतीय विधि से दुर्गा तथा शिव की पूजा करते हैं। आज बाली में दिखाई देने वाला यह हिन्दू प्रभाव प्राचीन काल में समूचे सुवर्णद्वीप में फैला हुआ था। इस प्रभाव की पुष्टि साहित्य और कला से भी होती है। सुवर्ण द्वीप में लिपि और संस्कृत भाषा का प्रसार था। चम्भा और कम्बुज से संस्कृत के सैकड़ों अभिलेख मिले हैं। कम्बुज के राजा यशोवर्मा ने पातञ्ज महाभाष्य पर टीका लिखी थी। (नवीं शती)

भारतीय धर्म और साहित्य के साथ-साथ सुवर्णद्वीप में भारतीय कला का भी प्रसार हुआ। कम्बुज की मूर्ति कला गुप्त कालीन काल से प्रादुर्भूत हुई थी। धीरे-धीरे यहां के शिल्पी इतने दक्ष हो गये कि उन्होंने पाषाणों में अमर काव्यों की रचना कर डाली। कम्बोडिया तथा जावा के मन्दिरों में रामायण, महाभारत और हरिवंश पुराण के दृश्य बहुत सफाई और सफलता के साथ उत्कीर्ण किये गये हैं। जिस उत्तर भारत में मुस्लिम आक्रान्ताओं द्वारा मन्दिरों का विनाश हो रहा था, उस समय कम्बुज में अंकोरवाट और अंकोर धाम के विश्वविख्यात मन्दिरों का निर्माण हो रहा था। (सूर्य वर्मा द्वितीय ११४३ ४५ और जयवर्मा सप्तम ११८१–१२००) वास्तुकला का उच्चतम विकास अंकोरवाट तथा बोरोबुदूर के अद्वितीय मन्दिरों में मिलता है। इस प्रकार के देवालय न भारत में पाये जाते हैं न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी दूसरे देश में वे विश्व की अद्भुत् वस्तुओं में गिने जाते हैं तथा इन प्रदेशों में भारतीय संस्कृति के अमर स्मारक हैं। दक्षिण पूर्वी एशिया में भारतीय राज्य लगभग पन्द्रहवीं शताब्दी तक विद्यमान रहे। तत्पश्चात् इस क्षेत्र में इस्लाम धर्म और संस्कृति का प्रसार हुआ।

बृहत्तर भारत की कहानी तो आज पुरानी पड़ गयी है। किन्तु इसकी गौरवमयी गाथा आज भी सजीव है। आज भी आध्यात्मिक दृष्टि से भारत विश्व का गुरु है।

मुझे आगे बढ़ना है

चाहे शीतल हिम भी प्रचण्ड आग बन जाए,
चाहे 'पुष्प-माला' भी कराल नाग बन जाए,
चाहे अनन्त आनन्द भी 'नाश-राग' बन जाए,
संघर्ष को मुस्कान समझ, जी भरके खिलना है।
मुझे आगे बढ़ना है।

चाहे मेरी अनन्त खुशियां बनें अनन्त बाधाएं,
चाहे जलकर राख बने 'ओ' अनन्त आशाएं,
चाहे पल न आराम करें सब अटूट क्रूरताएं,
गम को भी सावन समझ, जरुर मुझे झूलना है।
मुझे आगे बढ़ना हैं।

मिले लाभ न चाहे पर पाना कुल मुझे है,
तीखे-तीखे शूलों को भी कहना फूल मुझे है,
परार्थ ही हो अभीष्ट स्वार्थ, अनुकूल मुझे है,
कुर्बानी को खुशी समझ, सदा गले मिलना है।
मुझे आगे बढ़ना है।

कवि—महेन्द्रसिंह 'उत्साही'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचार-शास्त्र एक तुलनात्मक अध्ययन

—डॉ० जयदेव वेदालंकार
रीडर एवं अध्यक्ष दर्शन विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

आचार शास्त्र के विषय में भारतीय मनीषियों एवं पाश्चात्य दार्शनिकों ने पर्याप्त अन्वेषण किया है। आचार शास्त्र दर्शनशास्त्र का प्रमुख अङ्ग माना जाता है। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार आचार शास्त्र दर्शन का क्रियात्मक पहलू है। दर्शन शास्त्र हमें सैद्धान्तिक ज्ञान कराता है तो आचार शास्त्र शुभ और अशुभ का निर्णय करता है। आचार शास्त्र के अन्दर प्रमुखतः नैतिक निर्णयों का व्याख्यान होता है। हमने कोई कार्य किया तो लोग कहते हैं—उसने अच्छा किया। यह जो निर्णय है कि यह अच्छा किया—इसका निर्णय हम किसी की अपेक्षा से कहते हैं। कान्ट के अनुसार शुभ अपने में शुभ है। वह किसी की अपेक्षा नहीं रखता।[1] उसका कहना है कि एक भिखारी हमारे समक्ष भीख मांगने आता है, हम उसको टालने के लिये चवन्नी फेंक कर मारते हैं, वह होटल में जाकर उससे कुछ लेकर खा लेता है। कान्ट के अनुसार यह नैतिकता नहीं है। उसका कथन है कि डाक्टर आपरेशन करता है, उस आपरेशन करने से हमें उस समय दुःख होता है, परन्तु डाक्टर का उद्देश्य हमें दुःख पहुँचाना नहीं है। इसी प्रकार एक शेर किसी मनुष्य पर आक्रमण करता है, हम उस मनुष्य की रक्षा के लिए उस शेर पर गोली चलाते हैं परन्तु वह गोली शेर को न लगकर मनुष्य को लग जाती है। कान्ट का कहना है कि यद्यपि उस मनुष्य की मृत्यु हो गई परन्तु हमने यहां उस मनुष्य के उद्देश्य को देखना है जिससे उसने गोली चलाई। गोली चलाने का उद्देश्य उसका शुभ था अतः नैतिकता है अनैतिकता नहीं। कान्ट का कहना है कि उसी नियम का पालन करो जो सर्वव्यापक बन सके।[2]

आचार शास्त्र में कई प्रकार की मान्यता हैं उनमें से एक मान्यता है सुखवाद। यह सुखवाद दो प्रकार का होता हे—(१) स्वार्थ सुखवाद (२) परार्थ सुखवाद।

---

1 Good will is the only good that is good without qualification.
2 Act that principle which......be an universal law.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखवादी दार्शनिक मिल, बेन्थम, स्पेंशर आदि हैं। परन्तु ये नैतिक सुखवाद को मानते हैं। इनका कहना है कि—जैसे मैं सुखी होना चाहता हूँ, इसी प्रकार दूसरे प्राणी भी सुख चाहते हैं इसलिये मुझे भी और को दुःख नहीं देना चाहिये क्योंकि मैं भी दुःखी नहीं होना चाहता। इस प्रकार पाश्चात्य दर्शन में मनोविज्ञान नैतिक सुखवाद का प्रादुर्भाव होता है। इससे पूर्व तो स्वार्थ सुखवादी दार्शनिक दूसरों के सुख की उपेक्षा करते थे। उनका नीति सम्बन्धी सिद्धान्त चार्वाक के समान है। चार्वाक का कहना है कि विषयजन्य जो सुख हैं वही हमारा अन्तिम उद्देश्य है। वह कहता है कि जब तक जिओ सुख से जिओ चाहे ऋण भी क्यों न लेना पड़े।1 यही विचारधारा स्वार्थ सुखवादी पाश्चात्य दार्शनिकों की थी इस प्रकार पाश्चात्य नीतिशास्त्र में प्रकृतिवाद अर्थात् व्यवहार वाद, अन्तःप्रज्ञावाद, सुखवाद, विकासवाद अर्थात् पूर्णतावाद आदि वादों का प्रचलन हुआ। विकास वाद के अनुसार सर्वाङ्गीण, विकास ही मनुष्य का उद्देश्य है। इसमें हेगल एलक्जेन्डर, स्पेंशर, हर्बर्ट, ग्रीन और डारविन आदि का नाम लिया जा सकता है। इनमें हेगल अध्यात्मवादी विकासवादी है। आगे चलकर अरविन्द पर इसका प्रभाव पड़ा।

नीतिशास्त्र का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त बुद्धिवाद है। इस विषय में स्पिनोजा का कहना है कि नीतिशास्त्र एक सोद्देश्यपूर्ण शास्त्र है। अर्थात् मनुष्य का सम्बन्ध जहाँ प्रकृति के साथ है वहाँ समाज के साथ भी है। मनुष्य को अपना उद्देश्य बनाना चाहिये कि वह प्रकृति और समाज के साथ सन्तुलन बना सके। उसे चाहिये कि वह ज्ञानमार्ग की सीढ़ियों द्वारा और शरीर के सन्तुलन को मन के साथ रखता हुआ मौक्तिका ज्ञान को प्राप्त कर लेवे।

बटलर का कहना है कि हमें अन्तर्मुखी और बाह्य निरीक्षण द्वारा यह पता लगता है कि नैतिक ज्ञान सहज ज्ञान है। मनुष्य के अन्दर परोपकार, दया, सहानुभूति आदि जन्मजात हैं। वह कहना है कि हमारी अन्तर्बोध की शिक्षायें स्वयं भगवान् की शिक्षायें हैं इस अन्तर्बोध के सिद्धान्त को मानकार बटलर ने स्वार्थवाद का खण्डन किया है। इस प्रकार पाश्चात्य दार्शनिक भौतिकवाद से चलकर अध्यात्मवाद की ओर प्रवेश करते हैं।

अब प्रश्न यह होता है कि नैतिकता के सिद्धान्त कैसे बनते हैं? उनका मापदण्ड क्या हो? कुछ लोग परम्परा, रीतिरिबाज को ही नैतिकता मानते हैं। जिसमें परोपकार की भावना से कृत कार्य नैतिक माना जाता है। कुछ अन्य दार्शनिक एक लक्ष्य को सामने रख कर नैतिकता का निर्णय देते हैं। जैसे सुखवादी चार्वाक आदि हैं। कुछ लोग निरपेक्ष सिद्धान्त के रूप में नैतिकता को मानते हैं, जैसे—कान्ट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

1 "यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।"

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि दयानन्द जी के नीतिशास्त्र के सम्बन्ध में विचार करने से पूर्व यह विचार करना होगा कि वे नैतिक सिद्धान्तों को किन बातों पर आधारित मानते हैं अर्थात् उनका नैतिकता का मापदण्ड क्या है ? क्योंकि कोई भी दार्शनिक कुछ स्वतःसिद्ध सिद्धान्तों को मानकर उनके अनुसार अपने माप-दण्ड बनाता है। ऋषि दयानन्द जी के नैतिक सिद्धान्त निम्नलिखित बातों पर आधारित हैं—

१. आत्मा अभौतिक है, असृष्ट है, तथा अमर है।

२. यह चेतन है इसमें ज्ञान, संवेदना और प्रयत्न होते हैं।

३. आत्मा स्वतन्त्र है। स्वतन्त्रता इसकी मौलिक सम्पत्ति है। इसको स्वतन्त्रता किसी बाहरी तत्व से प्राप्त नहीं हैं, परन्तु स्वतः प्राप्त है। परन्तु यह स्वतन्त्रता कर्म करने में है, फल भोगने में नहीं।

४. आत्मा असीमित नहीं है। इसका ज्ञान, कार्य सब सीमित हैं। इसकी उन्नति और अवनति दोनों संभव हैं उन्नति के लिये प्रयास करना चाहिये।

५. मनुष्य को बहुत ऊंचे उद्देश्य तक जाना है। अतः उसके उत्तरदायित्व का क्षेत्र बहुत बड़ा है। अनेक विकल्पों में से किसी एक को चुनना है। उस चुनाव के लिये आचार शास्त्र सहायक होता है।

६. केवल मनुष्य ही नहीं अपितु प्राणीमात्र के पीछे एक उद्देश्य है।

७. आत्मा सक्रिय तथा विकासशील है। इसी प्रकार संसार भी विकासशील है। संसार की गति से साथ अपनी गति को मिलाना यही नैतिकता सिखाती है।

महर्षि दयानन्द जी इन सिद्धान्त को मानकर चलते हैं। नीतिवाद के सम्बन्ध में वे यंत्रवाद, यथा उद्देश्यवाद दोनों का खण्डन करते हैं। उद्देश्यवादी सिद्धान्त के अनुसार ईश्वर सम्पूर्ण संसार का केन्द्रबिन्दु है। वह अपने लिए संसार रचता है। इस उद्देश्यवाद के अनुसार आत्मा सर्वथा परतन्त्र हो जाता है अथवा बन्धन में रहता है। पूर्ण स्वतन्त्रतावाद भी ठीक नहीं है क्योंकि इसके अनुसार ईश्वर जीव की रचना करता है और कृपा करके जीवों को स्वतन्त्रता प्रदान करता है। प्रथम सिद्धान्त के अनुसार तो जीवात्मा को अपने पथ निर्वाचन करने की स्वतन्त्रता नहीं रहती। जब कभी जीव कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं है तो उन कर्मों के फल के भोगने में बाध्य नहीं होने चाहियें क्योंकि जो जैसा करता है वैसा ही भोगता है यह एक स्वतन्त्र सर्वतन्त्र सिद्धान्त है।[1] अतः इस सिद्धान्त के अनुसार तो नैतिकता का प्रश्न ही नहीं उठता। दूसरे मत के अनुसार ईश्वर स्वतन्त्रता प्रदान करता है, इससे स्वतन्त्रता का मूल्य नहीं रह जाता है।[2] स्वामी जी के सिद्धान्त दोनों ही मतों के विरोधी हैं। ऐसे

१ अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

2 Brought freedom is not freedom.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर का होना तो व्यर्थ ही है जो अपने स्वार्थ के लिए जीवों की सृष्टि करता है। जीव को खतरे में डाल देता है। यह मानना कि संसार एक जेलखाना है, ईश्वर इसका जेलर। यह भी मान्यता अनुचित है। ऐसा मानने पर तो नैतिकता का कोई स्थान ही नहीं रहता है। जो लोग ईश्वर और जीव की काल्पनिक सत्ता मानते हैं। उनका भी ऋषि खण्डन करते हैं। इस प्रकार दोनों प्रकार के मत, भौतिकवाद एवं परतन्त्रवाद जिसे अध्यात्मवाद भी कहा जाता है, दोनों का ही खण्ड़न करते हैं। स्वामी मध्यम मार्ग को अपनाते हैं। उनका सिद्धान्त है जैसा कि भारतीय दर्शन में माना गया है कि आत्मा अमर है। वह पुनः जन्म लेता है। जो भी अच्छे बुरे कर्मों को करता है, उस का फल उसे अवश्य भोगना पड़ता है। इन का कहना है कि जब मनुष्य अच्छे कर्मों को करता है तो उसे उत्साह, आनन्द आदि का अनुभव हृदय में होता है और बुरे कर्म करता है तो उसको अपने हृदय में भय, लज्जा, शंका आदि का अनुभव होता है। यहाँ पर वे एक प्रकार से अन्तरज्ञान[1] के सिद्धान्त को मानते हैं, जिसे बलटर भी मानता है। स्वामी दयानन्द जी के अनुसार मनुष्य नैतिक सिद्धान्तों का केन्द्रबिन्दु है। उनका कहना है कि व्यक्ति समाज के लिये और समाज व्यक्ति के लिए है। वे आर्य-समाज के दसवें नियम में लिखते हैं कि "सामाजिक, सर्वहितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें और प्रप्येक हितकारी नियम में स्वतन्त्र हैं। इससे स्पष्ट हो रहा है कि ऐसे नियम भी कुछ नहीं जो अधिक समाज का अहित करते हों और ऐसे नियम भी अनुचित हैं जिनमें व्यक्ति के पीछे समाज बलिदान हो जाता हो। यदि व्यक्ति न होंगे तो समाज भी नहीं होगा। इस प्रकार यदि व्यक्तियों का निर्माण हो जावेगा तो समाज का निर्माण भी अपने आप हो जायेगा। दूसरे दार्शनिक समाज का सुधार चाहते हैं। परन्तु महर्षि दयानन्द जी व्यक्ति और समाज दोनों का निर्माण करना चाहते हैं।

महर्षि दयानन्द जी हमें परिधियों में उस प्रकार नहीं बाँधना चाहते हैं जिस प्रकार समाज जाति, रंग और छोटी भावनाओं से बंधा हुआ है। 'यह मेरा, वह उसका यह भावना छोटे मनुष्यों की है। उदार मनुष्य विश्व को ही अपना परिवार समझते हैं।[2]

महर्षि दयानन्द जी का मन्तव्य है कि जब तक मनुष्य अपने-अपने धर्मों का पालन नहीं करते हैं तभी तक समाज में विश्रृंखलता आती है। धर्म से अभिप्राय किसी मत विशेष से नहीं। उन का कहना है कि ऐसा धर्म मनुष्यकृत नहीं अपितु ईश्वरकृत वैदिक परम्परायें हैं। जिन का उल्लेख वेदों में है। धर्म किसी वर्ग विशेष का नहीं अपितु सर्वमानवहितकारी होता है। जैसा कि मनु जी कहते हैं-

1 INTUTION

२ अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धैर्य रखना, क्षमा करना, इन्द्रियों का दमन करना, मन वचन कर्म से चोरी न करना, आत्मा और मन को पवित्र रखना इन्द्रियों को विषयों में अत्यधिक लिप्त न करना, मनुष्यों का धीर होना, विद्या को प्राप्त करना, मन वचन और कर्म से सत्य का पालन करना और क्रोध कभी न करना ये धर्म के लक्षण हैं[1] अर्थात् इन के पालन का नाम धर्म है। यहाँ पर ये धर्म किसी वर्ग विशेष का धर्म नहीं हैं, अपितु इस धर्म का पालन संसार का प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है।

महर्षि दयानन्द जी यह मानते हैं कि मनुष्य का लक्ष्य अपने आप को जानना अथवा परमात्मा को प्राप्त करना है। इस आचार शास्त्र का अन्तिम उद्देश्य पूर्णता को प्राप्त करना अर्थात् मुक्ति को प्राप्त करना है, परन्तु इस के साथ-साथ सामाजिक उन्नति भी करना है। जैसा कि वैशेषिक दर्शन में कहा है—धर्म वह है जिससे इस लोक की उन्नति और मुक्ति की प्राप्ति हो।[2] अतः अभ्युदय साधन है और निश्रेयस् साध्य है। धर्म दो प्रकार का है। पहला सामाजिक दूसरा व्यक्तिगत जैसे हिंसा न करना, चोरी न करना, सत्य बोलना, ब्रह्मचर्य का पालन करना और संग्रह अधिक न करना[3] ये पाँच यम कहलाते है, जो सामाजिक धर्म के अंग कहे जा सकते हैं। जिन का पालन अवश्यमेव करना चाहिये। इन को सार्वभौम महाव्रत कहा गया है। भारतीय आचार शास्त्र प्रणेताओं ने समस्त समाज को दो प्रकार से विभक्त किया है। प्रथम आश्रमों की दृष्टि से इस प्रकार है— (क्रमशः)

---

१ धृतिक्षमादमोऽस्तेयं शोचमिन्द्रियनिग्रहः। धीर्विद्यासत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥ मनु०॥

२ यतोऽभ्युदयनिः श्रेयससिद्धि स धर्मः। (वैशे० १-१)

३ तत्राहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः॥ (सत्यार्थप्रकाश समु० सात)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूलों की घाटी

–डॉ० काश्मीर सिंह भिण्डर
इतिहास विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

प्राचीन काल से ही पर्वतों का अपना अलग से आकर्षण रहा है, चाहे ग्रीष्म ऋतु हो, शरद हो या वर्षा ऋतु, हर मौसम में पर्वत आनन्ददायक होते हैं। शरद ऋतु के प्रारम्भ होते ही पर्वत अपनी श्रृंखलाओं पर हलकी जमती बर्फ की छटा से जहां मैदान में बैठे साधारण व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, वहीं ग्रीष्म ऋतु के शुरु होते ही हिमालय का प्रत्येक आंचल अपने मदहोश जवानी से आकर्षित करता है। जिस समय सूर्यताप से पर्वतों की चोटियों का बर्फ पिघलने लगता है, उस समय का दृश्य अपना अलग ही स्थान रखता है। मनुष्य इस रोमांस से भरपूर आमन्त्रण को न कभी टाल पाया है और न कभी टाल पायेगा। हिमालय पर्वत की गोद ही ऐसी है जहां मानव की हर आवश्यकता पूरी हो सकती है, जैसे अध्यात्म का आकर्षण, प्राकृतिक सौन्दर्य देखने की लालसा, झर-झर करते झरनों का निनाद, आखेट के लिये घने जंगल, रोगियों के लिए ओषधि, भ्रमण के लिये रमणीक स्थल क्या कुछ नहीं है पर्वतों की गोद में। इसलिये रोनाल्ड ने कहा था कि सही मायने में इन्सान को यदि सब कुछ कहीं मिल सकता हैं तो वह केवल हिमालय की गोद में। पर्वत सदैव से अपना सब कुछ लुटाकर दूसरों को प्रसन्न करने मात्र में ही खुश रहा है।

मनुष्य सदैव से रमणीय स्थलों की तलाश में इधर से उधर खोज करने में मग्न रहा, इसी तरह की एक खोज में लगा हुआ कामथ कमीशन के अधीन १९३५ में ब्रिटिश लोगों का एक काफिला मैदानों से चलता हुआ हिमालय के शिखर पर जा पहुँचा, जहां उसे फूलों की सुगन्ध ने मदहोश कर दिया। इस सुगन्धमय वातावरण की जगह का नाम है फूलों की घाटी। फूलों की घाटी आज एक विश्व प्रसिद्धि लिये हुए है क्योंकि एक ओर सिक्खों का एकमात्र धार्मिक स्थल हेमकुण्ड और दूसरा है फूलों की घाटी, जिनका अपना ऐतिहासिक महत्त्व है। फूलों की घाटी को जाने के लिये केवल मात्र गोविन्दघाट से ही रास्ता है। गोविन्दघाट से यह घाटी १९ किलोमीटर की दूरी पर है जिसको पैदल चलकर या छोटे घोड़ों पर सवार होकर तय किया जा सकता है। गोविन्दघाट से फूलों की घाटी एवं हेमकुन्ड तक पगडन्डीनुमा रास्ता है जिसमें एक ओर विशाल पर्वत और दूसरी सिंहनाद करती हुई बाण गंगा, जो प्रत्येक दर्शनार्थियों को प्रेरणा देती है एवं इस दुर्गम रास्ते को तय करने के लिये साहस बढ़ाती है। इस रास्ते को तय करने में स्वस्थ आदमी तक हांफ जाता है। रास्ते की दूरी महसूस न हो इसलिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्येक दो किलोमीटर पर चाय की दुकाने यात्रियों को सहारा देने के लिये अपने गन्तव्य पर पहुँचने में सहयोग देती हैं। गोविन्दघाट से घघरिया तक प्रकृति की छटा को देखने वाला तथा हेमकुण्ड की यात्रा को जाने वाला यात्री एक दूसरे का साहस बढ़ाता हुआ आगे चलता है और घघरिया पहुँचने पर अपनी-अपनी दिशा ले लेता है। घघरिया नामक स्थान से दायीं ओर हेमकुण्ड है और बायीं ओर फूलों की घाटी। गुरु गोबिन्द सिंह से देश व धर्म की रक्षा में दुनिया के समक्ष अपने पुत्रों का तथा अपना बलिदान देकर उदाहरण प्रस्तुत किया कि देश व धर्म की रक्षा ही मनुष्य का धर्म है।

इसी स्थान के पास महाकाल का ऐतिहासिक मन्दिर भी स्थित है। हेमकुण्ड का दर्शन करने वाला यात्री इस मन्दिर के दर्शन कर अपने को भाग्यशाली मानता है घघरिया से दर्शनार्थी चलता है तो तरह-तरह की फूलों की गन्ध तथा वातावरण की मादकता उसको छेड़ना शुरु कर देती है। कोई तो इस छेड़खानी से रास्ते में ही इतना मदहोश हो जाता है कि कोई पुष्प आकर अपना वह गीत सुनाये जिससे दोनों का भेद एवं अन्तर भी समाप्त हो जाय। यहां पर थोड़ी-थोड़ी दूरी पर दूध की भांति श्वेत झरने सौन्दर्य में और निखार ला देते हैं और इन्सान को आत्मविभोर कर देते हैं। फूलों की घाटी बारह हजार पांच सौ फिट की ऊंचाई पर स्थित है। मध्य हिमालय में नर-पर्वत और जंस्कार पर्वत से घिरी यह घाटी है, जहां पर विभिन्न प्रकार के रंग-बिरंगे फूल यहां की शोभा बढ़ाते हैं, वहीं यहां चारों और दूर-दूर तक फैले देवदार के वृक्ष यहां के सौन्दर्य को श्रीवृद्धि करते हैं। वास्तव में यह स्थान भी इन्सान के लिये आश्चर्यजनक है। यहां ना तो फूलों को कोई रोपता है न ही उनकी किसी प्रकार देखभाल होती है। लाखों फूल जो सैकड़ों प्रकार के हैं, केवल प्रकृति ही उनकी देखभाल करती है। यही वह स्थान है जहां पाण्डु ने तप किया था, यही वह स्थान जहां पाण्डव घटोत्कच पर चढ़कर पहुँचे थे। यही वह स्थान है जहां पुष्पों की शोभा को देखकर द्रौपदी मन्त्रमुग्ध हो गयी थी। इस घाटी का वर्णन द्रोण–पर्व में भी आता है कि जिस समय राजा जयद्रथ ने अभिमन्यु को मार गिराया था उससें पाण्डव पक्ष में जहां अभिमन्यु का दुःख था वहीं दूसरी और अर्जुन की प्रतिज्ञा का भय, क्योंकि अर्जुन ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब तक जयद्रथ का वध नहीं कर लूंगा तब तक अन्न ग्रहण नहीं करूंगा। महाभारत में इस स्थान का बहुत ही सुन्दर वर्णन है, जिसमें इस स्थान को देव व ऋषियों का स्थान कहा गया है—

अयं देव निवासो वै गन्तव्यो वो भविष्यति ।
ऋषिनां चैव दिव्यानां निवास पुण्यकर्मणा ।।

महाभारत में ही इस स्थान को सौगन्धिक वन कहा गया है—

एष पन्था कुरुश्रेष्ठ सौगन्धिक वनाय ते ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरन्तर झरने वाले झरनों के जल उस पर्वत के कण्ठदेश में अवलम्बित मोतियों के हार से प्रतीत होते हैं। यहां छाया हुआ कोहरा, हल्की-हल्की बूंदों की बौछार, फूलों की कभी न समाप्त होने वाली खूशबू, रोम-रोम में रोमांस पैदा कर देती है। इतना सुन्दर दृश्य है यहाँ का कि जिसको शब्दों में नहीं बांधा जा सकता। इस प्रकृति के दैवी बगीचे को देखने के लिये जहां प्रकृति प्रेमी आते हैं वहीं पर बोटनिस्ट यहां पर कैम्प डाले रखते हैं और यहां पर खिले हुए फूलों को एकत्रित कर अपने-अपने लेबोटरीज में ले जाकर टैस्ट करते हैं। लेकिन आज तक कोई वैज्ञानिक यहाँ के रहस्य को नहीं जान पाया है। फूलों की घाटी के सुन्दर दृश्य मानव को इतना अधिक प्रभावित कर देते हैं कि वह दैवीय बगीचे को प्रशंसा में कह उठता है–यही है–स्वर्गलोक और देवलोक।

□

स्वतन्त्रत देश में अवसान और अवसाद ऐसा

स्वतन्त्रत देश में अवसान और अवसाद ऐसा,
दरिद्रता और दैत्य का साम्राज्य जैसा।
सामाजिक हीनता और उदासीनता का अन्धकार ऐसा,
पराभव और पराधीनता का अभिशाप जैसा।
व्यथा और व्यग्रता का मेघ उमड़ता है ऐसा,
रौरव नरक की यातनाओं का सैलाब जैसा,
देश द्रोह का विटप पनपता है ऐसा,
अहिफण उठता है और झूमता है जैसा।
क्रूर उग्रता का कराल कुकृत्य है ऐसा,
निर्दोष मानवता का संहार जैसा।

१९५, जी ब्लाक
श्री गंगानगर, राजस्थान

के० लाल शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रोत्थान कौन कर सकता है ?

—श्री सुरेशचन्द्र त्यागी
प्रिंसिपल—विज्ञान महाविद्यालय
गुरुकुल कांगड़ी, विश्वविद्यालय

चरित्र के विकास के लिए इच्छा—शक्ति का होना बहुत आवश्यक है। जो व्यक्ति ढुल-मुल होता है, उसमें इच्छा—शक्ति का अभाव होता है। अतः वह दुर्बल—चरित्र होता है। जो एक निश्चय करके उस पर दृढ़ नहीं रह सकता, जो प्रत्येक नवीन मत को ग्रहण कर लेता है, जिसका कोई स्थाई सिद्धान्त नहीं, जिसकी अपनी रुचि नहीं, उसके पास चरित्र का अभाव ही समझना चाहिए। ऐसे पुरुष भले हों अथवा बुरे किसी भी प्रकार के बड़े कार्य करने में अक्षम होते हैं। उनसे समाज का हित तो क्या होगा, वे अपना ही कल्याण नहीं कर सकते। एक चरित्रवान् व्यक्ति के लिए दृढ़ इच्छा—शक्ति की सख्त जरूरत है।

बालकों को अपना निश्चय स्वयं करने देना चाहिए। जो लोग बालकों को आत्मनिर्णय का मौका नहीं देते, जरा सी भी कठिनाई आने पर उनकी सहायता करने को उतावले हो जाते हैं, वे उनके चरित्र—विकास में सबसे बड़े बाधक हैं।

हठधर्मी भी दृढ़ इच्छा का ही एक स्वरूप है; किन्तु हमारा उद्देश्य हठधर्मी को प्रोत्साहित करने का नहीं है। हमारा अभिप्राय उन हालात से है जहां पर या तो व्यक्ति कुछ निश्चय कर ही नहीं पाता या अपनी इच्छा की दुर्बलता के कारण, झूठे दबाव में पड़कर अपना इरादा बदल देता है। लज्जा के कारण अथवा हीनता की भावना से, जो अपने निश्चय पर स्थिर नहीं रह सकता उसका व्यक्तित्व तथा चरित्र व्यर्थ है। वह कल क्या करेगा, कोई नहीं कह सकता। उसके चरित्र में स्थायित्व नहीं, और स्थायित्व ही चरित्र की विशेषता है। जो चरित्रवान् होता है वह अपने उचित निर्णय पर डटना जानता है। इस डटे रहने में उसे इच्छा—शक्ति से ही सहायता मिलती है। भर्तृहरि ने ठीक ही कहा है—

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः प्रारभ्य चोत्तमजनाः न परित्यजन्ति ॥

संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति होते हैं—उत्तम, मध्यम और नीच। नीच व्यक्ति विघ्नों के भय से किसी कार्य को प्रारम्भ ही नहीं करते। मध्यम प्रकार के व्यक्ति कार्य को प्रारम्भ तो कर देते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं परन्तु विघ्न आने पर उस कार्य को बीच में ही छोड़ देते हैं। उत्तम श्रेणी के व्यक्ति कार्य को प्रारम्भ करके तब तक नहीं छोड़ते जब तक कार्य सिद्धि नहीं हो जाती।

उत्तम प्रकार के व्यक्तियों की इच्छा–शक्ति प्रबल होती है। इस इच्छा–शक्ति के आधार पर ही वे संसार में महान् कार्य कर जाते हैं और अमर हो जाते हैं।

इच्छा–शक्ति एक बहुत बड़ी ताकत है। एक कहावत प्रसिद्ध है—"जहां चाह होती है, वहां राह निकल ही आती है। जिस परिस्थिति में बहुत बड़ी शारीरिक शक्ति से सम्पन्न, किन्तु दुर्बल इच्छा के व्यक्ति घबरा जाते हैं वहां इच्छा–शक्ति के प्रभाव से ही शरीर से दुर्बल पुरुष स्थिर, अचल होकर खड़ा रहता है। महाराणा प्रताप, वीर शिवाजी, स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी, नेताजी सुभाष बाबू इच्छा–शक्ति के आधार पर महान् कार्य करके इतिहास में अपना नाम अमर कर गये हैं। बिना दवा के ही, केवल इच्छा के जोर से अनेक लोग कठिन रोगों तक से मुक्त होते देखे गये हैं।

यह इच्छा–शक्ति है क्या? यह मनुष्य की कोई मूल शक्ति है अथवा इसका जन्म अकस्मात् हो जाता है और प्रबल से प्रबल विपत्तियों मे टकराने की विलक्षण शक्ति इसमें कहां से आ जाती है?

जीवन के अनेक अवसर आते हैं जब हमारे सामने निर्णय लेना कठिन हो जाता है और हमें कोई एक मार्ग चुनना होता है। हम तब एक अनिश्चय की दशा में होते हैं। क्या करें, क्या न करें यह हमारी समझ में नहीं आता। हम सोचते विचारते हैं, सभी प्रकार की युक्तियों का सहारा लेते हैं और तब अन्तर्द्वन्द्व के पश्चात् किसी एक निर्णय पर पहुँचते हैं। यह निर्णय हमारी इच्छा–शक्ति करती है।

युद्ध के लिये तैयार अर्जुन के सम्मुख एक बार ऐसा ही संकट उपस्थित हुआ था। उसके सम्मुख प्रश्न था कि वह धर्म–युद्ध करके आत्मीयों की हत्या करे अथवा आत्मीयता के मोह में पड़कर अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जाये। सोचा-समझा, पण्डित प्रवर भगवान् कृष्ण से उपदेश लिया और अन्त में अन्तर्द्वन्द्व के बाद यह निश्चय किया कि मैं युद्ध में भाग लेकर क्षात्र–धर्म का निर्वाह करुंगा। इस निर्णय में यह 'मैं' शब्द विशेष महत्त्व का है। इस निर्णय की प्रेरणा तथा उसको कार्यान्वित करने की प्रबल–शक्ति इस 'मैं' में ही छिपी हुई है, अर्जुन की इच्छा शक्ति का सम्पूर्ण रहस्य इस 'मैं' में ही निहित है।

"मैं" कौन? अर्जुन, क्षत्रिय शिरोमणि, जगत् विख्यात, क्षात्र-धर्म विवेक सम्पन्न, ज्ञानी अर्जुन यह महान् लज्जा की बात होगी कि साधारण मनुष्यों सी दुर्बलता अर्जुन के आचरण में भी प्रकट हो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं ऐसा कभी नहीं होगा। मैं क्षात्र-धर्म पालन अवश्य करूंगा, उसके लिये मुझे कुछ भी क्यों न बर्दाश्त करना पड़े। यह 'मैं' अर्जुन के समस्त व्यक्तित्व का, चरित्र का, द्योतक है। इसमें उसका आदर्श 'स्व' है जो अनिश्चय की दशा में भली-भांति स्पष्ट नहीं हो सका था। अतएव इच्छा-शक्ति, चरित्र का बल है और इसी से किसी का व्यक्तित्व निखरता है।

सुन्दर चरित्र के लिए इच्छा-शक्ति की बहुत जरुरत है। जो व्यक्ति दृढ़ निश्चय नहीं कर पाता, जो अपने किसी कार्य पर डट नहीं पाता, उसका व्यक्तित्व प्रभावहीन तथा चरित्र दुर्बल होता है। मनुष्य का विगत जीवन एवं भावी योजनाएं जिस "आदर्श स्व" को बनाती हैं, इच्छा-शक्ति उसी की प्रबल प्रेरणा को कहते हैं। शिक्षकों को चाहिए कि बालकों को आत्म-निर्णय का अवसर दें, जिससे उनकी इच्छा-शक्ति दृढ़ हो सके। वंशानुक्रम, प्रकृति, वातावरण सभी का हाथ चरित्र निर्माण में होता है और उन पर शिक्षकों का कोई नियंत्रण नहीं होता। किन्तु तब भी छात्रों की इच्छा-शक्ति को जगाने के लिए वे जो भी कुछ कर सकते हैं। उन्हें लगन तथा ईमानदारी से करना चाहिए। चरित्रवान् व्यक्तियों पर ही किसी देश का भविष्य निर्भर करता हैं और चरित्र का निर्माण बहुत कुछ शिक्षकों के हाथ में होता है।

आज देश के नवयुवक विज्ञान, इंजीनियरिंग, कृषि आदि क्षेत्रों में उन्नति कर रहे हैं, परन्तु दुर्भाग्यवश चारों ओर भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी और बेईमानी का राज हैं। देश तेजी से पतन की ओर जा रहा है। उसका एकमात्र कारण यही है कि नवयुवकों के चरित्र निर्माण की ओर किसी का ध्यान नहीं। हम एक ऐसा देश बना रहे हैं जिसकी नीव रेत के ढेर पर खड़ी है और यह नींव कभी भी बुरी तरह ढह सकती है।

एक अंग्रेजी कहावत है कि "जब किसी का धन नष्ट हो जाये तो समझो कि कुछ नष्ट नहीं हुआ। जब स्वास्थ्य नष्ट हो जाये तो समझो कि कुछ हो गया और जब चरित्र नष्ट हो जाये तो समझो कि सब कुछ नष्ट हो गया। अतः आज देश के गिरते हुए नैतिक स्तर को उठाने के लिए बालकों का उच्च चरित्र बनना परमावश्यक है और यह तभी सम्भव है जबकि माता-पिता तथा प्रत्येक गुरु बालकों की इच्छा-शक्ति को दृढ़ करें, क्योंकि बिना दृढ़ इच्छा-शक्ति के उच्च चरित्र ही नहीं बन सकता।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय के प्रांगन से-

आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार
उप-कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

पिछले दिनों विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की छठी पंचवर्षीय योजना को अन्तिम रूप देने के लिये गुरुकुल में आयी।

इस सन्दर्भ में जो प्रश्न उभर कर सामने आया वह यह था कि क्या गुरुकुल की कोई विशेषता है अथवा गुरुकुल भी अन्य विद्यालयों की तरह ही है जो बी० ए०, एम० ए० की परीक्षायें लेता है और डिग्रियां बांटता है? सौभाग्य से इस अवसर पर विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा महोदय डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालङ्कार तथा गुरुकुल के पुराने स्नातक, धर्मयुग एवं नवनीत के भूतपूर्व सम्पादक और अब गुरुकुल के आचार्य प्रो० सत्यकाम विद्यालङ्कार भी उपस्थित थे।

कुलपति जी ने अपने स्वागत भाषण में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के ८० वें दशक का कार्यक्रम उपस्थित करते हुए जोरदार शब्दों में कहा कि गुरुकुल सामान्य विश्वविद्यालयों की तरह नहीं है। गुरुकुल का एक विशेष लक्ष्य है। गुरुकुल के पास एक विशेष सन्देश है जो गुरुकुल ने न केवल राष्ट्र को अपितु सारे संसार को देना है। वह सन्देश है आध्यात्मिक मूल्यों का, विज्ञान का प्रसार और पाखण्ड का खण्डन अर्थात् श्रेयस् और प्रेयस् का संगम।

इसी उद्देश्य को लेकर सन् १६०० में स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरुकुल की स्थापना की थी।

महर्षि दयानन्द राष्ट्र को मजबूत बनाना चाहते थे। वह जानते थे कि देश तभी सशक्त होगा जब सभी देशवासी सशक्त, सबल, हृष्ट-पुष्ट, तेजस्वी-ओजस्वी होंगे। वह देश की निर्बल, असहाय असमर्थ जनता को बलवान् स्वावलम्बी, समर्थ बनाना चाहते थे। अतः जहां एक ओर उन्होंने समाज सुधार के कार्यक्रम पर बल दिया, वहां व्यक्तिगत सुधार पर भी उन्होंने यथेष्ट जोर दिया।

उन्होंने ब्रह्मचर्य की महिमा समझी और आजन्म ब्रह्मचर्य के कठिन व्रत का पालन किया। सिद्ध को प्रमाण क्या? तभी वह ब्रह्मचर्य पालन पर सदैव जोर दिया करते थे। आजन्म ब्रह्मचर्य पालन करना सबके लिये सम्भव नहीं। इसलिये उन्होंने कहा पहले २५ वर्ष तक प्रत्येक युवक को और १६ वर्ष तक प्रत्येक कन्या को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। इस अवस्था के बाद ही शादी होनी चाहिये।

वह चारों ओर देख रहे थे छोटी उमर की शादियों का अभिशाप, नर पंगुओं की संख्या में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्धि, बच्चों के कच्चों की उत्पत्ति। इसका उन्होंने कड़ा विरोध किया।

आज भी अभी बाल विवाह बन्द नहीं हुये। उनके शिष्य हरविलास शारदा ने कानून बनवाया कि लड़की की शादी १८ वर्ष से पहले और लड़कियों की १४ वर्ष से पहले नहीं होनी चाहिये। लेकिन जनमत ने इसे पूर्णत: स्वीकार नहीं किया। बाद में शादी की आयु पुरुषों के लिये २१ और लड़कियों के लिये १८ कर दी गई; किन्तु जनमत की तैयारी न होने के कारण यह अभी कोरे कागजी कानून ही हैं। हां, कानून का कुछ न कुछ असर तो होता ही है। लेकिन कानून को सफल करने हेतु भविष्यद्रष्टा, आदर्शवादी, अग्रगामी समुदाय को सचेष्ट होकर जनमत तैयार करना होता है।

स्वामी दयानन्द ने अपने कार्यक्रम को बढ़ाने हेतु आर्यसमाज को एक सक्रिय संस्था के रूप में जन्म दिया था। आर्यसमाज ने शुरु-शुरु में दयानन्द के कार्यक्रम को तेजी से आगे बढ़ाया। इसी हेतु स्वामी श्रद्धानन्द ने आज से ८४ वर्ष पूर्व गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना की ताकि यहां से निकले हुये ओजस्वी स्नातक अच्छे ब्राह्मण, अच्छे क्षत्रिय और अच्छे वैश्य बने तथा देश के उद्धार में अपना योगदान दें। लेकिन विहंगम दृष्टि से देखा जाय तो जिस पौराणिकता, पाखण्ड और पोपलीला के विरुद्ध स्वामी दयानन्द ने युद्धभेरी बजाई थी वह अभी भी देश में प्रचुर मात्रा में व्याप्त है। अत: उनके कार्यक्रम को गतिमान करने हेतु और अन्धकार के इन गढ़ों को मिटाने हेतु कृत संकल्प नवयुवक समुदाय की दयानन्द के वीर सैनिकों को बहुत आवश्यकता है और उनको तैयार करने का कार्य गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का है।

एक अन्य बात जिस पर स्वामी जी ने जोर दिया था, वह थी स्त्री शिक्षा। आज भी देहात में चले जाइये या दलित वर्ग के लोगों को देखिये, स्त्री शिक्षा का कतई अभाव है। स्त्रियां सुशिक्षित होंगी तभी देश का उद्धार होगा। इसी हेतु १८९५ में जालन्धर में आर्य कन्या महाविद्यालय एवं १९२३ में देहरादून में कन्या गुरुकुल महाविद्यालय की स्थापना हुई थी।

बाल विवाह बन्द हो, स्त्री शिक्षा भरपूर हो, तो राष्ट्र क्यों न मजबूत होगा?

ब्रह्मचर्य के साथ ही ऋषि दयानन्द ने यम-नियम के पालन पर भी जोर दिया था। यम पांच है—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह। नियम भी पांच है—शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश प्रणिधान।

ठीक है इनको धारण करना आसान नहीं है। लेकिन लक्ष्य सुनिश्चित हो, ध्येय स्पष्ट हो तो साधक साधना और अभ्यास करते करते लक्ष्य की ओर अग्रसर होता ही है। इसमें तो दो राय हो नहीं सकतीं कि यही मार्ग सन्मार्ग है, सुपथ है, अन्य नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही है गुरुकुल कांगड़ी का सन्देश जिसके प्रचार की देश बिदेश में आवश्यकता है। इस सन्देश को देश विदेश में पहुँचाने हेतु हमें दुभाषिये ही नहीं त्रिभाषिये,चतुर्भाषिये कर्मठ विद्वानों की आवश्यकता है, जो देश की अन्य भाषाओं में, विदेशी भाषाओं में वेद के इस अमर सन्देश का प्रचार करें।

इसी सन्दर्भ में आचार्य सत्यकाम विद्यालङ्कार ने गुरुकुल को वैदिक संस्कृति का अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र बनाने की योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी के सम्मुख रखी, जिसे उन्होंने बहुत पसन्द किया।

स्वामी दयानन्द ने १८७५ में उदघोष किया था, सुराज्य कितना भी अच्छा क्यों न हो, स्वराज्य से अच्छा नहीं हो सकता। इसी उदघोष को १८९६ में लोकमान्य तिलक ने दोहराया जब उन्होंने कहा, स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है—मैं इसे लेकर रहूँगा। बस इसके बाद ५० वर्ष तक भारत स्वतन्त्रता संग्राम में जूझ गया और इस महायुद्ध में हजारों वीरों ने अपना सर्वस्व बलिदान किया। उन्होंने खून दिया, स्वतन्त्रता देवी प्रसन्न हुई। १५ अगस्त १९४७ को देश में स्वराज्य स्थापित हुआ।

उसको मूर्त रूप देने हेतु भारत की जनता ने अपने लिये नया संविधान बनाया जिसके अधीन २६ जनवरी १९५० से भारत का प्रशासन कार्यरत है।

लेकिन यदि आज की पीढी के नवयुवकों से पूछा जाय कि स्वतन्त्रता प्राप्ति में उमके पूर्वजों ने क्या कुर्बानियाँ दीं क्या यातनायें भोगीं तो थोड़े बहुत को छोड़कर बहुत से तो शायद १० अमर शहीदों के नाम भी नहीं बतला सकते। इसी तरह २६ जनवरी का क्या महत्त्व है, इस प्रश्न का उत्तर भी बहुत लोग नहीं दे सकते।

इस कमी को दूर करने हेतु तथा भारत की स्वतन्त्रता एवं पुनर्जागरण के इतिहास को रचने हेतु गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय ने अपनी छठी योजना में लाजपत राय पीठ प्रतिष्ठित करने का प्रस्ताव उक्त समिति के समक्ष रखा। इस पर भी वह सहानुभूति से विचार करेंगे ऐसा प्रकट हुआ।

हम विजिटिंग कमेटी के सदस्यों के आभारी हैं जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय एवं विद्यालय की गतिविधियों का गहराई से अध्ययन किया तथा इन कमजोरियों एवं क्षमताओं का मूल्यांकन किया। उन्होंने हरिद्वार की शैक्षणिक आवश्यकताओं का भी जायजा लिया और आशा की जाती है कि उनकी सिफारिश गुरुकुल के विस्तार में बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

१९ मार्च ८४ को गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय में आचार्य गोवर्धन शास्त्री स्मृति मन्त्रोच्चारण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस अवसर पर गोवर्धन ज्योति का बिमोचन करते हुए महात्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य भिक्षु जी ने कहा कि आचार्यों का परम कर्त्तव्य है कि वे बालक में गुणों की समृद्धि करें तथा अवगुणों को दूर करें, यही आचार्य गोर्वधन जी के प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी। ज्ञातव्य है कि यह प्रतियोगिता प्रतिवर्ष संघड विद्या सभा ट्रस्ट जयपुर की ओर से आयोजित की जाती है। इस प्रतियोगिता में प्रथम स्थान गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर तथा द्वितीय स्थान कन्या गुरुकुल कनखल ने प्राप्त किया।

इन दिनों आर्यसमाज गुरुकुल कांगड़ी ने भी अंगड़ाई ली है। संघड़ विद्या सभा ट्रस्ट की आर्थिक सहायता से आर्यसमाज गुरुकुल कांगड़ी ने स्वामी दयानन्द के ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे, तीसरे एवं छठे समुल्लास के सरलीकृत एवं लघुकृत संस्करण प्रकाशित किये। इसी प्रकार उन्होंने व्यवहारभानु के सरलीकृत संस्करण का प्रकाशन किया। इसमें राजा-प्रजा, पिता-पुत्र, तथा गुरु, शिष्य नागरिकों के परस्पर व्यवहार की मर्यादाओं का दिग्दर्शन किया है। इन तीनों पुस्तिकाओं का प्रकाशन इस आशा से किया गया है कि स्वामी जी के विचार हर घर तक पहुँचे। इसी ध्येय को लेकर स्वामी जी ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। आर्यसमाज गुरुकुल काँगड़ी का प्रयास प्रशंसनीय है और आशा है अब यह समाज नवचेतना की ओर अग्रसर होगा।

यह प्रसन्नता का विषय है कि पद्मश्री विनयचन्द्र मौद्गिल्य, प्राचार्य गन्धर्व महाविद्यालय नई दिल्ली जिनकी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल में ही हुई थी ने गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को संगीत शिक्षा की ओर प्रेरित करने हेतु अपनी अमूल्य सेवायें गुरुकुल को प्रदान की हैं, इस शृंखला में उन्होंने गत सप्ताह तीन दिन का गुरुकुल में प्रवास किया तथा गुरुकुल के चुने हुये ब्रह्मचारियों को सस्वर वेदमन्त्र एवं अन्य गीत सिखाये।

यह भी प्रसन्नता का विषय है कि आचार्य सत्यकाम जी जिन्होंने ऋग्वेद का अंग्रेजी में अनुवाद किया है को गुरुकुल की कार्यपरिषद् ने मानद प्रोफेसर के रूप में कार्य करने हेतु आमन्त्रित किया है और आर्य विद्या सभा ने भी उन्हें गुरुकुल विद्यालय के आचार्य पद पर नियुक्त कर दिया है। उनके आगमन से ब्रह्मचारियों की शिक्षा दीक्षा के कार्यक्रम को यथेष्ट बल मिला है।

इस वर्ष गुरुकुल विश्वविद्यालय ने उन्हें विद्यामार्तण्ड की मानद उपाधि से विभूषित किया है और संघड़ विद्या सभा जयपुर ने उन्हें आचार्य गोवर्धन शास्त्री पुरस्कार १९८४ से अलंकृत किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीय सेवा योजना वृत्तांत

(द्वितीय शिविर, १९८३-८४)

—डॉ० बी० डी० जोशी,
विभागाध्यक्ष, जन्तु विज्ञान
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

शिविर स्थल— पुण्य भूमि कांगड़ी ग्राम, जि० बिजनौर।
शिविर काल— दिनांक २२ दिसम्बर ८३ से ३१ दिसम्बर ८३ तक।

विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी रा० से० यो० का विशेष वार्षिक शिविर पुण्य भूमि, कांगड़ी ग्राम में लगाना निश्चित हुआ था। वस्तुतः मातृ ग्राम कांगड़ी अब गुरुकुल विश्वविद्यालय की रा० से० यो० ईकाई द्वारा वार्षिक एवं सामान्य कार्य कलापों के लिए एक अंगीकृत ग्राम है। इस कैम्प में भाग लेने वाले सदस्यों की संख्या निम्नवत् थी—

(१)	विज्ञान महाविद्यालक छात्र	सं०	४३
(२)	वेद तथा कला महावि०	,,	०४
(३)	स्थानीय युवक	,,	०६
(४)	अध्यापक गु० कां० विश्वविद्यालय		०१
		योग	५४

दिनांक २१-१२-८३ को डॉ० बी० डी० जोशी के नेतृत्व में रा० से० यो० के छात्रों का दल पुण्य भूमि कांगड़ी ग्राम पहुँचा इसी दिन सायंकाल प्रोग्राम को ओर्डीनेटर श्री वीरेन्द्र अरोड़ा जी भी व्यवस्था देखने हेतु वहां आए। २१ दिसम्बर ८३ को कैम्प स्थापित हुआ। २२-१२-८३ को छात्रों ने नियत कार्य-क्रमानुसार प्रातःकाल से ही अपना कार्यक्रम आरम्भ कर दिया। छात्रों ने गंगा की धारा के ऊपर नदी के पत्थरों का अस्थायी मार्ग निर्माण किया और सायंकाल को छात्र जंगल में लकड़ी बिनने के लिये गये पर वहां पर पाया कि जंगल मुख्यतः खैर का है। अतः तब यह निश्चय किया गया कि लकड़ी लकड़हारों से ही खरीदी जाएगी। दिन भर छात्रों ने शिविर स्थल की सफाई अभियान सा चला दिया। सायंकाल को विश्वविद्यालय के कुलपति श्री बी० के० हूजा, प्रो० एल० आर० शाह एवं श्री वीरेन्द्र अरोड़ा जी पधारे। श्री हूजा जी के सभापतित्व में ही एक छोटी सी गोष्ठी का आयोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत दिनों पूण्य भूमि कांगड़ी ग्राम में आयोजित राष्ट्रीय सेवा योजना शिविर में लोकसभा अध्यक्ष श्री बलराम जाखड़ का आगमन हुआ-

बलराम जाखड़ कुलपति श्री हूजा जी से पुण्य भूमि कांगडी ग्राम विकास के विषय में जानकारी प्राप्त कर रहे हैं, साथ में डॉ० विजयशंकर, (अध्यक्ष, वनस्पति विज्ञान विभाग एव निदेशक, कांगड़ी ग्राम विकास योजना) तथा डॉ० बी० डी० जोशी (अध्यक्ष, जन्तु विज्ञान विभाग)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

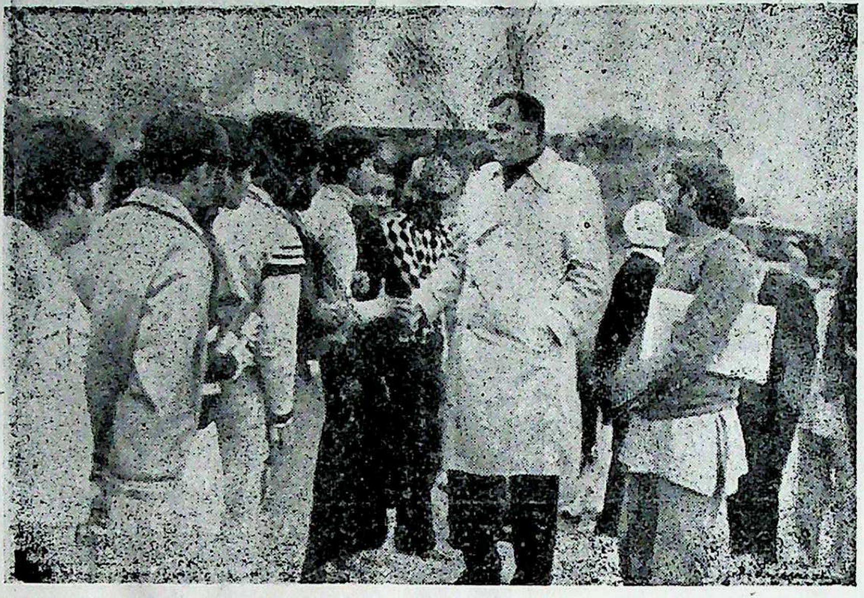

बलराम जाखड़ छात्रों से व्यक्तिगत परिचय करते हुए साथ में
डॉ॰ बी॰ डी॰ जोशी (प्रोग्राम ऑफिसर-राष्ट्रीय सेवा योजना)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया । श्री वीरेन्द्र अरोड़ा ने प्रो० एल० आर० शाह भू० पू० निदेशक रा० से० यो०, भारत सरकार का छात्रों को परिचय दिया । गोष्ठी को प्रो० शाह एवं श्री हूजा जी ने भी सम्बोधित करते हुए छात्रों को कक्षाओं से बाहर की दुनियां विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों में आकर कार्य करने की प्रेरणा दी । अन्त में डॉ० बी० डी० जोशी ने अतिथियों का धन्यवाद किया ।

२३-१२-८३ को शिविर का औपचारिक उद्घाटन समारोह सम्पन्न हुआ । प्रो० शाह मुख्य अतिथि ने समारोह का शुभारम्भ वैदिक हवन द्वारा किया । समारोह को प्रो० वीरेन्द्र अरोड़ा, डॉ० जबरसिंह सेंगर कुलसचिव, नजीबाबाद के बी० डी० ओ० श्री राव, डॉ० विजयशंकर अध्यक्ष वनस्पति विज्ञान विभाग, छात्र प्रतिनिधि श्री मनोज कुमार, डॉ० बी० ड़ी० जोशी, कुलपति श्री हूजा जी, आयुर्वेद महावि० के प्राचार्य डॉ० सुरेशचन्द्र शास्त्री एवं मान्य मुख्य अतिथि प्रो० शाह द्वारा सम्बोधित किया गया । प्रो० वीरेन्द्र अरोड़ा ने गुरुकुल में रा० से० यो० को स्थापित कराने में कुलपति जी एवं प्रो० शाह द्वारा की गयी प्रेरणाओं का उल्लेख किया । डॉ० बी० डी० जोशी ने शिविर के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला । डॉ० शास्त्री ने छात्रों को शिविर के अलावा भी कार्य करते रहने की प्रेरणा दी । प्रो० शाह ने छात्रों को ग्राम्य पर्यावरण, वन संरक्षण एवं समाज सेवा के प्रति विशेष रूप से जागरूक रहने के लिए कहा । कुलपति जी ने मान्य मुख्य अतिथि को धन्यवाद दिया । समारोह के समस्त कार्यों का संचालन प्रो० बी० डी० जोशी द्वारा ही किया गया ।

समारोह में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्राध्यापकगण, छात्रों, कांगड़ी ग्रामवासियों एवं जिला बिजनौर के अनेक अधिकारियों ने सक्रिय रूप से भाग लिया । समारोह का अन्त वैदिक शान्ति पाठ के मन्त्रों द्वारा हुआ । अन्त में सभी आमन्त्रित एवं सम्मिलित जनता को जलपान कराया गया । दि० २३-१२-८३ को माननीय कुलपति श्री हूजा जी ने रात्रि में शिविर स्थल में ही रहने का प्रोग्राम बनाया । रात को कुलपति जी ने छात्रों के साथ ही मिलकर भोजन किया और तब रात्रि को छात्रों एवं ग्रामवासियों द्वारा मिल-जुलकर मनोरंजक कार्यक्रम प्रस्तुत किये गये ।

दि० २४-१२-८३ को प्रात: दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होने के बाद श्री कुलपति जी के निर्देशन में छात्रों ने ग्राम कांगड़ी में सेवा योजना का कार्य प्रारम्भ किया । गांव के कुएं (जो बन कर पिछले दो सालों से अपने चारों ओर मिट्टी भर जाने और चबूतरा बनने की प्रतीक्षा में आकाश ताक रहा था) के चारों ओर भरान का कार्य शुरू किया । कुलपति जी ने स्वयं पत्थर उठाकर खाली जगह भर कर कार्य का शुभारम्भ किया । छात्रों ने मिट्टी खोदकर बुग्गियों में मिट्टी ढो-ढो कर कुएं के चारो ओर गड्ढे को भरना आरम्भ किया । पूर्वाह्न में ही विश्वविद्यालय से डॉ० जबरसिंह सैंगर, प्रो० वीरेन्द्र अरोड़ा, श्री देशराज जी (स० मुख्याधिष्ठाता) भी कार्य स्थल आ पहुंचे । ग्राम विकास अधिकारी श्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शराफत अली ने ग्रामवासियों का वांछित सहयोग लेने की पूर्ण सहायता की। मध्याह्न में भोजन के समय जिला बिजनौर के विकास अधिकारी एवं बी० डी० ओ० श्री राव भी आए। उनका भी भोजन द्वारा स्वागत किया गया। कैम्प में दिये जा रहे भोजन व्यवस्था आदि से सभी बड़े प्रभावित रहे। सायं को प्रो० वीरेन्द्र अरोडा शिविर में ही रात भर रुकने का प्रोग्राम बना चुके थे कि रात ८ बजे उनके घर से सन्देश आया कि उनकी पूज्य सास स्वर्ग–सिधार गयी हैं। अतः उन्हें तुरन्त वापस आना पड़ा। सायंकाल को कुलपति जी ने छात्रों के साथ बैठकर एक विचारगोष्ठी का आयोजन करवाया। छात्रों से अनेक विषयों पर सीधा विचार विमर्श किया गया और कुलपति जी ने स्व धर्म क्या है ? हिन्दू धर्म क्या है ? छात्रों के क्या-क्या कर्त्तव्य हैं, जैसे गम्भीर विषयों पर छात्रों को बड़े रोचक ढंग से और सरल भाषा में उद्बोधित किया। रात्रि भोजन के बाद ही वर्षा प्रारम्भ हो गई। मौसम अत्यन्त शीत और कठिन हो गया।

२५-१२-८३ को प्रातःकाल से ही वर्षा होती रही फिर भी छात्रों ने प्रातःकालीन व्यायाम आदि किया और फिर कुलपति जी के साथ बैठकर विचार गोष्ठी की। मध्याह्न में वर्षा में ही कुलपति जी गुरुकुल को प्रस्थान कर गये। अपराह्न में कुछ छात्रों ने ग्राम कांगड़ी में जाकर सामाजिक सर्वेक्षण का कार्य किया। श्री कुलपति जी ने उसी दिन विश्वविद्यालय के ही अन्य साथी प्रवक्ता श्री कौशल कुमार (रसायन शास्त्र) को भी शिविर स्थल आने की प्रेरणा दी और श्री कौशल जी वहां २५ एवं २६ दिसम्बर को रहे।

२६-१२-८३ का यह दिन बहुत महत्त्वपूर्ण था। दोपहर तक छात्रों ने गुरुकुल कांगड़ी में नियमित कार्य किया। मार्ग ठीक किये। गलियों में झाड़ू लगाया और कुएं पर भी कार्य किया। अपराह्न में ३-३० पर श्री बलराम जी जाखड़, अध्यक्ष लोकसभा, शिविर स्थल में आए। उनके साथ हरिद्वार एवं बिजनौर क्षेत्रों के अनेक जिला अधिकारी भी शिविर स्थल तक आए। श्री जाखड़ शिविर स्थल के चुनाव एवं वहां की सुन्दर व्यवस्था से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने छात्रों को विशेषतः शहरी छात्रों को ग्राम्याचलों में जाकर देश की समस्याओं को समझाने और सहयोग देने के लिये प्रेरणा दी। श्री जाखड़ की सहज मृदुलता से छात्र भी बहुत प्रभावित हुए। श्री जाखड़ ने प्रत्येक छात्रों का व्यक्तिगत परिचय लिया। श्री जाखड़ का पहले से ही ग्राम कांगड़ी में आने का कोई पूर्व निर्धारित कार्यक्रम नहीं था। हमारे कुलपति जी की ही उनको यह अत्यन्त शुभ प्रेरणा थी कि वह भी ऋषि श्रद्धानन्द जी की तपस्थली तक आए।

२७-१२-८३ को छात्रों ने तसलों और बुगियों मे रेत और मिट्टी ढोई और कुएं के चारों ओर भराई के कार्य को जारी रखा। सायंकाल को छात्रों ने ग्राम में घर-घर जाकर स्वास्थ्य एवं सामाजिक सर्वेक्षण का कार्यक्रम किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८-१२-८३ शिविर एवं कांगड़ी ग्राम के इतिहास का एक विशेष दिन था। उ० प्र० सरकार के कृषि उत्पादन आयुक्त (ए० पी० सी०) श्री वैंकट नारायनन महोदय प्रातः ९-३० बजे शिविर स्थल में पधारे। कुलपति जी ने स्वयं घूम-घूम कर उन्हें शिविर स्थल का पूरा परिचय एवं इतिहास बताया। श्री नारायनन भी स्थल के चुनाव से बहुत प्रभावित हुए। उनके साथ बिजनौर जनपद के जिला अधिकारी, एस.डी.एम., बी.डीओ., विकास अधिकारी आदि अनेक प्रमुख अधिकारीगण भी पहुँचे थे। इसी दिन एक छोटी सी सभा का आयोजन किया गया। डॉ० जोशी ने रा० से० यो० द्वारा किये गये कार्यों पर प्रकाश डाला। इस दिन की अवस्था में डा० विजय शंकर जी एवं डॉ० कश्मीरसिंह भिण्डर का बड़ा योगदान रहा। डॉ० श्यामनारायणसिंह जी ने भी फोटोग्राफी आदि में अपना विशिष्ट योगदान दिया। सभी अतिथियों का सूक्ष्म जलपान से स्वागत किया गया। तत्पश्चात् छात्रों सहित सभी लोग ग्राम कांगड़ी के कार्य स्थलों तक गए। वहाँ ए. पी. सी. महोदय ने पूरे गाँव का भ्रमण किया और गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय एवं रा०से०यो० के सहयोग से हो रहे कार्यों की सराहना की। गांव के प्राइमरी स्कूल के प्रांगण में एक सभा की गयी और डा० विजय शंकर जी ने सभा को संबोधित किया। इस कार्यक्रम के उपरान्त छात्रों ने गांव के अनेक कुओं के चारों ओर सफाई की। हौदियों को भी साफ किया और प्रयोग के योग्य बनाया। गांव में नालियों का भी निर्माण किया गया।

२९-१२-८३ को छात्रों का अधिकांश अवकाश रहा तथा छात्रों ने गांव में जाकर सामाजिक सर्वेक्षण कार्य किया।

३०-१२-८३ को छात्रों ने कुएं के चारों ओर की सफाई तथा अन्य कार्यों को अन्तिम रूप दिया और पूर्ण रूप से कुएं को भी प्रयोग योग्य बना दिया अब उसके ऊपर छत लगना और चबूतरे का पक्का करने का कार्य शेष रह गया है। ३०-१२-८३ को छात्रों ने लगभग २० बुग्गियां पत्थर नदी से ढोये और कुएं के चारों ओर भरे। उक्त तिथि को ही विज्ञान महाविद्यालय के दो प्राध्यापक प्रो० ग्रोवर एवं प्रो० गुलाटी जी भी दिन भर छात्रों के साथ रहें।

३१-१२-८३ को शिविर का अन्तिम दिन था। प्रातः १० बजे से ग्राम कांगडी की पाठशाला के प्रांगण में समापन समारोह प्रारम्भ हुआ। मुख्य अतिथि श्री दर्शनसिंह जी (आई० ए० एस०) बिजनौर के जिलाधीश महोदय थे। सभा का संचालन डा० विजय शंकर जी ने किया। समारोह का शुभारम्भ वैदिक हवन द्वारा हुआ। ततपश्चात् माल्यार्पण द्वारा जिलाधीश महोदय का स्वागत किया। डा० जोशी ने शिविर में किए गए कार्यों का उल्लेख किया। नजीबाबाद के परगनाधिकारी श्री त्यागी, ग्राम सेवक प्रशिक्षण के प्राचार्य श्री श्रीवास्तव जीं, कुलपति जी, डा० काश्मीरसिंह जी, डा० सेंगर (कुलसचिव जी) ने सभा को सम्बोधित किया। जिलाधिकारी श्री सिंह ने कुलपति जी के प्रति अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि देश को आज ऐसे ही कर्मठ और अत्यन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रियाशील बुजुर्गों को आवश्यकता है जिनके नेतृत्व में हम लोग बढ़े। उन्होंने छात्रों से कहा कि वह अपने बुजुर्गों एवं गुरुजनों का सम्मान करें। ग्रामवासियों को उन्होंने सजग होकर सहयोग देने को कहा। उन्होंने वायदा किया है कि वह कुलपति जी के आशीर्वाद को लेकर कांगड़ी ग्राम की हर योजना को अपनी पूरी–२ सहायता देगें। अन्त में डा० काश्मीरसिंह जी ने सभी के प्रति धन्यवाद किया। शान्ति पाठ और जलपान के बाद समारोह समाप्त हुआ। दोपहर का भोजन होते–२ दो बज चुके थे। तब छात्रों ने ट्रेक्टर ट्राली पर वापसी हेतु अपना सामान लादा और मातृ-भूमि कांगड़ी की पुण्य स्थली को नमन कर शिविर समाप्त कर लौट आये।

उपसंहार–

इस सत्र का यह शिविर अत्यन्त सफल रहा। शिविरार्थी छात्रों को राष्ट्र के अनेक उच्चतम एवं सफल प्रशासनिक एवं राजनैतिक व्यक्तियों को निकट से देखने सुनने का अवसर मिला। ग्राम की की समस्याओं को छात्रों ने करीब से समझा और अपने सहयोग से कुएं, चबूतरे, नालियों को अन्तिम रूप दिया। सफाई की गयी। सर्वेक्षण से ग्राम्य समस्याओं और ग्राम कांगड़ी की बढ़ती सम्पन्नता का सबको परिचय दिया। इस सबके प्रेरणा स्रोत निश्चय ही हमारे कुलपति श्री हूजा जी हैं।

आभार–

शिविर में जाना तो प्रोग्राम अधिकारी का कर्त्तव्य ही होता है पर शिविर को सफलता का श्रेय मेरा अपना नहीं अपितु मेरे शिविरार्थियों के उत्साह पूर्ण सहयोग एवं गुरुकुल कांगड़ी विश्व—विद्यालय के प्रशासनिक अधिकारियों एवं अनेक सहयोगी प्राध्यापकों को जाता है। मुख्यतः मैं, कुलपति जी को, कुलसचिव जी, वित्ताधिकारी श्री बी० एम० थापर, विज्ञान म० वि० के प्राचार्य श्री सुरेशचन्द्र त्यागी उप–कुलसचिव श्री श्यामनारायणसिंह जी, क्रीड़ाध्यक्ष श्री ओ० पी० मिश्र, वनस्पति विज्ञान के विभागाध्यक्ष डा० विजय शंकर जी, कैप्टन की देशराज जी, डा० काश्मीरसिंह जो, प्रो० ग्रोवर जी, प्रो० गुलाटी जी, प्रो० कौशल कुमार जी एवं श्री करतारसिंह जी को अपने हार्दिक आभार प्रेषित करता हूं। इन सबके अमूल्य सहयोग के बिना मैं सफल न होता। अन्त में अपने प्रोग्राम को ओर्डीनेटर प्रो० वीरेन्द्र अरोडा के प्रति स्नेह आभार व्यक्त करता हूं जो हमेशा की तरह बराबर मेरा साथ देते रहे। हमें और हमारे सभी छात्रों एवं रा० से० यो० के शिविर से संबन्धित सभी अधिकारियों को दुःख है कि उन्हें परिवार के संबन्धी की आकस्मिक निधन का शोक सहन करना पड़ा और फल स्वरूप वह शिविर के अंतिम दिनों में साथ न रह सके। रा० से० यो० के सदस्यों की हार्दिक संवेदना उनके साथ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

ओ३म्—शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!! □

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतांक से आगे

ईश्वरीय ज्ञान की कसौटी

डॉ० रामेश्वर दयाल गुप्त

किसी ज्ञान के संचय को ईश्वरीय कहा जा सके उसके लिए उसमें निम्न विशेषताएँ होनी चाहियें—

१– सृष्टि के प्रारम्भ से ही वह ज्ञान होना चाहिये क्योंकि उसकी आवश्यकता हर समय है। मनुष्य जाति उसी से प्रेरणा लेती है।

२– उसमें इतिहास न हों अर्थात किसी काल विशेष के सत्य को ही स्थान नहीं वरन् त्रिकाल व्यापी सत्य का स्थान हो।

३– किसी देश विशेष से लगाव या उसका वर्णन न हो।

४– उनकी भाषा प्राकृत हो बनावटी नहीं।

५– उसमें सच्चा साहित्य हो तथा पूर्ण ज्ञान हो और वह मनुष्य जाति का उन्नायक हो।

६– उसमें पूर्वापर विरोध न हो।

७– उसमें सृष्टिगुण के विरुद्ध असंगतियाँ न हों।

८– उसमें प्रक्षेप न हों।

९– उसमें पुनरुक्ति न हो।

१०– उसकी अन्त: साक्षी हो।

११– आप्त जनों ने उसे ऐसा माना हो।

चूंकि आदि मानव अमैथुनी सृष्टि से बना था उसमें संस्कार (अन्य ज्ञान) नहीं था, उसके पथ प्रदर्शन के लिए वह तभी से होना चाहिए जब से आदि मानव पृथ्वी तल पर अवतरित हुआ हो।

सृष्टि के साथ नियम शास्त्र की आवश्यकता–

जिस प्रकार भूगोल और भूमि का चित्र भूमि के प्रत्येक भाग को समझने के लिए आवश्यक है उसी प्रकार सृष्टि रूपी चित्र के साथ वेद रूपी सृष्टि नियम शास्त्र हैं। जगत् निवासियों के जीवनों को ऊंचा बनाने वाले नियम भी हों जिन से न केवल जगत् की जानकारी हो, अपितु जगत् को अच्छा और शान्तिप्रद बनाने की मर्यादाओं का भी ज्ञान हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मति

पुस्तक का नाम :–गोवर्धन ज्योति चतुर्थ रश्मि (दयानन्द का राजनैतिक दर्शन)
प्रस्तुत कर्ता :–श्री बलभद्र कुमार हूजा
प्रकाशक का नाम :–आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार, प्रधान आर्यसमाज गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार। मूल्य–श्रद्धापूर्वक स्वाध्याय

इस पुस्तिका में महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में राज–धर्म के बारे में महर्षि के उपदेश अथवा व्याख्यान को संक्षेप में संकलित किया गया है जिसका श्रेय गुरुकुल काँगड़ी के वर्तमान कुलपति और जयपुर की संस्था संघड़ विद्या सभा के अध्यक्ष श्री बलभद्र कुमार हूजा को है। जैसा कि सब जानते हैं कि राजस्थान की रंगीली वीरभूमि महर्षि दयानन्द के अन्तिम संघर्षमय जीवन की रंगभूमि रही थी। वो एक देशी राज्य से दूसरे देशी राज्य, एक घराने से दूसरे घराने, एक नगर से दूसरे नगर आते जाते रहे और अपने प्रवचनों तथा व्याख्यानों से उन्होंने सैंकड़ों–हजारों लोगों को अनुगृहीत किया। स्वाभाविक ही था कि राजा-महाराजाओं के सम्पर्क में आने के कारण और उस समय समन्त राजाओं के दरबार में, राजमहल में जो वातावरण उन्होंने देखा उसके बारे में वे अपनी अनुभूतियों को किसी न किसी प्रकार से अवश्य ही प्रकाश में लाते।

दयानन्द के विचारों के स्रोत तो हमेशा ही रहे हैं इसलिए राज–धर्म की शिक्षा–दीक्षा देने के बारे में भी महर्षि दयानन्द ने वेदों तथा अन्य प्राचीन ग्रन्थों की ही शरण ली और वहीं से ही प्रेरणा पाकर उन्होंने अपने उस समय के राजाओं के सामने उपदेश प्रस्तुत किये। इस प्रकार यदि हम देखें तो सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में संकलित वेद–वाणी तथा मनुस्मृति या अन्य ग्रन्थों की रचनाओं के द्वारा हमें प्राचीन युग के शासन की शैलियों, पद्धतियों और विचारधाराओं का परिचय तो मिलता ही है लेकिन साथ ही हमें ये अवसर भी मिलता है कि हम यह जानकारी प्राप्त कर सकें कि अपने जीवन काल में महर्षि दयानन्द ने समकालीन समाज और शासन में क्या कमजोरियां अथवा विसंगतियां देखीं जिन्हें सुधारने या दूर करने के लिए उन्होंने राजा–महाराजाओं को प्राचीन आर्य युग की परम्पराओं और शिक्षाओं की याद दिलाई।

दयानन्द ने राज–धर्म की व्याख्या करते हुए इस बात पर काफी जोर दिया कि राजा को उस समय की सभा अथवा प्रजा के आधीन रहना चाहिए और सभा और प्रजा की मनोतियों या मान्यताओं की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर पूरा ध्यान देना चाहिये। राजा अथवा शासन न्याय का पालन करे, प्रजा का रक्षक हो। धर्म और काम की सिद्धि को बढ़ाये, दुखी और आपत् ग्रस्त पुरुषों की सहायता करे इत्यादि। इन बातों की ओर जब महर्षि दयानन्द ने ध्यान दिलाया तो ऐसा लगता है कि शायद उन्हें अपने समकालीन समाज और शासन प्रणाली में अपने राज अथवा अच्छे शासन के उपरोक्त गुणों की कमियां अखरती थीं। शायद यही उनकी मान्यता भी थी इसलिए उन्होंने प्राचीन वेद ग्रन्थों इत्यादि से ये शिक्षा और प्रेरणा प्राप्त की और राजा या शासक पक्ष को समझाने को कोशिश की। राजा के मन्त्री कैसे हों, इसके बारे में भी महर्षि ने काफी विस्तार से लिखा और मनु-स्मृति के कुछ अंशों का विश्लेषण किया।

यदि हम महर्षि दयानन्द को केवल एक माध्यम के रूप में लें जिनके द्वारा प्राचीन आर्य काल के शासन के कुछ आधारभूत सिद्धान्तों की गत शताब्दी के अन्तिम अर्द्ध में पुनरावृत्ति की गयी थी तो शायद हमें इस दिशा में उनको विशेष देन का अच्छा-खासा आभास मिल सकता है। दूसरे शब्दों में यद्यपि दयानन्द सरस्वती न तो राजनीतिज्ञ थे, न राजनीति के शास्त्री; लेकिन उनके मन में नवीन भारत और विशेष रूप से देशी राज्यों के विकास और भविष्य तथा लोक कल्याण पर आधारित शासन पद्धति की जो कुछ कल्पनाएं थीं वो इस समुल्लास में उभरकर सामने आती हैं। अनेक विषयों पर उनके उपदेश और शिक्षाप्रद मत आज भी अनमोल हैं और हमारे आज के शासकों का दिशा बोध करा सकते हैं। परोपकार, प्रजा की सेवा और रक्षा तथा प्रजा के प्रति उत्तरदायी होने के राजकीय कर्त्तव्यों की याद दिलाने के अतिरिक्त महर्षि दयानन्द को इस बात का भी श्रेय मिलता है कि उन्होंने स्वदेश में "स्वराज्य" और "सुराज्य" दोनों ही के सिद्धान्तों का प्रतिपादन अथवा पुनः स्थापन सबसे पहले किया।

आशा है यह प्रयास जनसाधारण को स्वामी दयानन्द के विचारों से अवगत करने में महत्त्व-पूर्ण योगदान देगा। कार्य महत्त्वपूर्ण एवं सराहनीय है इस प्रकार की छोटी-छोटी पुस्तिकाओं के माध्यम से स्वामी जी के विचारों को आज के समाज में प्रचार करने की महती आवश्यकता है।

—भूपेन्द्र हूजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक के सम्बन्ध में

पुस्तक का नाम—वर्ड पर्सपेक्टिव ऑन स्वामी दयानन्द सरस्वती

लेखक का नाम—डॉ॰ गंगा राम गर्ग

सप्रेम नमस्ते ।

प्रियवर, डॉ॰ गंगाराम जी !

आजकल मैं आपकी लिखी पुस्तक Wold Perspectives on Swami Dayananda Saraswati पढ़ रहा हूं। आपने जो अगाध परिश्रम किया है और न जाने कहां-कहां से संग्रह किया है, वह आर्य समाज की ही नहीं, ऋषि दयानन्द के समय के इतिहास की मूर्त झांकी है। आर्य समाजी अपने व्याख्यानों में जो सुने-सुनाये और रटे-रटाये उद्धरण दिया करते हैं, उन सबकी ही नहीं उससे अधिक की प्रामाणिकता आपके इस ग्रन्थ में मिल जाती है। ऐसा ग्रन्थ तैयार करने में आप सचमुच धन्यवाद के पात्र हैं।

आपका

सत्यव्रत

W–७७ A, ग्रेटर कैलाश (१)

नई दिल्ली—४८

२०–२–१९८४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-समीक्षा

पुस्तक का नाम—"वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त"
लेखक का नाम—आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति
प्रकाशक का नाम—मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ
मूल्य —तीन खण्डों में पूरा सेट २४० रु०

वेद भारतीय धर्म एवं संस्कृति के आधारभूत ग्रन्थ हैं। सम्पूर्ण चिन्तन विशेष रुप से 'भारतीय चिन्तन' का आधार वेद ही रहे हैं। ज्ञान के आगार वेदों में मानव के लिए कल्याण प्रदान करने वाले आध्यात्मिक एवं भौतिक तत्त्वों का समावेश भी हुआ है। वस्तुतः वेद मात्र आध्यात्मिक ही संदेश नहीं देते अपितु सामाजिक विज्ञान के भौतिक तत्त्वों की ओर भी संकेत करते हैं। यद्यपि वेदों का विविध दृष्टि कोणों से भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों द्वारा अध्ययन एवं विश्लेषण हुआ है तथा हो रहा है तथापि आज के इस वैज्ञानिक युग में वेदों में सामाजिक विज्ञानों की दृष्टि से भी वेदों के अध्ययन की महती आवश्यकता है। राजनीति इस लोकतांत्रिक युग में मानव जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गयी है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति वेदों के उद्भट विद्वान् एवं मर्मज्ञ आचार्य प्रियव्रत जी ने 'वेदों में वर्णित राजनीतिक सिद्धान्त' नामक इस मौलिक ग्रन्थ का सृजन करके वैदिक अध्ययन की दिशा में एक नयी कड़ी को जोड़ा है। आचार्य जी ने इस ग्रन्थ में वेदों में वर्णित राजनीतिक सिद्धान्तों को मार्मिक एवं मौलिक रूप में पाठकों के सामने रखा है। प्रयास स्तुत्य एवं अनुकरणीय है।

इस ग्रन्थ को तीन खण्डों में विभक्त किया गया है—प्रथम खण्ड–संविधान काण्ड, द्वितीय–अभ्युदय काण्ड, तृतीय–प्रतिरक्षा काण्ड। प्रथम खण्ड ७४४ पृष्ठों में लिखा गया है जिसमें २४ अध्याय हैं। तथा राज्य संस्था का विकास, मातृभूमि की भावना राजा का चुनाव, उसका राज्यकाल, राष्ट्रीयता, स्त्रियों की राजनीतिक स्थिति मन्त्रिमण्डल, न्याय–विभाग, राज्याभिषेक आदि महत्त्वपूर्ण विषयों पर वेदों के परिप्रेक्ष्य में चिन्तन किया है। संक्षेप में यह खण्ड मांडलिक राज्यों के निर्माण से लेकर चक्रवर्ती राज्य के निर्माण के विषय में वेद के विचारों का प्रतिपादन करता है। द्वितीय खण्ड लगभग ५०० पृष्ठों में विस्तार को प्राप्त हुआ है। इस खण्ड को २६ अध्यायों में विभक्त करके वेद विषयक कृषि, नहरें, गोपालन, पशुपालन, सड़कें, पुल, व्यापार, उद्योग-धन्धे, शिल्पकला, स्वास्थ्य, शिक्षा, विवाह आदि महत्त्वपूर्ण विषयों पर विचार किया है। संक्षेप में इस खण्ड में प्रजा किस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने जीवन को सुखी एवं समृद्धिशाली बनाये, इस विषय में वेद के विचारों को प्रतिपादित किया गया है। तृतीय खण्ड २५६ पृष्ठों में लिखा गया है। इस खण्ड में राज्य के महत्त्वपूर्ण अंग रक्षा विभाग–सेनाओं के संगठन, संचालन, शस्त्र-अस्त्र एवं युद्धनीति आदि महत्त्वपूर्ण विषयों पर २४ अध्यायों में वेद प्रतिपादित विचारों को प्रस्तुत किया गया है।

आचार्य जी का यह प्रयास एक दो वर्ष का नहीं अपितु लगभग ४८ वर्षों के कठिन परिश्रम का फल है। वेदों में स्थान-स्थान पर सूत्र रूप में वर्णित राजनीति–विज्ञान के तत्त्वों का विश्लेषण करके इस मौलिक ग्रन्थ की रचना की गई है। यह ग्रन्थ वेदों के एवं राजनानि के प्रत्येक अध्येता के लिये संग्रहणीय है। कवर पृष्ठ, जिल्द तथा कागज भी अत्यन्त आकर्षक बन पड़ा है।

–राकेश शास्त्री

□

---

७५ वर्ष पूर्व गुरुकुल वृत्तांत–

स्वामी श्रद्धानन्द जी की लेखनी से

प्रस्तुतकर्ता—जगदीश प्रसाद विद्यालङ्कार

नये ब्रहमचारियों के चुनाव के लिये निम्नलिखित नियम स्थिर कर दिये गये हैं जिन महाशयों के पास गुरुकुल कार्यालय से पत्र न भी पहुँचे और वे पहिले किसी बालक के प्रवेशार्थ प्रार्थना पत्र भेज चुके हों, तो उनको इन्हीं नियमों के अनुकूल कार्यवाही करनी चाहिये।

१. सब प्रार्थियों को अपने बालकों को साथ लेकर गुरुकुल भूमि में २४ से २७ दिसम्बर तक पहुँच जाना चाहिये। २४ दिसम्बर से प्रथम यहां उनके आराम का कोई प्रबन्ध न होगा और २७ दिसम्बर के पश्चात् आये हुये बालक का चुनाव में सम्मिलित होने का कोई अधिकार ही न होगा।

२. जिन बालकों को किसी शारीरिक तथा मानसिक त्रुटि के कारण अस्वीकार किया जावेगा उनको फिर कोई आशा न रखनी चाहिये, किन्तु जो बालक केवल मुकाबिले में अस्वीकार किये जायंगे उनके लिये ... के शाखा गुरुकुल में लिये जाने की आशा हो सकती है शाखा गुरुकुल मुलतान का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्वाचन मास जनवरी के अंतिम सप्ताह में या उसके लगभग होगा। ३. २८ दिसम्बर से बालकों की परीक्षा निर्वाचन उपसभा आरम्भ करेगी और ३० दिसम्बर तक निर्वाचन समाप्त हो जायेगा। ४. जो बालक प्रवेशार्थ चुने जायेंगे, यदि उनकी पढाई के लिये १५०० नहीं दिया गया, उनके संरक्षकों को ४० रू० पेशगी तथा एक मास का शुल्क ३१ दिसम्बर तक देकर लौटने की आज्ञा होगी ५. जो संरक्षक १५०० रु० देने को उद्यत हों उनको रूपया अपने साथ लाना चाहिये। ६. प्रत्येक संरक्षक को एक दरी, दो श्वेत चादरें तथा ओढने की रजाई अपने बालक के लिये साथ लानी चाहिये अन्य नये वस्त्र सब यहां से दिये जायेगें। वेदारम्भ के समय ओढने-बिछाने के सब वस्त्र भी नए दिये जायेंगे। ७. इस वर्ष सभा ने निश्चय कर दिया है कि ३० से अधिक एक छात्र पन्द्रह सौ रूपये एकदम दाखिल होने पर ही लिये जायेगें आशा है कि सर्व महाशय इन नियमों को ध्यान में रखकर आने का विचार करेंगें।

गुरुकुल का सातवां वार्षिकोत्सव:–फाल्गुन शुक्ला एकादशी अर्थात् २ मार्च सं० १९०९ ई० से आरम्भ होकर ७ मार्च अर्थात् पूर्णिमा तक रहेगा २, ३. ४. मार्च को साहित्य परिषद् का वार्षिकोत्सव होगा जिसके साथ ही सरस्वती सम्मेलन का उत्सव मनाया जावेगा। इस वर्ष दो निबन्ध संस्कृत में तथा एक निबन्ध आर्य भाषा में पढ़े जायेंगे निबन्ध कर्ताओं के नाम तथा विषयों की सूचना भी ज्ञात होने पर पहिले से ही मुद्रित की जायगी। ५-६ मार्च को व्याख्यानादि होंगे और ७ मार्च को वेदारम्भ संस्कार की विधि की जायेगी। गुरुकुल की कार्यकारिणी सभा (पंजाब आर्य प्रतिनिधि की अंतरंग सभा) ने यदि इस वर्ष भी किराये की रियायत लेनी आवश्यक समझी और ले ली तो सर्व साधारण को उस समय समाचार पत्रों द्वारा सूचित किया जायेगा।

साहित्य परिषद् का ऊपर कथन आ चुका है इसलिये यहां यह बतलाने की आवश्यकता है कि इस परिषद् को २५ ज्येष्ठ १९६५ के दिन स्थापन किया गया था। इस का उद्देश्य "ब्रह्मचारियों को विविध विषयों पर निबन्ध लिखना सिखाना उनकी ग्रन्थावलोकन में विशेष प्रवृत्ति कराना। उनकी समालोचना शक्ति को उत्तेजित करना और अन्य विद्वानों के लिखे हुए निबन्धों से ब्रह्मचारियों तथा अन्य सभ्यों को लाभ पहुँचाया जाये" इस परिषद् का साधारण अधिवेशन हर पन्दहवें दिन होता है। आरम्भ में एक निबन्ध पढ़ा जाता हैं। निबन्ध आर्य भाषा तथा संस्कृत दो में पढ़े जाते है। नबन्ध पढ़े जाने के पश्चात उस पर वाद-विवाद के अनन्तर निबन्ध लेखक अपना प्रत्युत्तर देता है। अन्त में सभापति के वक्तव्य के साथ सभा समाप्त होती है। अधिवेशन में प्रत्येक महाशय उपस्थित हो सकते हैं, परन्तु परिषद् से सभासद बनने के लिये दो रुपये चन्दा निश्चित हुआ है। अब तक सभा के ३२ सभासद हुये हैं जिन में गुरुकुल के एतद् योग्य ब्रह्मचारी गुरुकुल से कई अध्यापक तथा अधिष्ठाता और कई अन्य बाहर के विद्वान् भी सम्मिलित हैं। अब तक इस परिषद् के अधिवेशनों में कई निबन्ध पढ़े जा चुके हैं। जिनके विषय तथा [illegible] हैं।

(सद्धर्म प्रचारक ४ मार्ग शीर्ष सं० १९६५ ता० १८ नवम्बर १९०८)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल-समाचार

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के वार्षिकोत्सव का संक्षिप्त विवरण

यजुर्वेद पारायण यज्ञ

१० अप्रैल १९८४ से यजुर्वेद पारायण यज्ञ प्रारम्भ हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार रहे। यज्ञ के संचालन का कार्य डॉ० जयदेव वेदालंकार (दर्शन विभाग) ने किया तथा ब्र० पीताम्बर दत्त शर्मा, ब्र० सूर्यप्रकाश पाठक, ब्र० पुण्य प्रसाद और ब्र० गुरु प्रसाद ने वेदपाठ किया।

ध्वजारोहण

१३ अप्रैल १९८४ को वार्षिकोत्सव का मुख्य कार्यक्रम मान्य कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी (अध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब) के ध्वजारोहण से प्रारम्भ हुआ। इस अवसर पर मान्य कुलाधिपति ने सम्बोधित करते हुए कहा कि हमें अपनी संस्कृति और वैदिक परम्परा तथा गुरुकुल के आदर्शों की रक्षा करने का व्रत लेना चाहिए।

वेद सम्मेलन

१३ अप्रैल को मध्याह्न ३-३० बजे डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार (परिद्रष्टा-गुरुकुल काँगडी विश्वविद्यालय) जी की अध्यक्षता में वेदसम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन पूर्व कुलपति आचार्य प्रियव्रत 'वेदमार्तण्ड' ने किया। इसमें श्री वीरेन्द्र शास्त्री, डॉ० सत्यव्रत 'राजेश', पं० भगवतदत्त वेदालंकार, डॉ० रामनाथ वेदालंकार, सरदारी लाल वर्मा तथा ब्र० पीताम्बर आदि वक्ताओं ने अपने विद्वत्तापूर्ण भाषण दिए। सम्मेलन का संयोजन डॉ० जयदेव वेदालंकार ने किया और कहा कि वेद की उदात्त शिक्षाएं ही वर्तमान समय में मानव मात्र की रक्षा कर सकती हैं।

१३ अप्रैल की रात्रि के कार्यक्रम में प्रो० रत्नसिंह ने भारतीय संस्कृति पर सारगर्भित भाषण दिया तथा स्वामी ओमानन्द सरस्वती ने वेद के अध्ययन पर बल दिया। इसका संयोजन डा० सत्यव्रत 'राजेश' (वेद विभाग) ने किया।

दीक्षान्त-समारोह

१४ अप्रैल १९८४ को प्रातः १० बजे कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी की अध्यक्षता में दीक्षान्त समारोह सम्पन्न हुआ। मान्य कुलपति ने अपने स्वागत भाषण में विश्वविद्यालय की प्रगति से परिचय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कराया तथा नव स्नातकों के लिए आशी: वचन कहे। इसके मुख्य अतिथि स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी ने नव स्नातकों को सम्बोधित करते हुए अपने दीक्षान्त भाषण में कहा कि आपकी शिक्षा-दीक्षा आर्य जगत् के सर्वश्रेष्ठ शिक्षा संस्थान में हुई है। इसलिए आप दयानन्द के सपनों को पूरा करें, राष्ट्रवादी बनें तथा राष्ट्रीय संस्थानों में यशस्वी स्थान प्राप्त करें।

इसके अतिरिक्त स्वामी ओमानन्द सरस्वती, कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र, आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार, पं० सत्यकाम विद्यालंकार आदि ने नव स्नातकों को आशीर्वाद दिया। इसका सयोजन डा० जबर सिंह सेंगर (कुल सचिव) तथा सह संयोजन डा० श्याम नारायण सिंह (उप कुल सचिव) ने किया।

राष्ट्रीय–सम्मेलन

१४ अप्रैल मध्याह्न ३-३० बजे मान्य कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी की अध्यक्षता में राष्ट्रीय एकता सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन प्रो० रत्नसिंह ने किया इसमें डॉ० रामचन्द्र, हैदराबाद. डॉ० कृष्णदेव नेपाल, डॉ० सत्यव्रत 'राजेश' (वेद विभाग) तथा ब्र० पीताम्बर शर्मा आदि वक्ताओं ने अपने सारगर्भित भाषण किए।

अपने अध्यक्षीय भाषण में मान्य कुलाधिपति जी ने कहा कि राष्ट्रीय एकता इस समय देश की ज्वलन्त समस्या के रूप में हमारे सामने है। आपने पञ्जाब समस्या का विस्तृत विवरण देते हुए उसके समाधान में अपने अनेक सुझाव दिए और सरकार से मांग की कि पञ्जाब समस्या का तुरन्त समाधान किया जाए अन्यथा यह रोग सभी सीमा प्रान्तों में फैल जाएगा।

सम्मेलन के संयोजक डॉ० जयदेव वेदालंकार ने प्रस्ताव रखा जिसमें सरकार से मांग की गई कि "पञ्जाब में हो रही हिंसा को तुरन्त रोका जाए तथा धार्मिक स्थलों से कातिलों को गिरफ्तार किया जाए।"

अन्त में मान्य कुलपति जी ने अध्यक्ष का धन्यवाद करते हुए कहा कि—'हम आपके आदेश की प्रतीक्षा में रहेंगे कि हम शान्ति मेता लेकर आएं ताकि पञ्जाब में राष्ट्रीय चेतना को उजागर किया जा सके और पञ्जाब की शान्ति स्थापना में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपनी उचित भूमिका अदा कर सके।'

सांस्कृतिक–सम्मेलन

१४ अप्रैल रात्रि ७-३० बजे गुरुकुल विद्यालय विभाग के छात्रों ने सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया और अपने कार्यक्रम से सभी श्रोताओं को मन्त्र मुग्ध कर दिया। इसका संयोजन डॉ० दीनानाथ मुख्याध्यापक गुरुकुल विभाग ने किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यज्ञ की पूर्णाहुति

१५ अप्रैल प्रातः १० बजे यजुर्वेद पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार द्वारा सम्पन्न कराई गई तथा महात्मा आर्य भिक्षु और आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति ने आध्यात्मिक प्रवचन दिए।

आचार्य गोवर्धन शास्त्री पुरस्कार

हिन्दी जगत् के सुविख्यात लेखक, धर्मयुग तथा नवनीत के पूर्व यशस्वी सम्पादक पं० सत्यकाम विद्यालंकार को उनके वेद विषयक कार्य को देखते हुए संघड़ विद्या सभा ट्रस्ट, जयपुर की ओर से उक्त पुरस्कार द्वारा सम्मानित किया गया।

उक्त पुरस्कार आचार्य गोवर्धन जी की जन्मशती के शुभ अवसर पर १९८१ से प्रतिष्ठित किया गया। गत तीन वर्षों में क्रमशः आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार (उप-कुलपति, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय), डॉ० भवानी लाल भारतीय (अध्यक्ष, दयानन्द पीठ पञ्जाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़) तथा पं० विश्वनाथ विद्यालंकार, देहरादून को इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

८६ वर्षीय पं० सत्यकाम जी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठित स्नातक हैं तथा गत ४५ वर्षों से साहित्य सेवा में जुटे हैं। आपने सम्पादन के अतिरिक्त ऋग्वेद का अंग्रेजी में अनुवाद करके वेद का संदेश विदेशों में पहुँचाने का प्रशंसनीय कार्य किया है।

संघड विद्या सभा ट्रस्ट की स्थापना मान्य कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा के पूज्य पिताश्री स्व० श्री गोवर्धन शास्त्री जी ने १९३० में पञ्जाब में की। विभाजन के बाद यह ट्रस्ट जयपुर में कार्य करने लगा। अभी कुछ दिन पूर्व कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा ने अपने परिश्रम से अर्जित धन में से ५४ हजार रुपये ट्रस्ट को दान दिए। ट्रस्ट ने इस वर्ष ५४००/ रुपये गोवर्धन ज्योति की तृतीय चतुर्थ और पञ्चम रश्मि के प्रकाशन के लिए आर्यसमाज गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय को प्रदान किए।

विजिटिंग फैलोज़ का विश्वविद्यालय में आगमन

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की योजना के अन्तर्गत अन्य विश्वविद्यालयों से दर्शन, हिन्दी तथा मनोविज्ञान विभाग में विजिटिंग फैलो के रूप में विद्वानों का आगमन हुआ। इन्होंने विभिन्न विषयों पर अपने विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान दिये। जिससे विश्वविद्यालय के छात्रों तथा अध्यापकों को अत्यधिक लाभ हुआ। इन विद्वानों के नाम इस प्रकार हैं:

(i) **दर्शन-विभाग**—डॉ० रमाशंकर श्रीवास्तव, प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, दर्शन विभाग रांची विश्वविद्यालय, बिहार।

(ii) **हिन्दी-विभाग**—डॉ० विश्वनाथ मिश्र, पूर्व प्राचार्य, सनातन धर्म कॉलेज मुजफ्फरनगर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iii) **मनोविज्ञान विभाग**—डॉ० एन० सी० गांगुली, प्रोफेसर तथा अध्यक्ष मनोविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय ।

मानद–उपाधि

इस वर्ष विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती तथा पं० सत्यकाम विद्यालंकार को "विद्यामार्तण्ड" की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया।

६ फरवरी, १९८४,—को हिन्दी विभाग के तत्त्वावधान में विजिटिंग फेलो डॉ० विश्वनाथ मिश्र, भू० पू० प्राचार्य सनातन धर्म कालेज मुजफ्फरनगर का 'साहित्य की अपेक्षा' विषय पर सारगर्भित व्याख्यान हुआ। इसका संयोजन डॉ० अम्बिका प्रसाद वाजपेयी, अध्यक्ष हिन्दी विभाग ने किया।

११ फरवरी, १९८४,—को विश्वविद्यालय की सिंडीकेट की बैठक आर्य समाज हनुमान रोड, दिल्ली में सम्पन्न हुई।

१७–२० फरवरी, १९८४,—को मान्य कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा तथा डॉ० विजय शंकर अध्यक्ष वनस्पति विज्ञान ने विज्ञान– भवन में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की 'फर्स्ट कॉनफ्रेंस ऑफ दॉ एशियन फोरम ऑफ पार्लियामेन्ट एटिक्स ऑन पॉपुलेशन एण्ड डवलपमेन्ट' में भाग लिया।

२२ फरवरी, १९८४,—को डॉ० रमाशंकर श्रीवास्तव, प्रोफेसर और अध्यक्ष दर्शन विभाग, रांची वि. वि. बिहार का 'आधुनिक भारतीय दर्शन की मुख्य विशेषताऐं' विषय पर दर्शन विभाग के तत्त्वावधान में विद्वत्तापूर्ण भाषण हुआ। इसका संयोजन डॉ० जयदेव वेदालंकार, अध्यक्ष दर्शन विभाग ने किया।

२९ फरवरी, १९८४,—को मान्य कुलपति जी की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय परिसर में 'ऋषिबोधोत्सव का पर्व धूमधाम से मनाया गया। इसमें मुख्य अतिथि पं० सत्यकाम विद्यालंकार रहे। इस अवसर पर विद्यालय के ब्रह्मचारियों ने ऋषि दयानन्द के विषय में अपने संक्षिप्त भाषण दिए तथा डॉ० विनोदचन्द्र सिन्हा, प्रोफेसर तथा अध्यक्ष इतिहास विभाग, डॉ० रमाशंकर श्रीवास्तव, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष दर्शन विभाग, रांची वि. वि. बिहार, ने स्वामी दयानन्द के जीवन पर प्रकाश डालते हुये उनके द्वारा दिखाये गए मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। अन्त में मुख्य अतिथि पं० सत्यकाम विद्यालंकार तथा कुलपति जी ने अपने सारगर्भित भाषण में कहा कि–आज ऋषिके पावन पर्व पर हमें अपने कर्तव्य का बोध होना चाहिए।

८ मार्च, १९८४—को मान्य कुलपति जी की अध्यक्षता में वि. वि. के शिक्षक कक्ष में एक सभा का आयोजन हुआ, जिसमें उन्होंने यू० जी० सी० से आने वाली विजिटिंग कमेटी के विषय में अध्यापकों से विचार विमर्श किया और उनका मार्ग प्रदर्शन किया।

९ मार्च, १९८४—को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय द्वारा भेजी गयी छठी पञ्चवर्षीय योजना के सम्बन्ध में निरीक्षण करने तथा विश्वविद्यालय की प्रगति की अन्य सम्भावनाओं का पता लगाने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी का गुरुकुल में आगमन हुआ।

इस समिति के अध्यक्ष प्रो० रमारंजन मुखर्जी, कुलपति वर्द्धमान विश्वविद्यालय (प० बं०) सदस्य प्रो० आर० सी० गौड, इतिहास विभाग, अलीगढ़ विश्वविद्यालय, प्रो० एम० एल० रैना, पंजाब विश्वविद्यालय तथा सचिव श्री बी० आर० क्वाटरा, उप-सचिव विश्वविद्यालय अनुदान आयोग थे।

इस समिति ने गुरुकुल कांगड़ी के अध्यापकों, कर्मचारियों तथा विद्यार्थियों से उपयुक्त योजनाओं के विषय में बात की। तत्पश्चात् उन्होंने कन्या गुरुकुल देहरादून का भी निरीक्षण किया। उन्होंने कहा कि गुरुकुल अपनी मौलिक परम्पराओं को उजागर करे। गुरुकुल के अध्यापकगण वेदार्थ के लेखन में तथा प्रकाशन में संलग्न रह कर स्वामी श्रद्धानन्द जी के संकल्पों को पूरा करें तथा गुरुकुल के मिशन को अग्रसर करते-हुए देश-विदेश में गुरुकुल की कीर्ति फैलाएं।

१५ मार्च, १९८४—को वि० वि० के शिक्षक कक्ष में मनोविज्ञान विभाग के तत्त्वावधान में डॉ० एच० सी० गाँगुली. प्रो० तथा अध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग, दिल्ली का 'चेतना के परिवर्धित स्तर' विषय पर पं० सत्यकाम विद्यालंकार आचार्य गुरुकुल विभाग की अध्यक्षता में एक विद्वत्तापूर्ण भाषण हुआ। इसके संयोजक प्रो० ओमप्रकाश मिश्र, अध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग रहे।

१६ मार्च, १९८४—प्रात: १० बजे दर्शन विभाग के तत्त्वावधान में डॉ० रमाशंकर श्रीवास्तव प्रो० रांची विश्वविद्यालय, का 'पूर्णयोग श्री अरविन्द के संदर्भ में' विषय पर सारगभित भाषण हुआ। इसका संयोजन डॉ० जयदेव वेदालंकार ने किया।

१९ मार्च, १९८४—अपराह्न ३ बजे संघड विद्या सभा ट्रस्ट जयपुर के सौजन्य से 'मन्त्रोच्चारण प्रतियोगिता' का आयोजन किया गया। इसकी अध्यक्षता आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् 'महात्मा आर्य भिक्षु' ने की। इसी सभा में 'गोवर्धन ज्योति' पुस्तिका का भी विमोचन किया गया।

प्रतियोगिता में प्रथम स्थान गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर तथा द्वितीय स्थान कन्या गुरुकुल कनखल ने प्राप्त किया। दोनों को चलविजयोपहार तथा विशिष्ट पुरस्कार प्रदान किए गए।

अन्त में विशिष्ट वक्ताओं डॉ० जयदेव वेदालंकार, श्री ईश्वर भारद्वाज तथा डॉ० जबरसिंह सैंगर ने अपने संक्षिप्त भाषण में आचार्य गोवर्धन शास्त्री जी के जीवन से शिक्षा लेने का संकल्प दोहराया।

अध्यक्ष पद से बोलते हुए महात्मा आर्य भिक्षु ने कहा कि आचार्यों का परम कर्तव्य है कि वे बालकों में गुणों की वृद्धि तथा अवगुणों को दूर करने का तन-मन से प्रयास करें।

२२ मार्च, १९८४—को मनोविज्ञान विभाग के तत्त्वावधान में, मान्य कुलपति जी की अध्यक्षता में डॉ० एच० सी० गांगुली प्रोफेसर तथा अध्यक्ष मनोविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय का 'मानसिक स्वास्थ्य' विषय पर विद्वत्तापूर्ण भाषण हुआ। उन्होंने अपने शोधपूर्ण तथ्यों द्वारा मानसिक स्वास्थ्य के कारणों तथा उपायों पर प्रकाश डाला। इसका संयोजन प्रो० ओमप्रकाश मिश्र, अध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग ने किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३ मार्च, १९८४—को पं० सत्यकाम विद्यालंकार जी की अध्यक्षता में डॉ० विश्वनाथ मिश्र, भू० पू० प्राचार्य सनातन धर्म कालेज मुजफ्फरनगर का 'महर्षि दयानन्द और हिन्दी साहित्य' विषय पर व्याख्यान हुआ। इसका संयोजन डॉ० विष्णुदत्त 'राकेश' हिन्दी विभाग ने किया।

२३-२४ मार्च, १९८४—को प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र (उ० प्र० सरकार) गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में जिला स्तर के किसान मेला का आयोजन हुआ। जिसमें डॉ० विजय शंकर, अध्यक्ष वनस्पति विज्ञान विभाग के निर्देशन में गंगा समन्वित योजना तथा वनस्पति विज्ञान विभाग गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय द्वारा पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण विषयों पर एक प्रदर्शनी लगाई गई जिसका उद्घाटन श्री शैलेन्द्र सागर ने किया। इस प्रदर्शनी को सर्वोत्तम घोषित किया गया। गंगा समन्वित योजना के जूनियर रिसर्च फेलोज तथा अन्य कर्मचारियों ने प्रदर्शनी के आयोजन में सराहनीय कार्य किया।

२४ मार्च, १९८४—को विश्वविद्यालय की कार्य परिषद् की बैठक आर्य समाज हनुमान रोड दिल्ली सम्पन्न हुई।

१ अप्रैल से ३ अप्रैल, १९८४—को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में एसोसिएशन ऑफ अमेरिकन स्टेडीज का १८ वाँ वार्षिक सम्मेलन हुआ। इसकी अध्यक्षता डॉ० भूपेन कानूनगो, प्रोफेसर हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी तथा संयोजन प्रो० सदाशिव भगत, अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग गु० कां० वि० वि० ने किया। प्रसिद्ध मनीषी डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने इसका उद्घाटन करते हुए कहा कि पूर्व और पश्चिम सदा जुड़े रहेंगे। मान्य कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा ने अपने स्वागत भाषण में विदेशी विद्वानों को अपने देश में भारत का अध्ययन करने के लिए संगठन बनाने की प्रेरणा दी और कहा कि वे पूर्व और पश्चिम को एक दूसरे के समीप लाने का कार्य करें। इस सम्मेलन में देश विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों से लगभग १०० विद्वानों ने भाग लिया।

८ अप्रैल, १९८४—को इतिहास-विभाग में श्री एम० के० नारद की मौखिकी परीक्षा सम्पन्न हुई। इन्होंने "प्रतीहार वंश के अभिलेखों का सांस्कृतिक अध्ययन" विषय पर शोध प्रबन्ध लिखा है।

९ अप्रैल १९८४—को डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार की अध्यक्षता में वि० वि० के शिक्षक कक्ष में एक सभा का आयोजन किया गया। जिसमें मान्य कुलपति जी ने सभी अध्यापकों से विश्वविद्यालय की प्रगति के लिए एक जुट होकर उत्साहपूर्वक कार्य करने के लिए कहा तथा सभी विभागाध्यक्षों ने मान्य कुलपति तथा परिद्रष्टा महोदय को अपने-अपने विभाग की प्रगति से अवगत कराया।

१० से १५ अप्रैल १९८४—तक विश्वद्यालय के वार्षिकोत्सव के अवसर पर डॉ० जयदेव वेदालंकार के संयोजन में यजुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन हुआ। इसके ब्रह्मा आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार अध्यक्ष वेद-विभाग रहे। इसका विस्तृत विवरण दिया जा चुका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

११ अप्रैल, १९८४—को डॉ० विनोद चन्द्र सिन्हा, अध्यक्ष इतिहास विभाग की अध्यक्षता

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में इतिहास विभाग की शोध समिति की बैठक सम्पन्न हुई।

११ अप्रैल, १९८४—को डॉ० एल० पी० पाण्डेय, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग, हिमाचल विश्वविद्यालय, शिमला का विश्वविद्यालय में आगमन हुआ तथा उन्होंने संग्रहालय आदि देखा और गुरुकुल की प्रगति की सराहना की।

१२ अप्रैल, १९८४—को सिंडीकेट की विशेष बैठक विश्वविद्यालय के पुस्तकालय भवन में सम्पन्न हुई।

१२ अप्रैल, १९८४— को इतिहास-विभाग में कु० ऊषा भसीन की मौखिकी परीक्षा सम्पन्न हुई। इन्होंने "उत्तर भारत की शासन-संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया था।

१३ अप्रैल- १९८४—को विश्वविद्यालय को सीनेट की शिष्ट-परिषद् की बैठक पुस्तकालय-भवन में सम्पन्न हुई।

१३ अप्रैल, १९८४—को पुरातत्त्व संग्रहालय परिसर में विद्यालय-विभाग द्वारा एक विशेष प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। जिसका उद्घाटन विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने किया। इस प्रदर्शनी का विशेष आकर्षण पं. सत्यकाम विद्यालंकार, आचार्य गुरुकुल विभाग द्वारा बनाये वैदिक मन्त्रों के भाव–चित्र थे। श्री अग्रवाल (वी० एच० ई० एल०) के सहयोग से संग्रहालय की ओर से सिक्कों का भी विशेष कक्ष लगाया गया।

१३ अप्रैल, १९८४—को डॉ० सिन्हा, कुलपति हिमाचल विश्वविद्यालय तथा डॉ० आराम कुलपति गांधी ग्राम रुरल इंस्टीट्यूट मदुराई का विश्वविद्यालय में आगमन हुआ।

१४ अप्रैल से १६ अप्रैल १९८०—को डॉ० त्रिलोक चन्द्र, दर्शन विभाग (संयोजक प्रौढ़ शिक्षा) ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा सारनाथ में आयोजित अखिल भारतीय सामुदायिक शिक्षा सम्मेलन में भाग लिया और सामुदायिक शिक्षा पर अपना पत्र पढ़ा। वहाँ उन्हें श्री एम० एल० मेहता उपसचिव ने बताया कि गुरुकुल कांगड़ी को प्रौढ़ शिक्षा के ३० केन्द्र और दिए गये हैं। इस प्रकार गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के प्रौढ़ शिक्षा के सम्बन्ध में अब साठ केन्द्र हो गये हैं।

१६ अप्रैल, १९८४—से विज्ञान महाविद्यालय की परीक्षाएं डॉ० बी० डी० जोशी (परीक्षाध्यक्ष) तथा डॉ० टी० आर० सेठ एवं श्री एच० सी० ग्रोवर (सहायक परीक्षाध्यक्ष) के कुशल निर्देशन में शान्त एवं सुव्यवस्थित वातावरण में प्रारम्भ हुईं।

२६ अप्रैल, १९८४—सेकला महाविद्यालय एवं वेद महाविद्यालय की परीक्षाए प्रो० ओ० पी० मिश्र (परीक्षाध्यक्ष) तथा डॉ० विनोदचन्द्र सिन्हा, डॉ० जयदेव वेदालंकार तथा काश्मीर सिंह भिण्डर (सहायक परीक्षाध्यक्ष) के कुशल निर्देशन में विश्वविद्यालय भवन में वैदिक मन्त्रोच्चारण के साथ प्रारम्भ हुईं।

प्रस्तुतकर्ता—राकेश शास्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय की मेज से—

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में वर्ष १९८३ में आयी नई पुस्तकें :—

वैदिक साहित्य

१ वीरेन्द्र कुमार वर्मा	"ऋग्वेद प्रतिशाख्यम्"—	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी
२ दैवरात	"वेदार्थ कल्पलता" —	" " "
३ रामनाथ दीक्षित	"उह गानम् ऊहगानम्" —	" " "
४ हरिशंकर जोशी	"वैदिक विश्वदर्शन" —	" " "
५ वीरेन्द्र कुमार वर्मा	'ऋग्वेद प्रातिशाख्यम्"—	" " "
६ सूर्यकान्त	"वैदिक कोश" —	" " "
७ श्री नारायण शंकरानन्द	"उपनिषद् समुच्चय"—	" " "
८ डॉ० एस कुजूर	"वैदिक एवं धर्मशास्त्रीय साहित्य में नारी"—	वाराणसी वि. वि. प्रकाशन
९ रंगनाथ	"उपनिषदों की वाणी "—	मीनाक्षी प्रकाशन
१० सत्यप्रकाश शास्त्री	"ऋग्वेद संहिता" (अंग्रेजी अनुवाद)	वेद प्रतिष्ठान, नई दिल्ली
११ गया चरण त्रिपाठी	"वैदिक देवता उद्भव और विकास"	दिल्ली भारतीय विद्या प्रकाशन
१२ बद्रीप्रसाद पंचोली	"ऋग्वेद में गोतत्त्व"	अजमेर, अर्चना प्रकाशन
१३ दमोदर सातवेलेकर	"अथर्ववेद का प्रबोध भाष्य"	स्वाध्याय मण्डल
१४ दामोदर सातवलेकर	',ऋग्वेद का सुबोध भाष्य—	स्वाध्यायमण्डल, पारडी
१५ दामोदर सातवलेकर	"वेद का स्वयं शिक्षक" —	" "
१६ दामोदर सातवलेकर	"वैदिक व्याख्यान माला"	" "
१७ हरिदत्त शास्त्री, कृष्ण कुमार	"ऋक् सूक्त संग्रह"—	साहित्य भण्डार सुभाष बाजार, मेरठ
१८ राजेन्द्र कुमार त्रिवेदी	"उपनिषद् कालीन समाज एवं संस्कृति"—	दिल्ली, परिमल पब्लिकेशन
१९ शर्मा उमाशंकर 'ऋषि'	'हरिश्चन्द्रोपाख्यानम्'—	वाराणसी, चौखम्बा भवन
२० आचार्य प्रियव्रत	"वैदिक राजनीति में राज्य की भूमिका"—	मीनाक्षी प्रकाशन
२१ हेमलता सिंह	"ऋग्वेद के अग्नि सूक्तों की उपमाओं का अध्ययन,,—	अनुपम प्रकाशन
२२ योगेन्द्र पुरुषार्थी	"वेदों में योग-विद्या,,—	यौगिक शोध संस्थान (योगधाम) ज्वालापुर
२३	"सामवेद संहिता"—	आर्ष कन्या गुरुकुल, नरेला
२४ डॉ० निगम शर्मा	"ऋक्त् सूक्त मंजरी"—	बरेली स्टूडेन्ट स्टोर।

(क्रमशः)

प्रस्तुतकर्ता—जगदीश विद्यालङ्कार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

रजिस्टर्ड सं० एल० १२७७

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फार्म ४
(नियम ८ देखिये)

१—प्रकाशन स्थान—	गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
२—प्रकाशन अवधि—	मासिक
३—मुद्रक का नाम—	डॉ० जबरसिंह सेंगर (कुलसचिव)
क्या भारत का नागरिक है ?	भारतीय
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	
पता—	
४—प्रकाशक का नाम—	डॉ० जबरसिंह सेंगर (कुलसचिव)
क्या भारत का नागरिक है ?	भारतीय
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	
पता—	
५—सम्पादक का नाम—	रामप्रसाद वेदालङ्कार, आचार्य एवं उपकुलपति
क्या भारत का नागरिक है ?	भारतीय
(यदि विदेशी है तो मूल देश)	
पता—	गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
६—उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

मैं डॉ० जबरसिंह सेंगर एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

प्रकाशक के हस्ताक्षर

डॉ० जबरसिंह सेंगर
(कुलसचिव)

दिनांक..................

प्रकाशक : कुलसचिव गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
मुद्रक : शर्मा प्रिण्टर्स, ज्वालापुर वार्षिक मूल्य १२ रु० मात्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar